राजस्थान-भारती प्रकाशन

हरिरस

भक्ति-ज्ञानामृत भावार्थ-दीपिका

सम्पादक

दीपिकाकार

आ० बदरीप्रसाद साकरिया



सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट, बीकानेर

प्रकाशक

सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

संस्करण प्रथम

शक १८८२

सन् १९६०

मूल्य रु० ४.००

मुद्रक

(१) अग्रवाल प्रिंटिंग प्रेस, मथुरा
केवल २१५ पृष्ठ

(२) श्री साधना प्रेस, रतनगढ़ (राजस्थान)
शेष समस्त

जिणारी दृढ भक्ति, अमोल शिक्षा नै चरण-रज री
कृपा सू आस्तिक भावना अडिग रही
उणा
परम वदनीय परम पूज ८
मातु श्री चूनीबाई, पिता श्री फौजराजजी
और
अटल भक्ति नै धर्म-परायणा धर्मपत्नी
श्री रामप्यारी देवी
तथा
विद्या नै धर्मानुरागी, अजस्र प्रेरणा-स्रोत, परम मित्र
श्री रामयश गुप्त
री
पुण्य स्मृति मे

बदरीप्रसाद

तालिका

प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ मे बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मन्त्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से, साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंहजी बहादुर द्वारा सस्कृत, हिन्दी एव विशेषत राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वाङ्गीण विकास के लिये की गई थी।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानो एव भाषाशास्त्रियो का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमे प्रारम्भ से ही मिलता रहा है।

सस्था द्वारा विगत १६ वर्षों से बीकानेर में विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तिया चलाई जा रही हैं, जिनमें से निम्न प्रमुख है—

१ विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस सम्बन्ध मे विभिन्न स्रोतो से सस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दो का सकलन कर चुकी है। इसका सम्पादन आधुनिक कोशो के ढग पर, लवे समय से प्रारम्भ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं। कोश मे शब्द, व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाए दी गई हैं। यह एक अत्यन्त विशाल योजना है, जिसकी सन्तोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकता है। आशा है राजस्थान सरकार की ओर से, प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य मे इसका प्रकाशन प्रारम्भ करना सम्भव हो सकेगा।

२ विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश

राजस्थानी भाषा अपने विशाल शब्द भडार के साथ मुहावरो से भी समृद्ध है। अनुमानत पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग मे लाये जाते हैं। हमने लगभग दस हजार मुहावरो का, हिन्दी मे अर्थ और राजस्थानी मे उदाहरणों सहित प्रयोग देकर सम्पादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबन्ध किया जा रहा है। यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है।

यदि हम यह विशाल संग्रह साहित्य-जगत को दे सके तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी जगत के लिये भी एक गौरव की बात होगी।

३. आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का प्रकाशन

इसके अंतर्गत निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकीं हैं:—

१. कळायण, ऋतु काव्य। ले० श्री नानूराम संस्कर्ता।
२. आभै पटकी, प्रथम सामाजिक उपन्यास। ले० श्री श्रीलाल जोशी।
३. वरस गांठ, मौलिक कहानी संग्रह। ले० श्री मुरलीधर व्यास।

'राजस्थान-भारती' मे भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है, जिसमें भी राजस्थानी कवितायें. कहानियां और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं।

४. 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये गौरव की वस्तु है। गत १४ वर्षो से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। वहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एवं अन्य कठिनाइयों के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन संभव नहीं हो सका है। इसका भाग ५ अंक ३–४ 'डा० लुइजि पित्रो तैस्सितोरी विशेपांक' वहुत ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। यह अंक एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य सेवा का एक वहुमूल्य सचित्र कोश है। पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा हैं। इसका अंक १–२ राजस्थानी के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ का सचित्र और वृहत् विशेपांक है। अपने ढंग का यह एक ही प्रयत्न है।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के संवंध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन में भारत एवं विदेशों से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमें प्राप्त होती हैं। भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों में भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं। शोधकर्त्ताओं के लिये 'राजस्थान-भारती' अनिवार्यत: संग्रहणीय शोध-पत्रिका है। इसमें राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा० दशरथ शर्मा, श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचंद नाहटा की वृहत् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है।

५ राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसधान, सम्पादन एव प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि की प्राचीन, महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियो को सुरक्षित रखने एव सर्वसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एव शुद्ध रूप मे मुद्रित करवा कर उचित मूल्य मे वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। सस्कृत, हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रथो का अनुसधान और प्रकाशन सस्था के सदस्यो की ओर से निरतर होता रहा है, जिसका सक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६ पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई सस्करण प्रकाश मे लाये गये हैं और उनमे से लघुतम सस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अश 'राजस्थान-भारती' मे प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध सस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती मे प्रकाशित हुए हैं।

७. राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखा) की ७५ रचनाओ की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अक में प्रकाशित हुई है। उनका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक 'काव्य क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८ राजस्थान के जैन सस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबध राजस्थान-भारती मे प्रकाशित किया जा चुका है।

९. मारवाड क्षेत्र के ५०० लोकगीतो का सग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एव जैसलमेर क्षेत्र के सैंकडो लोकगीत घूमर के लोकगीत, बाल लोकगीत, लोरियाँ, और लगभग ७०० लोक कथाएँ सग्रहीत की गई हैं। राजस्थानी कहावतो के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत, पाबूजी के पवाडे और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' मे प्रकाशित किए गए हैं।

१० बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखो का विशाल सग्रह 'बीकानेर जैन लेख सग्रह' नामक वृहद् पुस्तक के रूप मे प्रकाशित हो चुका है।

११. जसवंत उद्योत, मुंहता नैणसी री ख्यात और अनोखो आन जैसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथों का सम्पादन एवं प्रकाशन हो चुका है।

१२. जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर उदयचन्द भंडारी की ४० रचनाओं का अनुसन्धान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के सम्बन्ध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।

१३. जैसलमेर के अप्रकाशित १०० शिलालेखों और 'भट्टि वंश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रंथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।

१४. बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसन्धान किया गया और ज्ञानसागर ग्रंथावली के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

१५. इसके अतिरिक्त संस्था द्वारा—

(१) डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य-सेवियों के निर्वाण-दिवस और जयन्तियां मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्य गोष्ठियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमें अनेकों महत्वपूर्ण निबंध, लेख, कविताएं और कहानियां आदि पढ़ी जाती हैं, जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार विमर्श के लिये गोष्ठियों तथा भाषणमालाओं आदि के भी समय-समय पर आयोजन किये जाते रहे हैं।

१६. बाहर से ख्याति प्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डा० कैलाशनाथ काटजू, राय श्रीकृष्णदास, डा० जी० रामचन्द्रम्, डा० सत्यप्रकाश, डा० डब्लू० एलेन, डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० तिबेरिओ-तिबेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षो से महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ आसन की स्थापना की गई है। दोनों वर्षों के आसन-अधिवेशनों के अभिभाषक क्रमशः राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड

विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम० ए०, बिसाऊ और प० श्रीलालजी मिश्र एम० ए०, हुडलोद थे।

इस प्रकार सस्था अपने १६ वर्षों के जीवनकाल मे, सस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरतर सेवा करती रही है। आर्थिक सकट से ग्रस्त इस सस्था के लिये यह सम्भव नही हो सका कि यह अपने कायक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती, फिर भी यदा कदा लडखडा कर गिरते पडते इसके कार्यकर्त्ताओ ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एव प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओ के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरतर चलता रहे। यह ठीक है कि सस्था के पास अपना निजी भवन नही है, न अच्छा सदभ पुस्तकालय है, और न कार्यालय को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं, परन्तु साधनो के अभाव मे भी सस्था के कायकर्त्ताओ ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश में आने पर सस्था के गौरव को निश्चित ही बढा सकने वाली होगी।

राजस्थानी साहित्य-भडार अत्यन्त विशाल है। अब तक इसका अत्यल्प अ श ही प्रकाश में आया है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय के अलभ्य एव अनर्घ रत्नों को प्रकाशित करके विद्वज्जनो और साहित्यिको के समक्ष प्रस्तुत करना एव उन्हे सुगमता से प्राप्त करना सस्था का लक्ष्य रहा है। हम अपनी इस लक्ष्य पूर्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढता के साथ अग्रसर हो रहे हैं।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तको के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था, परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना सम्भव नही हो सका। हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक सशोध एव सास्कृतिक कार्यक्रम मन्त्रालय (Ministry of scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओ के विकास की योजना के अतर्गत हमारे कायक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये १५०००) रु० इस मद मे राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल ३००००) तीस हजार की सहायता, राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशन

हेतु इस संस्था को इस वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है; जिससे इस वर्ष निम्नोक्त ३१ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है।

१. राजस्थानी व्याकरण—	श्री नरोतमदास स्वामी
२. राजस्थानी गद्य का विकास (शोध प्रबंध)	डा० शिवस्वरूप शर्मा अचल
३. अचलदास खीची री वचनिका—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
४. हमीरायण—	श्री भंवरलाल नाहटा
५. पद्मिनी चरित्र चौपई—	,, ,, ,,
६. दलपत विलास—	श्री रावत सारस्वत
७. डिंगल गीत—	,, ,, ,,
८. पंवार वंश दर्पण—	डा० दशरथ शर्मा
९. पृथ्वीराज राठोड़ ग्रंथावली—	श्री नरोतमदास स्वामी और श्री बदरीप्रसाद साकरिया
१०. हरिरस—	श्री बदरीप्रसाद साकरिया
११. पीरदान लालस ग्रंथावली—	श्री अगरचंद नाहटा
१२. महादेव पार्वती वेलि—	श्री रावत सारस्वत
१३. सीताराम चौपई—	श्री अगरचंद नाहटा
१४. जैन रासादि संग्रह—	श्री अगरचंद नाहटा और डा० हरिवल्लभ भायाणी
१५. सदयवत्स वीर प्रबंध—	प्रो० मंजुलाल मजूमदार
१६. जिनराजसूरि कृतिकुसुमांजलि—	श्री भंवरलाल नाहटा
१७. विनयचंद कृतिकुसुमांजलि—	,, ,, ,,
१८. कविवर धर्मवर्द्धन ग्रंथावली—	श्री अगरचंद नाहटा
१९. राजस्थान रा दूहा—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२०. वीर रस रा दूहा—	,, ,, ,,
२१. राजस्थान के नीति दोहे—	श्री मोहनलाल पुरोहित
२२. राजस्थानी व्रत कथाएं—	,, ,, ,,
२३. राजस्थानी प्रेम कथाएं—	,, ,, ,,
२४. चंदायन—	श्री रावत सारस्वत

२५. महुली—	श्री अगरचंद नहाटा और म विनय सागर
२६. जिनहर्ष ग्र थावली	श्री अगरचंद नाहटा
२७ राजस्थानी हस्त लिखित ग्र थो का विवरण	,, ,,
२८ दम्पत्ति विनोद	,, ,,
२९ हीयाली–राजस्थान का बुद्धिवर्धक साहित्य	,, ,,
३० समयसुन्दर रासत्रय	श्री भवरलाल नाहटा
३१ दुरसा आढा ग्र थावली	श्री बदरीप्रसाद साकरिया

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन सग्रह (सपा० डा० दशरथ शर्मा), ईशरदास ग्रथावली (सपा० बदरीप्रसाद साकरिया), रामरासो (प्रो० गोवर्द्धन शर्मा), राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचद नाहटा), नागदमण (सपा० बदरीप्रसाद साकरिया) मुहावरा कोश (मुरलीधर व्यास) आदि ग्रथो का सपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नही हो रहा है।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एव गुरुता को लक्ष्य मे रखते हुए अगले वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमे अवश्य प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त सपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रथो का प्रकाशन सभव हो सकेगा।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षा विकास सचिवालय के आभारी हैं, जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन-एड की रकम मजूर की।

राजस्थान के मुख्य मत्री माननीय मोहनलालजी सुखाडिया, जो सौभाग्य से शिक्षा मत्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एव पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त कराने मे पूरा-पूरा योगदान रहा है। अत हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं, जिन्होंने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्धन किया, जिससे हम इस वृहद् कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हो सके। सस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी।

इतने थोड़े समय में इतने महत्वपूर्ण ग्रन्थों का संपादन करके संस्था के प्रकाशन-कार्य में जो सराहनीय सहयोग दिया है, इसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादकों व लेखकों के अत्यन्त आभारी हैं।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व० पूर्णचन्द्र नाहर संग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन संग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थक्षेत्र अनुसंधान समिति जयपुर, ओरियंटल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, भांडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ बृहद् ज्ञान भण्डार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बंबई, आत्माराम जैन ज्ञानभंडार बड़ोदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशंकर देराश्री, पं० हरिदत्तजी गोविंद व्यास जैसलमेर आदि अनेक संस्थाओं और व्यक्तियों से हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रंथों का संपादन सम्भव हो सका है। अतएव हम इन सबके प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन श्रमसाध्य है एवं पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय में ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छतः स्खलनंक्वापि भवत्येव प्रमादतः, हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः।

आशा है विद्वद्वृन्द हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके साहित्य का रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावों द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकेंगे और पुनः मां भारती के चरण कमलों में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुनः उपस्थित होने का साहस बटोर सकेंगे।

निवेदक
लालचन्द कोठारी
प्रधान-मन्त्री
सादूल राजस्थानी-इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

बीकानेर,
मार्गशीर्ष शुक्ला १५
संवत् २०१७
दिसम्बर ३, १९६०

हरिरस का काव्य-सौन्दर्य

श्री ईसरदासजी राजस्थान के प्रमुख भक्तो में से एक हैं। इनकी अधिकाश रचनाओं में प्रभु का गुणगान किया गया है। हरिरस' इनका सर्वाधिक लोकप्रिय ग्रन्थ है। 'राजस्थान और गुजरात मे हजारो व्यक्ति आज भी इस रचना का दैनिक पाठ करते हैं। इसका मूल कारण 'हरिरस' का आध्यात्मिक महत्व है। कवि का अनन्य भक्ति भाव और भगवद्-स्वरूप देखकर ही 'ईसरा-परमेसरा' कथन सदियों से प्रचलित है। भक्ति काल में जिन कवियो ने मानव-चेतना को उद्बुद्ध कर उनकी आस्था और विश्वास को दृढ बनाया तथा सृष्टि के विभिन्न रूपो म अपने प्रभु के ही दर्शन किये उनमे ईसरदासजी का स्थान महत्व पूर्ण है।

यो तो 'हरिरस' कथा-विहीन एक मुक्तक रचना प्रतीत होती है, पर उसका सूक्ष्म अध्ययन करने म विदित होता है कि कवि ने उसका निर्माण निश्चय ही एक विशेष उद्देश्य को समक्ष रख कर क्रमबद्ध रूप मे किया है। चाहे ग्रन्थ के विभिन्न रूपों मे पाठान्तर हो चाहे उसकी हस्तलिखित और प्रकाशित प्रतियो के पद्यो में क्रम न हो, पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि कवि ने इसमे ३६० छद लिखे हैं जिसका उल्लेख उसने ग्रन्थ के अन्तिम दोहे मे किया है।

हरिरस' का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए कवि ने सर्व प्रथम तो ईश्वर के एक मात्र आधार होने का उल्लेख चमत्कारिक ढग से किया है। 'अन्तरिक्ष से विछुडने पर तो प्राणियों को यह धरती धारण करती है पर जब वे इस धरा से जाते हैं तब तो धरणीधर के अतिरिक्त उनका और कोई आश्रय नही होता—

आभ विछूटा मांणसां, है धर झल्लणहार।
धरणीधर ! धर छूटतां, असहां तू आधार॥

अतः संसार छोड़ने पर तो भगवान से ही काम पड़ेगा यह सोच कर कवि निश्चय कर लेता है कि वह भविष्य में उसी की आराधना करेगा --

नारायण ! हों तुझ नमों, इण कारण हरि ! अज्ज ।
जिण ही श्रो जग छंडणों, तिण दी तोसूं कज्ज ।।

इस निश्चय को लेकर अपने कर्म बन्धनों से मुक्त होने के लिए वह इस 'हरिरस' ग्रन्थ मे भगवान के पावन चरित्रों का वर्णन करता है--

माहरा करम मेटया माधव
कस हों कयिस तुहारा केसव
नाम तुहाळो हों घणनामी
सासो सास संभारिस सांमी ।

ग्रन्थ का प्रारम्भ मंगलाचरण से होता है । कवि ने सरस्वती और गणेश की वन्दना करते हुए उनसे ईश्वराधन के लिए सद्बुद्धि का वरदान मांगा है । इसके बाद वह अपने गुरु श्री पीताम्बरदासजी के चरणो मे वन्दना करता है । जिनकी कृपा से कवि को भागवत का परमानन्दकारी रहस्य ज्ञात हुआ--

लगां हों पहला लळे, पीतांबर गुरु पाय ।
भेद महारस भागवत पायो जेण पसाय ।।

जिस प्रकार तुलसी ने कलियुग के अत्याचारों से पीड़ित होकर राम के दरबार में 'विनय पत्रिका' प्रस्तुत की, उसी प्रकार ईसरदासजी ने भी अपने प्रभु से अटल भक्ति मांगते हुए अपने कर्मों के नाश के लिए 'हरिरस' मे भगवान के चरित्रों का वर्णन किया है । भगवान के जिस चरित्र का वर्णन करने मे वेद-उपनिषद् भी असमर्थ रहे और अन्त मे 'नेति नेति' कह कर अपनी असमर्थता प्रकट की, उस भगवान के चरित्रों का पार पाना कवि के लिए भी असंभव है । वह मानता है कि सारी धरती को पाटी बनाकर उस पर गणेशजी भगवान के चरित्रों को लिखें तो भी पार नहीं पाया जा

सकता—

पीठ धरण धर पाटलो, हर-उत लेखण हार।
तउ तोरा चरितां तणों परम न लब्भै पार ।।

इसी भाव को कबीर ने अपनी एक साखी में इस प्रकार व्यक्त किया है—

सात समद की मसि करौं, लेखनि सब बनराय।
धरती सब कागद करौं, हरि गुण लिख्या न जाय ।।

ईसरदासजी के कथन में यह विशेषता है कि उन्होंने देवताओं में 'शीघ्र-लिपि-विशारद' गणेशजी को 'लेखणहार' बनाकर उनकी भी असमर्थता दिखायी है।

यों तो कवि प्रधानतः सगुणोपासक है पर उसने तुलसी जैसी समन्वयात्मक दृष्टि अपनाकर निर्गुण ब्रह्म का भी वर्णन किया है। भगवान अनन्त पराक्रम वाले हैं। उनका न आदि है न अंत। उनकी न कोई रूपरेखा है न शरीर और वेश—

अनत पराक्रम तू ज अनत
नहीं तुझ आद नहीं तुझ अंत
नहीं तुझ रूप नहीं तुझ रेख
नहीं तुझ वप्प नहीं तुझ वेस।

श्वेताश्वेतरोपनिषद् (३/१६) में कहा गया है कि परब्रह्म परमात्मा सब इन्द्रियों से रहित होते हुये भी सब इन्द्रियों के विषयों को जानते हैं—

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता
पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति वेद्य न च तस्यास्ति वेत्ता
तमाहुरग्र्य पुरुषं महान्तम् ।।

इसी को ईसरदासजी ने यों कहा है—

ग्रहे विण पांण अपाय गवन्न
अलेखत रूप सोहो अनपन्न

मुनेस महा चित अंतर मंझ
प्रचंड महाबळ तेज-प्रपुंज ।

भक्त-प्रवर ईसरदासजी ने प्रधान रूप मे ईश्वर के सगुण रूप का ही वर्णन किया है पर किसी रूप या अवतार विशेष के प्रति उनका आग्रह नहीं है। उन्होने भगवान के सभी अवतारों के चरित्रों का गुणगान किया है। मध्ययुग के वातावरण में राम और कृष्ण की भक्ति ही मुख्य रूप से प्रचलित थी। अतः स्वाभाविक है कि ईसरदासजी ने भी राम और कृष्ण के अवतारो की महिमा का वर्णन बार बार किया है-

नमो रण रांमण मारण रांम
नमो किय सिद्ध वसीकरण कांम
नमो कन्ह रूप निकंदन कंस
नमो व्रजराज नमो जदुवंस ।

कवि ने भगवान के भक्त-वत्सल रूप पर ही अधिक जोर दिया है।

भक्त के लिए नाम-स्मरण भक्ति-प्राप्ति का एक बहुत बडा साधन है। 'राम का नाम लेने से सब प्रकार के भय मिट जाते हैं और असंभव कार्य भी संभव हो जाता है। इससे वैकुण्ठ प्राप्ति सरल हो जाती है और यम-यातना से छुटकारा मिल जाता है-

प्रगट नांम परताप, वास वैकुंठ वसायो
प्रगट नांम परताप, दूत जम त्रास दिखायो
प्रगट नांम परताप, छड मागै चौरासी
प्रगट नांम परताप, उरे नव रहै उदासी
रांम रो नांम प्राणी रटै, तासूं जळ पाथर तरै
धर ध्यांन ईसरा सक धर, ग्रंजूं रांम मुख उच्चरै ।

मनुष्य नौ मास गर्भ में अनेक प्रकार के कष्ट सहकर जब जन्म लेता है तो वह ईश्वर को भूल जाता है। ज्यों ज्यों वह बडा होता है

त्यों त्यों उसकी सांसारिक आसक्ति बढती जाती है। गृहस्थी के जंजाल मे फंसकर वह परम स्वरूप को विस्मृत कर देता है। यदि अब भी वह भगवान का ध्यान करले और भगवान का नाम ले तो अच्छा है–

माता उदर नव मास कवत ऊर्ध्व सिर रहियो।
तद पायो नर तन, सकटा पूरण सहियो ॥
पसू जेम रहि पेट, सोल मळ मूत्र सु लायो।
भज्यो नहीं भगवान गाढ सुख मूळ गमायो ॥
जगदीस भजन जाण्यो नहीं, धायो घर धधो धरै।
धर ध्यान ईसरा सक धर, अजौं राम मुख ऊचरै ॥

मानव-देह पाकर उसकी सार्थकता कवि इसी मे मानता है कि सब अग भगवान की सेवा में प्रतिपल निरत रहें। इसीलिए वह भगवान को वन्दन करने में मस्तक की, गुण श्रवण करने मे कानों की, भगवान के दर्शन करने में नेत्रों की, गुण गान मे वाणी की और भगवान के आगे नाचने मे चरणों की पवित्रता मानता है–

मस्तक पवित्र करिस मधुसूदन
वदै चरण तूझ जगवदन
स्रवण निपाप करिस हम सांमी
गुण तुझ कथा सुणै घणनामी।
नयण निपाप करिस नारायण
पेख रूप तुझ भक्त परायण
रसणा पवित्र करिस हम राघव
भणै तूझ गुण तारण-भव-सव।
चरण पवित्र हौं करिस चत्रभुज
त्रिगुणनाथ नाचो आगळ तुझ

जीव को भगवान की ओर उन्मुख करने के लिए उसे ससार

की नश्वरता का ज्ञान होना आवश्यक है। कवि कहता है कि संसार का संहार करने के लिए काल तैयार खड़ा है अतः निरन्तर भगवान का स्मरण करते रहना चाहिए:—

नर ! हर वीसरजै नहीं, आतम मूढ अजांण।
काळ सबळ जग काटवा, कस ऊभो केवांण ।।

'हरिरस' भक्ति प्रधान ग्रन्थ है पर कवि ने उसमें कर्मों के सम्बन्ध में भी अपने विचार प्रकट किये हैं। आदि प्रपंच की ओर देखते हुए उसे संशय होता है कि भगवान ने प्रथम जीवों की रचना की अथवा कर्मों की :—

आद तणो जोतां अरथ, माजै मूझ न भ्रम्म ।
पहला जीव परट्ठिया, किया कि पहला क्रम्म ।।

उसे यह तो निश्चय है कि आदि में समस्त प्राणी भगवान से ही उत्पन्न हुए पर उसके मन में शंका तो इस बात की है कि ईश्वर ने समस्त प्राणियों के पीछे पाप-पुण्य का बखेड़ा क्यों लगाया ? आदि में जब जीवों के कर्म शेष नहीं थे तो इनको उत्तम, मध्यम और अधम किस लिए बनाया ? इस प्रकार एक गहरी शंका उठाकर अंत में कवि अपनी आस्था का अनुसरण करते हुए मौन हो जाता है और कह देता है कि कर्मों की गति के विषय में मेरा प्रश्न करना गँवारपन है:—

क्रमगत पूछां तो कना, गोविंद हों गेमार ।
आड वसतो डेहरी, पुणै समंदां पार ।।

ईसरदासजी की वाणी हरि-गुण-गान करते नहीं थकती। कवि के लिए तो राम ही माता, पिता, गुरु, सखा, बन्धु आदि हैं:—

रांम मात पित महन गुरु, रांम सखा सुखदात ।
रांम संबंधी बांधवा, रांम सहोदर भ्रात ।।

शान्त रस का वर्णन करते समय भी कवि अपने जातीय

मस्कारों को विस्मृत न कर सका और अपने इष्ट की वन्दना इस प्रकार ओजस्वी वाणी में करने लगा —

नमो मुर मद्द मरद्दण मल्ल
सखासुर काळ बकासुर सल्ल
नमो कंस केसि विधूंसण कन्न
रुकम्मणि प्राण पुरप्पल रतन्न ।

इसी प्रकार रामावतार का वर्णन करते हुए कवि ने राम द्वारा शिव धनुष भंग और परशुराम के आने का वर्णन ओजस्वी व रौद्र रूप में किया है —

किधौ रव घोर महेस कोदंड ।
सबै तिरलोक डरपा ब्रह्मंड
आयौ रिख कोप चवंत अंगार
तज्यो बळ चाप हुओ बुज त्यार ।

'हरिरस' भक्त ईसरदासजी के निश्छल हृदय की सहज अभिव्यक्ति है । अपने प्रभु से क्या दुराव और क्या छिपाव ? इसीलिए यह रचना इतनी मार्मिक है । कवि ने एक ओर तो सगुण-निर्गुण में समन्वय करते हुए 'सर्वदेव नमस्कार केशव प्रति गच्छति' के अनुसार एकदेववाद का आदर्श उपस्थित किया है तथा दूसरी ओर कर्म,ज्ञान और भक्ति तीनों में तुलसी की तरह सामञ्जस्य करते हुए अन्त में भक्ति का अनुसरण किया है । इसलिए वह हरि और 'हरिरस' काव्य को एक मानता है और कहता है कि इस काव्य के पढने वाले दुःखों से मुक्त होकर सद्गति को प्राप्त होंगे ।

कवि का भावपक्ष जितना प्रौढ है, उसका कलापक्ष भी उतना ही उच्च कोटि का है । अलंकारों का उसने स्वाभाविक प्रयोग किया है । अनुप्रास और वयण सगाई तो अनेक स्थलों पर मिलते हैं.—

अनुप्रास

कुओ वर व्याव वुछाव विसेस
धावँ जहँ देव दिनेस धनेस
कुबुद्धि किकेइ कुमंत्र किधेव
सिया दन रांम अनंत सिधेव

वयण सगाई

पलक निमेख न पांतरो, दाखो दीनदयाळ ।
धरणीधर हिरदै धरो, गुण गावो गोपाळ ।

'हरिरस' में दोहा, गाथा, विअखरी, मोतीदाम और छप्पय इन पाँच छन्दों का प्रयोग किया गया है । ग्रंथ की भाषा साहित्यिक डिंगल है । कवि का भाषा पर पूर्ण अधिकार है । रचना में कई अरबी-फारसी के भी शब्द आ गये हैं, जैसे—
नूर, दिदार, साहब, गरीबनिवाज, आलम, दरवेश आदि ।

यद्यपि ईसरदासजी के और भी कई ग्रन्थ हैं। पर यदि वे केवल 'हरिरस'की ही रचना करते तो भी डिंगल के भक्त कवियों मे उनका स्थान बहुत ऊँचा होता । मध्ययुग के भक्तो और सन्तों ने अपनी वाणी के लिए भगवान को आधार बनाया है । इसीलिए उनका काव्य अमर है । काल के सहस्र दण्ड-प्रहार भी उसका कुछ नहीं विगाड़ सकते । आज हम जिस विश्व-मानवता की चर्चा करते हैं उसका निर्माण तभी संभव होगा जब हम मध्ययुग के इन भक्तों और सन्तों की आस्था और दृढ विश्वास को अपनायेगे और प्राणी मात्र में ईश्वर के दर्शन करते हुए उसके कष्ट-निवारण के लिए सच्चे हृदय से प्रयत्नशील होंगे ।

चन्द्रदान चारण एम.ए., साहित्यरत्न
प्रिंसिपल, भारतीय विद्या मन्दिर
बीकानेर

॥ ॐ शिव ॥

भूमिका

भारतवर्ष मे भक्तों और कवियों का आसन बहुत ऊंचा, महत्वपूर्ण और अद्वितीय माना जाता रहा है। उनकी सत्यनिष्ठा, निर्भयता और ज्ञान परायणता के आगे बड़े-बड़े राजा-महाराजा, बुद्धिमान् और शूरवीर नत-मस्तक रहे हैं। उनकी सूझ-बूझ, प्रतिभा, मेधा और कल्पना-शक्ति असाधारण होती है। राजस्थान मे तो प्रसिद्ध है कि— 'जठै न पूगै रवि, उठै पूगै कवि' जहा रवि का प्रकाश नहीं पहुच सकता कवि ऐसी सृष्टि को भी अपनी अद्भुत कल्पनाओं मे खडी कर देता है। यह कोरी अतिशयोक्ति नहीं है। लोक, अलोक और परलोक की कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जो उनकी कल्पनाशक्ति के बाहर रह गई हो और जिस पर उन्होंने अपनी लेखनी नहीं उठाई हो। निराकार पर-ब्रह्म के साकार रूप, ज्ञानी और भक्त-कवियों की विज्ञान और तर्कमयी कल्पनाओं ही की तो देन है। यही नहीं उन्होंने उसे साकार बनने के लिये विवश भी कर दिया। वाणी की अद्भुत शक्ति का प्रभाव बड़ा ही चमत्कारी होता है। इसीलिये तो कवि, कवि ही नहीं है, वह चतुर्मुख ब्रह्मा है, वह उन सृष्टियों का सूर्य है जो इस सूर्य की पहुच के बाहर है और जहां कभी अंधेरा नहीं होता।

कवियों का आभार सभी देशों ने माना है, पर हमारे यहां उनका महत्व अद्वितीय है। भक्त-कवियों की तो बात ही निराली

है। देश की संस्कृति का मूलाधार भक्त और कवि ही हैं। ऐसे भक्त-कवि हमारी सभी जातियों और सभी सम्प्रदायों में होते आ रहे हैं। ऊँच और नीच, शिक्षित और अशिक्षित एवं स्त्री और पुरुष सभी वर्गों के भक्त-कवियों ने हमारी संस्कृति को आदर्श और परमोज्वल बनाये रखा है। इन सभी प्रकार के वर्गों में हमारी चारण जाति की एक अलग विशेषता है, जिसका जातिगत महत्व साहित्य के सभी क्षेत्रों में प्रायः सर्वत्र देखने को मिलता है। वीर-रस के काव्य-निर्माण में तो यह जाति जगत् प्रसिद्ध ही है; पर शान्तरस (भक्ति और ज्ञान) के साहित्य निर्माण में भी इस जाति की देन कम नहीं है। राजस्थान को तो ऐसे अनेकों भक्त-कवि इस जाति ने दिये हैं। अनेक भक्ति-ग्रन्थों के रचयिता भक्त-शिरोमणि ईसरदासजी भी इसी जाति के एक अमूल्य प्रकाशमान् रत्न हैं।

भक्तवर ईसरदास : व्यक्तित्व और कृतित्व

हिन्दी-क्षेत्र में जो स्थान राम-भक्त गोस्वामी तुलसीदास और कृष्ण-भक्त सूरदास का है, वही स्थान राजस्थान, गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ, सिंध, धाट और थरपाकर में भक्तवर ईसरदास का है। जिस प्रकार तुलसी को दास्य-भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान् श्रीराम ने और सूर को कीर्तन-भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान् श्रीकृष्ण ने साक्षात् होकर इनके हृदय-मंदिर और हृदय चक्षुओं को पावन और तृप्त किया था; उसी प्रकार भक्त ईसर को भी उसकी दास्य-भक्ति से प्रसन्न होकर द्वारका में श्री रणछोड़राय ने भगवती रुक्मिणीजी के साथ, हरिरस सुनाकर अर्पण करने पर, प्रगट होकर

दर्शन दिये थे[१]। प्रसिद्ध है कि इनकी अतुल भक्ति के प्रभाव से भगवान् रणछोडराय इनके अरस परस (वशीभूत) हो गये थे, जिससे इन्होंने कई अलौकिक काम दीन दुखियों के दुख निवारणार्थ कर दिखाये थे[२]। इसीसे इनका विरुद <u>'ईसरा-परमेसरा'</u> (ईसरदास परमेश्वर स्वरूप है) प्रसिद्ध हुआ। इतना गौरवपूर्ण विरुद

---

(१) हरिरस को द्वारका जाकर श्री रणछोडराय को सुनाने की बात के सबध मे स्व० श्री रामदेवजी चोखानी ने द्वारका के अपने पडे से पत्र व्यवहार किया था जिसके विषय मे श्री चोखानीजी कलकत्ते मे दिनाक १५-४-५८ के अपने पत्र मे प्रस्तुत हरिरस के प्रकाशन की चर्चा करते हुए लिखते हैं– "हरिरस" एक बडे गौरव की वस्तु है अत उसका पुन प्रकाशित होना अत्यावश्यक है मैंने हाल मे ही सभा (काशी नागरी प्रचारिणी सभा) को इस धन का उपयोग करने के लिये लिखा था।

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि मैंने कुछ समय पहले श्री द्वारकापुरी के अपने पण्डाजी से महात्मा ईसरदासजी के द्वारका जाने के विषय मे पूछा था जिसका उल्लेख राजस्थान रिसर्च सोसाइटी द्वारा प्रकाशित ग्रथ मे है। आपने मुझे जो पत्र भेजा है उसमे स्पष्ट उल्लेख है कि मन्दिर के दफ्तर मे भी यह बात दर्ज है कि हमारे महात्माजी वहा गये थे और अपना 'हरिरस' ग्रन्थ भगवान को सुनाया था जिसका समय भी उन्होंने लिखा है।"

(२) ईसरदासजी के चमत्कारो की कई दन्त-कथाए प्रचलित हैं,

आज तक किसी भी भक्त-कवि को प्राप्त नहीं हो सका है।

भक्तवर ईसरदास का जन्म मारवाड़ देश के मालाणी परगने के भादरेस गांव में वि० सं० १५९५[3] चैत्र सुदी ९ को रोहड़िया शाखा के चारण कुल में हुआ था[4]। इनके पिता का नाम

उनमें से कुछ के नाम इस प्रकार है—

१. बादशाह का चारणों के घोड़ों के बिक्री-कर के मामले में ईसरदासजी की जमानत नही चुकने से उन्हें कैद करना, उनके पुत्र को आंळ मे रखना, उसे मुसलमान बनाने की तैयारी करना, चांद नही उगना और झाला रायसिंह द्वारा कर की रकम जमा करवा देना।

२. सर्प-दंशित करण सरवैये को जीवित करना।

३. वेणू नदी मे डूबकर मरे हुए सांगा गौड को जीवित करना।

४. खारी जमीन मे मीठे पानी का कुंआ खुदवाना।

५. कंडो के खोपरे और खोपरो के कडे बना देना इत्यादि।

(३) कई विद्वान ईसरदासजी का जन्म सं० १५१५ मानते है, पर ऐतिहासिक दृष्टि से सर्वमान्य सं० १५९५ ही सिद्ध हुआ है।

(४) खेड़ (खेड़ पाटण । क्षीरपुर) के राव धूहड और उसके पुत्र रायपाल ने जैसलमेर के चद भाटी को बलात् रोक कर वि०सं० १२६८ माघ शु० ८ को अपना पोलपात बना लिया। बलात् रोक रखने को मारवाडी भाषा मे 'रोहड़णो' कहा जाता है। रोहड कर चारण बना लिया गया, इससे चद भाटी और उसकी संतान 'रोहड़िया-चारण' कहलाई।

—किशोरसिंह बार्हस्पत्य, हरिरस, जीवन चरित्र पृ० ४

सूजोजी[५] और माता का नाम अमरावाई था। ईसरदास की बाल्यावस्था मे ही इनके माता-पिता की मृत्यु हो गई थी। तब इनकी शिक्षा-दीक्षा और लालन पालन का भार ईसरदासजी के चाचा आसोजी के हाथों मे आया। आसोजी ने इन्हें पुत्रवत् प्यार के साथ लिखा-पढा कर अपने ही समान विद्वान् और कवि बना दिया। आसोजी जहां भी राज-दरबारों में जाते, ईसरदासजी को साथ में ले जाते और वहा अपने साथ उनकी कविताओं का रसास्वादन भी राजा-महाराजा और सरदारों को कराते रहते थे। वीररस के काव्य मे इस प्रकार ईसरदासजी की अच्छी ख्याति होने लग गई थी।

आसोजी की द्वारका जाते समय गुजरात और सौराष्ट्र की यात्रा मे ईसरदासजी भी साथ मे थे। जब वे जामनगर पहुँचे तो रावल जाम ने इन्हे निमंत्रित करके अपने दरबार मे इनका बडा सम्मान किया। इन्होंने भी अपनी काव्यरस धारा से रावल को मुग्ध कर दिया। ईसरदासजी की कविता सुनकर तो रावल अत्यन्त प्रसन्न हुए। कुछ दिन वहा ठहरने के बाद जब वे द्वारका रवाना होने लगे तो जाम ने इनसे प्रतिज्ञा करवाई कि द्वारकाजी से लौट कर वे पुन यहां आयेंगे।

---

(५) ईसरदासजी के पिता का नाम सूरोजी भी कहा जाता है—

ईसाणद ऊगाह, चवए घर चारण तणें
प्रिथवी जस पूगाह, सोरम रूपे 'सूरजत'

—भक्त माडणजी

हैं। 'हालां-झालां रा कुंडळिया' में वीरों की चेतना को उत्तेजित करने वाला ऐसा मार्मिक और सैद्धान्तिक वर्णन है जो अन्य कवियों में बहुत कम पाया जाता है। इधर इसके विपरीत इनके शान्तरस के ग्रन्थ तो साहित्य की अमूल्य निधि हैं, जो लगभग डेढ़ दर्जन के हैं।

कल्पनाएं की हैं, पर उनमें से किसी की भी कल्पना अभी तक सर्वमान्य नहीं हो सकी है। इस शब्द संज्ञक साहित्य के महत्व को देखकर इस शब्द की जितनी व्याख्याएं और कल्पनाएं आज तक की गईं हैं, उतनी उसके साम्य पिंगल शब्द पर कदाचित् ही की गई होगी। यह आकर्षण और चमत्कार 'डिंगल' शब्द का है अथवा इस नामधारी गौरवपूर्ण और प्राणदायी साहित्य का ? विचारणीय तथ्य यही है।

डिंगल भाषा का साहित्य सभी विषयों और रसों मे लिखा हुआ विपुल प्रमाण में प्राप्त है। वीररस और शान्त रस के तो भंडार भरे पड़े हैं; परन्तु डिंगल नाम के अनुरूप इस साहित्य का प्रधान रस नव-जीवन संचार कराने वाला वीररस ही माना गया है। डिंगल साहित्य की रचना का समय और कारण जिससे कि उसका नाम डिंगल रखा गया, वह युद्ध काल है जिसमें वीररस के काव्य की नितान्त आवश्यकता समझी गई थी। रण-वाद्य और वीरों की हुंकार के बीच कायरो में प्राण फूंक कर उन्हें वीर योद्धा बनाना; वीरगति को प्राप्त कर सुयश और स्वर्ग प्राप्ति का लाभ प्राप्त कराना; वीरों का उत्साह मंद नहीं हो- इन सभी बातों के लिये रणांगण में शस्त्रास्त्रों के

इनमे 'हरिरस' तो विषय और भाषा की दृष्टि से एक जन-काव्य की भांति अत्यधिक ख्याति प्राप्त किया हुआ भक्तजनों का अति प्रिय और पूजनीय ग्रन्थ है।

ईसरदासजी द्वारा रचे हुए ग्रन्थों की सूची, जिनका अद्यावधि पता लग सका है, इस प्रकार है—

१- हरिरस　　　　　　　　२- छोटो हरिरस

चलते समय वीरो को प्रोत्साहन देने,शूरवीरो का जोश और रक्त ठंडा न होने देने और शत्रु पर विजय प्राप्त करने के लिये अपने-अपने पक्ष के कविगणों को अधिकाधिक उच्च स्वर से वीरो की प्रशस्ति के काव्य सुनाते रहने के लिये युद्धरत वीरो की ओर से माग की जाती थी कि "कविराजजी ! थांरा कायर-गीतां री सुर धीमो पडणं सूं सीग रो जोस धीमो पड रयो है, दीर्घ [redacted] माथै चढनै डींगो राग सूं थारी जोसीली कविता सुणावो जिणसूं वीरा रो लोही ऊफणनै उण घर री वातां करै। हां, इणीज भांत होवा दो।"

डींगा घोरा डींगा मारग, डींगा लोग लुगाई
डींगी थारा डींगी बाता, डींगी साख सगाई।
डींगा देहा डींगा वेहा, लखै भीणी कामणी
डींग घघर डींगी गल्लां, लिहरे पळकी दामणी।

(एक राजस्थानी मौखिक बात से)

डींगो (डीघो, डीघो) शब्द के महत्व और व्यापक अर्थ पर विचार करने के लिये राजस्थानी की एक वात का यह प्रंश डींगी (=१ दीर्घ, २ लंबी, ३ ऊंची) शब्द से गल (=१ गला, २ स्वर, ३ बात) का योग पाकर– डींगो+गल > डींग+गल > डींग्+गल > डींगल > डींगळ >

३- देवियांण[१०] ४- गुण रास कील।[११]

५- गुण आगम ६- गुण वैराट

डिगळ क्रमशः योगरूढ रूप मे हमारे सामने आया । डींगी गल का बार बार उच्चारण करते रहने से निश्चय ही डींगल वा डिंगल शब्द ही श्रुतिगोचर होगा । और तब अपने आप डींगी और गल के योग से ही व्युत्पन्न होने की धारणा का भी निश्चय हो जायगा। व्युत्पत्ति के संबंध मे विचार करते समय व्युत्पत्ति काल के वातावरण और उसके कारणों पर प्रथम विचार करने की आवश्यकता है। अतः डींगी और गल–इन दोनों शब्दों के देश कालानुसार लोक प्रसिद्ध अर्थों, वातावरण और कारणो इत्यादि बातों पर विचार करने से यह स्वतः निश्चय हो जाता है कि इन्ही दोनों शब्दो के योग से इस महत्वपूर्ण एवं मुखरित लोक-शब्द का आविर्भाव हुआ है।

१०–'देवियांण' ग्रन्थ के देवायण, देव्यायण, देव्यांण, और डींगाळ पुराण नाम भी लिखे मिलते हैं। शुद्ध नाम देव्यायण है, पर अधिक प्रसिद्ध नाम देवियांण ही है। हमारे पास एक पुस्तक सूची में 'दीवांण रूपग, बारठ ईसरदास रो कहियो' लिखा हुआ है, पर वह पुस्तक संग्रह मे प्राप्त नहीं हो सकी । इससे अनुमान है कि वह 'देवियांण रूपग' या 'देवाण रूपग' होगा।पर उसी सूची में 'देवियाण' भी लिखा हुआ है और वह संग्रह मे प्राप्त है। 'दीवांण रूपग' से तात्पर्य मेवाड के महाराणाओं संबंधी काव्य से समझा जाता है, जिसकी संभावना कम मालूम होती है।

११– 'गुण रास कैलास' नाम भी लिखा मिलता है।

७ गुण निंदा स्तुति — ८- गुण भगवत हंस

९ गुण बाळ लीला — १०- गुण सभापर्व

११- गुरड पुराण — १२- ग्रावण

१३- दाण लीला — १४- सामळा रा दूहा

१५- वीस-दुवाळो सृष्टि उत्पत्ति रो गीत

१६- सालिया — १७- भजन (पद और वाणियां)

१८- हालां-भाला रा कुंडळिया

१९- गीत छंद (भक्ति और वीररस दोनों के अनेकों गीत)[१२]

१२– डा० हीरालाल माहेश्वरी ने 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' नामक अपने शोध ग्रन्थ में गुण छमा प्रब, ध्यान तथा रासलीला नाम के तीन ग्रन्थ और ईसरदासजी के होना बतलाया है और इनकी सूचना इन्हें 'सेठ सूरजमल जालान पुस्तकालय, कलकत्ता के गुटके नं० २० और अप्रकाशित काव्य संग्रह जिल्द ५ से प्राप्त हुई है। जालान पुस्तकालय के एक गुटके में, जिसमें भक्त पीरदान लालस के हाथ से लिखी हुई अपनी रचनाओं के साथ ईसरदासजी की भी लगभग सभी रचनायें अपने हाथ से लिखकर उसमें इन्होंने संकलित की हैं। इसी गुटके में पीरदान लालस के पुत्र हरिदास का रचित 'छमा प्रब' भी लिखा हुआ है। डा० माहेश्वरी दृष्ट गुटका यदि इस गुटके से भिन्न है तब तो अलग बात है और नहीं तो 'छमा प्रब' ईसरदासजी का नहीं है, हरिदास लालस का है। ईसरदासजी का गुण सभापर्व है ही।

'हालां-झालां रा कुण्डळिया' और गीतों में से अनेक गीत वीर-रसात्मक व्यक्ति-परक हैं, जिनका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। शेष सभी रचनाएं भक्ति और ज्ञान-परक शान्त रसात्मक हैं। विविध अवतारो को एक ही रूप में मान कर उनके विविध चरित्रों और लीलाओं का वर्णन, महिमा और स्तुति आदि अनेक विषयों से समलंकृत ये ग्रन्थ हैं। सरलता की दृष्टि से एक हरिरस को छोड़-कर ये सभी रचनाएँ संत-वाणियो के उतनी समीप तो नहीं हैं; परन्तु वीर रसात्मक काव्य ग्रथों से बहुत सरल हैं।

उपरोक्त काव्यो में हरिरस, हालां झालां रा कुण्डळिया और देवियांण अधिक प्रसिद्धि प्राप्त हैं और प्रकाशित हैं। हरिरस के तो हिंदी और गुजराती में मूल और सटीक रूपों मे छोटे मोटे अनेकों संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं[13]। छोटी रचनाओं में छोटो हरिरस,

---

१३- हरिरस के प्रकाशित संस्करण इस प्रकार है—

(१) श्री पिंगळशी पाताभाई भावनगर (सौराष्ट्र)। प्रथमावृत्ति सन् १९१३ मे। द्वितीयावृत्ति सन् १९२४ मे छंद १८९. तीसरी आवृत्ति भी प्रकाशित हो गई सुना है।

(२) श्री शंकरदान जेठीभाई देथा, लींबडी (सौराष्ट्र)। इन्होंने ६ आवृत्तियें प्रकाशित की हैं। पहली आवृत्ति सन् १९२८ मे।
इन्होंने देवियांण के भी दो संस्करण प्रकाशित कर दिये हैं।

(३) श्री पीताम्बरजी अर्जुनजी बारडे, मिट्ठी (थर पारकर) देवनागरी लिपि का प्रथम संस्करण। छंद ३६१, सन्

दांणलीला सामळा रा दूहा और वोस-दुमाळो गीत आदि भी प्रकाशित हैं[१४]।

१९३२ मे मुद्रित। लींबडी के गुजराती हरिरस का हिन्दी रूपान्तर।
प्रकाशक- सेठ मथुरादास पुरुषोत्तमदास कचरानी, मुम्बासा (एफ्रीका)

(४) श्री मानदान बारठ, नगरी (राजस्थान)
छंद ३६१ सं० १९९४ मे प्रकाशित। अंत में छोटा हरिरस भी प्रकाशित है।

(५) स्व० श्री किशोरसिंह बार्हस्पत्य, पटियाला
छंद ३६१ राजस्थान रिसर्च सोसाइटी, कलकत्ता द्वारा सं० १९९५ मे प्रकाशित।

(६) माई श्री सोनलबाई, मढडा (सोराष्ट्र)
चारण हित वर्धक सभा, भावनगर से प्रकाशित और श्री पींगळ परबतजी द्वारा सम्पादित द्वैमासिक पत्रिका 'चारण' मे 'श्री सोनल सजीवनी' नामक बृहद् टीका और व्याख्या सहित क्रमश प्रकाशित हो रहा है।

१४— हरिरस के प्रस्तुत वृहद् सस्करण के अतिरिक्त ईसरदासजी की अ य सभी रचनाओ का 'ईसरदास ग्रथावली' के रूप में लेखक द्वारा सम्पादित होकर, रा०रा० रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की ओर से शीघ्र ही प्रकाशन हो रहा है।

ईसरदासजी ने अपनी आयु का अधिक भाग सौराष्ट्र में ही बिताया, किन्तु शेषावस्था में वे अपनी मातृभूमि मारवाड़ में आ गये थे और अपने गांव भादरेस और गुढा के बीच लूणी नदी के किनारे जंगल में झोंपड़ी बना कर विरक्त की भांति रहते हुए श्री रणछोड़-राय की भक्ति और भक्ति-परक साहित्य-निर्माण में लगे रहे और अनेकों बार द्वारका की यात्रा करते रहे। संत-समागम और निरंतर हरिचर्चा के कारण अपनी कुटिया को तीर्थ [१५] रूप देकर सं० १६७५ में आयु के ८० वर्ष समाप्त कर अपने नश्वर शरीर की आत्मा को भगवान श्री रणछोड़राय की परम-ज्योति में लीन कर दिया।

१५.— भक्त कवियों ने ईसरदासजी को ईश्वर स्वरूप, ईश्वर भक्त और उनके काव्य द्वारा काव्य-रचना और ज्ञान की प्रेरणा प्राप्त कर गुरु रूप और उनके जन्म तथा साधना स्थान भादरेस गांव को तीर्थ रूप मानकर दोनों को नमस्कार किया है और हरिरस के साथ इनका महात्म्य वर्णन किया है—

आरती अलख आराधनां, ईसरजी नां आरती

—भक्त पीरदान लालस के अप्रकाशित 'गुण अलख आराध' से

ब्रह्म सतगुरु हूंता वडो, ईसरदास अनूप

—उक्त कवि के अप्रकाशित 'गुण अजंपा जाप' से

ईसर बारठ इसो, रमै वैकुंठ में रांमति
ईसर बारठ इसो, ग्यांन गोविंद जिसो गति
ईसर बारठ इसो, अलख राखै सिरि ऊपरि
ईसर बारठ इसो, इवक मांनियो अपंपरि

प्रस्तुत हरिरस

अद्यावधि प्रकाशित हरिरस के संस्करणों में प्रस्तुत संस्करण अपने में वृहत् और अद्वितीय है। इसको तैयार करने में २५ से भी अधिक प्रतियों का सहारा लिया गया और लगभग २५ वर्ष यथावसर शुद्धतम प्रति की खोज करने में समय लगाना पड़ा। उल्लिखित प्रतियों के अतिरिक्त भी अनेकों प्रतियों का अवलोकन किया गया परन्तु कोई प्रति भी किसी से मेल खाती हुई नहीं मिली। प्रकाशित और अप्रकाशित किसी भी प्रति का पाठ-साम्य, छंद क्रम और छंद संख्या

तू हुओ दास ईसर तणा, मनछा वाचा दोस दहि
किसन रा पाव भेटण करै, गुरु ईसर रो ग्यान ग्रहि ॥१७६॥

—उक्त कवि के अप्रकाशित 'गुण ग्यान चरित' से

ओयिम्रं साहिब ऊपना, भोमि नमो भाद्रेस
पीरदास लागै पगै, ईसाणद आदेस

—अप्रकाशित 'पातिग पहार' से

भाद्रेस भोम दरसण किया मिटै जनम रा पाप
ईसर गुरु सुमिरण किया, आवा-गवण उथाप

—अप्रकाशित अज्ञात कवि

भेटयो जिण भाद्रेस नैं, पाप अळै हुइ जाय

—संग्रह गुटके से

जग प्राजळतो जाण, अघ दावानळ ऊवरण
रचियो रोहड राण, समद हरीरस सूरउत

—गादण केशवदास

एक समान देखने में नहीं आई। पाठ-भेद का तो उनमें कोई हिसाब ही नहीं। समझदार लिपिकार अपनी प्रतिभा का अनधिकार प्रकाश फैलाये बिना नहीं रहे और अशुद्धियों का अंधकार अपढ लेखकों की कलम ने फैला दिया। हमें प्राप्त प्रतियों में केवल दो प्रतियों का निकट-तम छंद-क्रम और इन्हीं में मे एक का एक अन्य प्रति से निकटतम पाठसाम्य मिला है। इन्हीं तीन प्रतियों में से एक प्रति जो सबसे पुरानी, अपेक्षाकृत शुद्ध, विषय-विभाजित और सम्पूर्ण होने के कारण उसे अपना सम्पादनाधार बनाया और शेष सभी प्रतियों से आधार प्रति के अनुकूल अनुवर्तन करते हुए एवं देश, काल, भाषा और भावों का विचार करते हुए पाठ-चयन करने का मार्ग अपनाया। पर ऐसे स्थल बहुत न्यून हैं।

हरिरस जैसे अति प्रख्यात और कवियों और भक्तजनों के घरों में सुलभता से प्राप्त होने वाले काव्य की खोज का भी एक अनूठा इतिहास है और उसका मूल कारण राजस्थान रिसर्च सोसाइटी कलकत्ता द्वारा प्रकाशित सटीक हरिरस है। प्रस्तुत हरिरस की पृष्ठ-भूमि में मुझे इस हरिरस का आभार मानने में अब संतोष हो रहा है। कलकत्ते वाले उक्त हरिरस के सम्पादन में मूल और प्रथम प्रयास श्री सीतारामजी लालस का है और इस प्रयास के फल-स्वरूप श्री सीतारामजी ही उसके प्रकाशन की बुनियाद है। यद्यपि ठेठ तक उनका साथ नही रह सका या अपेक्षित नहीं समझा गया; तथापि आदि और मध्य चरण में इनका संपूर्ण परिश्रम बना रहा है। पीछे के गोटाले में उनका साथ नहीं रहा।

गारासणी ठाकुर भीमसिंहजी ने श्री लालसजी की प्रेरणा से मेरे से हरिरस की टीका करवाई थी। बहुत निकट सम्पर्क में रहने पर भी इसकी चर्चा न तो सीतारामजी ने ही कभी की और न गारासणी ठाकुर साहब ने ही। परन्तु जब उक्त हरिरस प्रकाशित होगया तो उसको देखते ही लालसजी को बड़ा आघात पहुँचा। वे मेरे पास आये और कहा कि– "आपका हरिरस प्रकाशित होगया, पर आपके साथ धोखा हुआ और आपका परिश्रम निष्फल गया।"

मैंने लालसजी को कहा कि 'गारासणी ठाकुर तो धोखा दें ऐसे व्यक्ति नहीं हैं वे तो भक्त हैं और मेरे भी स्नेही हैं उनके द्वारा कोई गड़बड़ हो गई है तो चिंतनीय है। पर मुझे तो विश्वास है कि वे ऐसा नहीं कर सकते। आगे भगवान् जाने। कुछ भी हो, हरिरस प्रकाशित होगया, इसी में संतोष मान लेना पड़ेगा। होना सो होगया। आप चिन्ता नहीं करें।" लालसजी ने कहा– "गारासणी ठाकुर निर्दोष हैं। मैं इसके संबंध में एक लेख प्रकाशित करके इस रहस्य को प्रगट करूंगा।"

श्री लालसजी लेख तो नहीं लिख सके, परन्तु इस रहस्य का उद्घाटन श्री नाहटाजी के (पूर्व प्रसंग की जानकारी के लिये) कलकत्ते से किये गये पत्र-व्यवहार के संबंध में सीतारामजी से किये गये पत्र-व्यवहार ने कर दिया।

श्री नाहटाजी और श्री लालसजी का पत्र-व्यवहार, कलकत्ते वाले हरिरस की भूमिका में स्व० बार्हस्पत्यजी की हरिरस के संपादन संबंधी वर्षों की खोज और परिश्रम का और इसके साथ अपनी

खोज, परिश्रम और बार्हस्पत्यजी को दिये जाने वाले सहयोग का एवं कथित हरिरस के सम्पादन संबंधी घटनाओं पर अथ से इति तक प्रकाश डालने वाला है। श्री नाहटाजी का जाँच करने के प्रयास के लिये और श्री लालसजी का वास्तविक प्रकाश डालने के लिये, मैं इन दोनों महानुभावों का अत्यन्त आभारी हूँ।

अस्तु। कुछ भी हो मेरे सबंध मे ऐसी घटनाएँ कोई नई बात नहीं है। मुझे तो इस हरिरस से कुछ प्रेरणा ही मिली है और उसी के परिणाम-स्वरूप प्रस्तुत संस्करण पाठकों की सेवा मे भेंट कर सका हूँ।

आधार प्रति की उपलब्धि

हरिरस की अनेक हस्त लिखित प्रतियों में छंद-व्यतिक्रम और पाठ और भाषा की असमानता आदि अनेक-विध विभिन्नताओं से यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि ईसरदासजी की जन्म-भूमि मालाणी प्रान्त और प्रवास-भूमि सौराष्ट्र-गुजरात मे खोज करके ऐसी शुद्धतम् प्रति प्राप्त की जाय जो अधिक से अधिक पुरानी हो और जिसका प्रतिलेखन कम से कम हुआ हो। इस प्रयत्न के फल-स्वरूप कई स्थानों में बहुत-सी प्रतियां देखने में आई; किन्तु बहुत समय तक ३६० छंदों की पूर्ण प्रति कहीं देखने में नहीं आई। किसी में कम और किसी मे अधिक। न्यूनाधिक छंदो की शृंखला भी एक-सी नहीं और सभी के अंत में 'इति श्री हरिरस संपूर्ण छै' अथवा 'इति श्री गुण हरिरस बारठ ईसर रो कहियो संपूर्ण समाप्तम्' इत्यादि इत्यात्मक वाक्य लिखे हुए पाये गये।

गारासणी ठाकुर साहब के द्वारा प्राप्त तत्काल करवाई

हुई ३६० छदों की प्रतिलिपि (जिसका पाठ अधिकतर, पी म्र वारडे द्वारा सपादित और ब्रह्म प्रेस, इटावा मे मुद्रित पुस्तक से मिलता-जुलता) और पीतावरजी अर्जुनजी वारडे की ३६० छदों की मुद्रित पुस्तक और उसमे का यह अतिम दूहा—

कवि ईसर हरिरस कियो, छद तीन सो साठ
महा दुष्ट पावै मुगति जो नित कीजै पाठ

और इधर इसके समक्ष पचासों हस्त लिखित प्रतियों मे न्यूनाधिक छद अधिकाधिक पाठ-भेद ईसरदासजी के अन्य ग्रन्थों के कई छद हरिरस मे ज्यो के त्यों समाविष्ट और कई प्रतियों के अत मे—

कवि ईसर हरिरस कियो, दिहा तीन सो साठ
महा दुष्ट पामै मुगत, जो कीजै नित पाठ

आदि इन असबद्ध बातो ने एक बार तो यह भ्रम उत्पन्न कर दिया कि हरिरस के छदों की सख्या वास्तव मे ३६० है कि नहीं ?

इसी बीच जन्म-भूमि बालोतरा मे ही एक अति सुन्दर प्रति का १०७ पत्रो का एक गुटका जिसमे केवल पूरे ३६० छदो का सुन्दर लिपि मे लिखा हुआ हरिरस ही था,प्राप्त हो गया।

गुटका, सत-कला के नमूने की एक अनूठी वस्तु था। रेशमी मिसरू की जिल्द बँधाई, वेष्टन और सिटकिनी वाली डिबिया आदि उसके बाह्याकर्षण की वस्तुओं के अतिरिक्त उसकी लेखन-कला और चित्र-कला तो अनुपम ही थी। सभी पृष्ठों पर विभिन्न वेल-बूटों के रग बिरगे और स्वर्ण खचित बोर्डर और बीच के दो पृष्ठों पर, एक मे— शख, चक्र, गदा और पद्मधारी चतुर्भुज विष्णु

भगवान् (श्री रणछोड़राय) और दूसरे में– ललाट में उर्ध्वपुण्ड्र, गले में माला, कंधों पर उत्तरीय धारण किये हुए और हाथ जोड़े हुए एक भक्त (संभवतः ईसरदासजी) दर्शन करते हुए चित्रित थे।

ऐसा लगता है कि लेखक कलाकार होने के साथ हरिरस और ईसरदासजी में अत्यन्त श्रद्धा रखने वाला भगवान का अनन्य भक्त था, जिसने इतनी श्रद्धा-भावना और परिश्रम से ऐसे नयनाभिराम रूप में उसको मंडित किया।

हर-उत लेखणहार (५), परासर वालखिला पदमेव (२४५) और अजल्सिव आदित पांण अलोज (१५४) आदि महत्वपूर्ण और अद्वितीय पाठ इसी प्रति के हैं।[१६]

मालाणी प्रान्त की यात्रा में हमें एक ऐसी ही पूर्ण प्रति, प्रत्युत् इससे भी पुरानी, हाथ लग गई। यही प्रति हमारे सम्पादन की मुख्य और आधार प्रति है।

कुछ प्रतियों का परिचय

ऊपर लिखी दोनों प्रतियों के साथ, हमें जिन जिन प्रतियों का विशेष अवलोकन करना पड़ा है, उनका विवरण इस प्रकार है–

१६- बहुत प्रयत्न करने और पर्याप्त मूल्य देने पर भी यह गुटका हमारे हाथ नही लग सका। बाद में मालूम हुआ कि वनू माता के अपढ और अफीमची पुजारी भारमल निरंजणी ने पास में पैसा नहीं होने के कारण अफीम की उग्र वायड पर अन्य गुटकों और प्रतियों के साथ केवल रु० ५) में, जो गुटके की अनुरोधित कीमत से दस गुना कम थी, रद्दी के मोल में बेच दिया।

१ पूज्य पितामह श्री रामसुखदासजी के संग्रह की (हमारी निज की) पांच प्रतियां। छंद सं० १८३, २३६, १८७, १११ और १४१। लिपिकाल सं० १८८० और १९०० के बीच। दो प्रतियें दवे रामवर्ण द्वारा बालोतरा में, एक पितामह द्वारा और एक मोसो-डाई में साधु रामकृष्णदास निरजणी लिखित हैं।

२ श्रीपूजजी फतेन्द्रसूरिजी भावरख गच्छ उपाश्रय बालोतरा, यति मदनचन्द्र द्वारा। छंद सं० २६१, सं० १८६१, जती निहालचंद्र द्वारा जोधपुर में लिखित।

३ वनू माता का श्री रघुनाथजी का मंदिर, बालोतरा। छंद ३६०, सं० १८७६, साधु विहारीदास निरजणी द्वारा बालोतरा में लिखित। लिपि, लेखन और गुटका अति सुन्दर। सर्व प्रथम प्राप्त पूर्ण प्रति।

४ महात्मा श्री भगतीरामजी निरजणी की बगीची, बालोतरा। छंद ३१३ सं० १८३७, निरजणी साधु निश्चलदास द्वारा पांच-पदरा में लिखित।

५ मानपुरा (मारवाड) के श्री प्रभुदयाल ब्रह्मभट्ट द्वारा। छंद ११८, सं० १९०१

६. ठाकुर सोमसिंहजी गारासणी, छंद, ३६०

७ बारहठ शुभकर्ण खारी (मारवाड), छंद ३०४, पारडाऊ में बारठ [धीरदान (?)] लिखित

८ सिद्ध बाबा रामनाथजी, जोधपुर। छंद ३६०, जीर्ण प्रति लेखन शुद्ध। अधिकतम छंद विषयवार।

९. सर शुकदेव प्रसाद काक डिंगल डिक्सनेरी वर्क्स जोधपुर। दो प्रतियाँ छंद ८६ और २५०, त्रुटित।

१०. ठाकुर मोतीसिंहजी सीमाळिया (मारवाड़). छंद ३६०, सं० १७०७ जेठ सुदि ११, लिखतं धांमट [देवरांम वीठूजा (?)] प्रथम पत्र पर साचोरा ब्राह्मण जोसी रुघो बायड़मेर और उसके नीचे अलग-अलग हाथों से लुदरवा रो भाटी घूंकळो और ठामो देवकर्ण और अगले पत्र पर "अै पोथी हरीरस री लवेरा थी। आंणी छै" ... इत्यादि नाम लिखे हैं। लिपि शुद्ध मारवाड़ी। सम्पादन की मुख्य प्रति।

११. लोहाणा पूनमचंद, सिद्धपुर (गुजरात), छंद ३०१, लिपि मारवाड़ी। फटी हुई और बीच का अंश त्रुटित।[१७]

१२. श्री नागरमल भूराजी वाव (गुजरात), छंद १७४ सं० १८८३ की प्रति से बालोतरा में व्यास आसाराम ने सं० १९४६ आसाढ़ सुदी १२ को प्रतिलिपि की। लिपि मारवाड़ी, सुन्दर।

१७- यह प्रति भाषा की दृष्टि से सीमाळिया की प्रति से बहुत स्थानों में मेल खाती है। गुजराती का प्रभाव भी है। इसका पहला और अंतिम दोहे इस प्रकार हैं–

(प्रथम) सरसुति सनेहां हों जपां, गणपति लागांइ पाय
ईसर ईस अराधवां, श्री वुध करो सहाय।

(अंतिम) हरिरस नो गुण सरस है, जे कोई पीवै जास
पीवइ सु अणमर हवै, दाखै ईसरदास।

१३ श्रीदीच सेना पराग मूराणा (गुजरात) छद ५३ से १६६ अपूर्ण लिपि गुजराती।

१४ अमय जैन ग्रन्थालय बीकानेर की पाँच प्रतियाँ—

(इन प्रतियों के विवरण खो गये।)

१५ श्री मुरूर्नसिहजी बीदा संनाळी (बीकानेर), छद १७५, स० १८४६ जेठ सुदी ७, बगडी (मारवाड) मे नानीदास लिखित।

१६ विद्या मदिर शोध सस्थान, बीकानेर, छद सख्या नहीं। अपूर्ण। कुछ छदों की मारवाडी टीका सहित [१८]।

हरिरस की भाषा

हरिरस की भाषा मध्य काल की शुद्ध साहित्यिक मारवाडी भाषा है। पश्चिमी राजस्थानी भाषा के क्षेत्र मे प्रधानतया मारवाड

१८- इसके प्रथम १४ दाहो के बाद 'रिध सिध दियण कोइला गाणी' विश्वम्भरी छद शुरु होता है और 'भमतो राख हिये जग भावन' तक मारवाडी भाषा मे टीका लिखी हुई है। आगे टीका नहीं है। तत्कालीन मारवाडी भाषा के गद्य के उदाहरण के रूप मे एक छद और उसकी टीका यहा दी जा रही है—

भगत-वछळ मो दे भगति, भांज परा सह भ्रम्म।
मूझ तणा क्रम मेटवा, क्या तुहाळा क्रम्म॥

ईसर बारहट कहे छै—हे परमेश्वर, हे कृष्ण, हे भगत वछळ, मोनु थारी सेवा भगति दे। म्हारै मन मे भ्रम छै, म्हारै मन रो भ्रम भाजि। म्हारा क्रम मेटि। म्हारा जिके चीकणा क्रम छै

का वह पश्चिमी भाग जिसमें मालाणी, साचोर (उत्तर गुजरात और कच्छ के रण तक) पोकरण-फलोदी के आस-पास का भाग जैसलमेर की सीमा तक, घाट (सोढाण, थर और पारकर)[१९] और माढ (जैसलमेर प्रदेश) तथा मारवाड जैसलमेर मे लगता हुआ बीकानेर प्रदेश, राजस्थान की साहित्यिक भाषा डिंगल (मारवाड़ी पद्य और गद्य) के केन्द्र और उद्गम स्थान कहे जाते हैं। अपभ्रंश काल के इसी विशाल क्षेत्र की भाषा के परिवर्त्तित होते हुए काल को साहित्य जगत ने 'प्राचीन-पश्चिमी राजस्थानी' और गुजराती साहित्यकारों

तिके क्रम मेटवा रै वासतै थारा गुण वर्णवूं छूं, जु गुण वर्णवीयां क्रम मिटै।

इसमें 'कोइला रांणी' का अर्थ- 'कोइलै पर्वत री राड' लिखा है।

इसी गुटके मे लिखे हुए 'नागदमण' की प्रशस्ति में इसका लेखन-काल संवत् १७५२ द्वुतीक असाढ सुदी १२ लिखा है। 'नागदमण' २२० छंदो का है।

१९- थर (थळ) और घाट का बहुत बडा भाग पहले मारवाड राज्य का ही एक भाग था। अंग्रेजी राज्य के समय उसके विकाश के बहाने एक संधि के द्वारा अमुक अवधि तक सिंध सरकार को लीज पर दे दिया गया था। भारत स्वतंत्र होने के कुछ ही समय पूर्व लीज की अवधि समाप्त होने पर मारवाड़ के अंग्रेज प्राइम मिनिस्टर द्वारा मारवाड का वह विस्तृत भाग सिंध में ही रख दिया गया। आज वह पश्चिमी पाकिस्तान का एक भाग बना हुआ है।

ने 'जूनी गुजराती' की सज्ञा दी है।[२०] १७ वीं शताब्दी (पूर्वार्द्ध) तक इसमे अपभ्रंश के रूप पाये जाते हैं। ईसरदासजी की राजस्थानी रचनाओं का रूप अपभ्रंश से छूटता हुआ उत्तर-कालीन सधि-काल था। हरिरस मे अपभ्रंश-काल के द्वित्व वर्ण और सज्ञाओं, सर्वनामों और क्रियाओं आदि मे ऐ, ऐं, औ, औं के स्वरान्त शब्दों का अइ, अई, अउ, अऊ का अनेक स्थानों पर इस भांति प्रयोग हुआ दिखाई देता है—

१ द्वित्व वर्णों के कुछ शब्द

अग्गि (आगे > अग्र)	मुग्त (मुक्ति)
धरम्म (धम)	करम्म
ध्रम्म (धर्म)	क्रम (कर्म)
चक्ख (चक्षु)	क्रम्म

२०- राजस्थानी भाषा के आदि और विकास-काल के सबध मे विद्वान् एक मत नही है। डा० तैस्सितोरी तेरहवी शती को प्रारम्भ काल मानते हैं। डा० मोतीलाल मेनारिया प्रारभ-काल स० १०४५, डा० हीरालाल माहेश्वरी स० ११०० से १५०० तक विकास काल मानते हैं। डा० ओमआनद सारस्वत राजस्थानी दोहो के काल विभाग मे सधि-काल स० ६०० से १३०० और आदि-काल स० १३०० से १५०० तक मानते हैं। श्री अगरचद नाहटा ने ११ वी शती से आदि-काल माना है।

स्रबं
स्रब (सर्व)

सबद (शब्द)

विसन (विष्णु)

सिवज्ज (स्वेदज)

मयण (मदन)

परभ्भ (प्रभु)

त्रिगदब (त्रिदव) इत्यादि

२. मध्य और अन्त्य स्वरों के कुछ रूप

अन्त्य स्वरान्त	मध्य स्वरान्त
फरसउ (फरसो > परशु)	दईत (दैत्य)
म्हारउ (म्हारो = मेरा)	दइतां (दैत्यां)
लई (ले कर)	चउद / चऊव (चौदह)
तउ (तो)	
दीठउ (दीठो = देखा)	चउगान (चौगान)
हुअउ (हुओ = हुआ)	इत्यादि २
कराड़उ (कराड़ो = कराइये)	
समांणउ (समांणो = समागया)	
करइ (करे = करके)	

हरिरस में प्रथम पुरुष एक वचन वर्तमान काल की क्रियाओं के रूप बहुवचन के समान प्रयुक्त हुए दिखाई देते हैं, परंतु वास्तव में वे रूप एक वचन के ही हैं। मालाणी, जैसलमेर, धाट और पोकरण-फलोदी आदि पश्चिमी प्रदेशों मे ऐसी क्रियाओं के दोनों वचनों के प्रयोगों में कोई अंतर नहीं होता[२१] —

२१-२३- क्रियाओं और सर्वनामो के इन रूपों का उल्लेख श्री सीताराम लालस ने अपनी राजस्थानी व्याकरण मे किया

एक वचन	वहु वचन
हू राड को करा नीं	म्हे राड को करा नीं
(मैं लडाई नही करता हूँ)	(हम लडाई नही करते हैं)

इन दोनों वाक्यों मे दोनों वचनों की वर्तमान कालिक क्रियाओं का एक समान प्रवर्त्तन हुआ है। हरिरस की इस रूप की कुछ क्रियाएँ सोदाहरण यहा दे रहे हैं—

अखां=कहता हू। अखां उपमा नख कोट अरयक (२५५)

मुणां=कहू, बताऊ। मुणा किय जाग असी जग मूर (२६५)

लहां=प्राप्त करू। इको रसणाह लहा किम अत (१२२)

सका=सकता हू। सका केम समराय (६)

अहूलं, असहा, किय, किथं, खत्री, खीर, गोठ, घाट, ठयो, थियै, पग, मजं, माहरो, रहमाण, हिक हेक, इत्यादि अनेकों शब्द उक्त क्रिया रूपों के साथ इन प्रान्तों के प्रयुक्त हुए हैं। इसी प्रकार अढार, अनै, आप्यो, कालावाला, केम, गळीगयो, गिनांन, चउद, जडयो, जनेता, जे, दी, त्रणै, पमाड पामै, मूक परी, रुदो, वहराट, वहेलो, सनरं, सोळ आदि कितने ही शब्द गुजराती के प्रयुक्त हैं।

गुजरात, धाट और सिंध से मिले हुए राजस्थान के प्रान्तों मे इन शब्दों का व्यवहार उसी प्रकार होता है, जिस प्रकार कि उक्त प्रान्तों में। और साहित्य में तो सर्वत्र अबाध गति से व्यवहार होता है। इसलिये इस प्रकार के शब्दों का व्यवहार डिंगल साहित्य में अपने निजी शब्दों के समान ही किया जाता है! वैसे पुरानी पश्चिमी

राजस्थानी उपनाम जूनी गुजराती की परंपरा सन्निहित है ही और ईसरदासजी का धाट-सिंध के पड़ोसी प्रान्त में जन्म और सौराष्ट्र-गुजरात में उनका दीर्घ-कालीन प्रवास तो मुख्य बात है।

डिंगल साहित्य में उसके निजी शब्दों की बड़ी विशेषता है। प्राकृत और अपभ्रंश की कड़ी में संस्कृत मूलक शब्दों की भी उसमें कमी नहीं है। भाषा के रूप और स्थायित्व में इन दोनों बातों का और उसके साथ विविध रूपों में भावों को स्पष्ट करने वाली क्रियाओं का बड़ा महत्व है। क्रियाओं के भी उक्त प्रकार के ही दो वर्ग हैं। हरिरस में भी दोनों ही वर्गों के क्रिया पद अपने भावों को यथातथ्य और यथास्थान प्रगट करने में सक्षम रूप से प्रयुक्त हुए हैं। यहां हम उक्त दोनों वर्गों के और क्रियाओं के संयुक्त प्रयोगों एवं काल, वचन आदि भेदों के कुछ शब्द उदाहरणार्थ दे रहे हैं—

१- भविष्यत् काल- आवसै, करही, सेविस, हूसी, वूडंला।
(सभी पुरुष, वचन)

२- भूतकाल- जड़्यो, जायो, ठयो, रळियो, खपै, पमै, किधेव, गळीगयो।

३- वर्त्तमान- अळूझत, तविजै, थावै, थियै, भळावै, मेल्हां, कराड़उ।

४- संयुक्त- नांख परो, म संताय, म ठेल, मूक परी, न पार पड़ोय, नव सुइये, रमाड़ म, रोळ र, वीसरजै नहीं इत्यादि २

सानुनासिक वर्ण के पहले आये हुए आकार वाले शब्दों पर राजस्थानी में अपनी विशेष ध्वनि के अनुसार अनुस्वार लगाने की विशेष और पुरानी प्रथा है। हरिरस में इस नियम के अनुसार— कोयला रांणी, खांण, दांणव, मांनै, नांमै, पांमीजै, रांमण,

सांमुहा, हांणी आदि पचासों शब्द हैं।[२२]

राजस्थानी के भविष्यत्काल अन्य पुरुष क्रियाओं के सी ही और ऐला प्रत्ययों मे ऐला प्रत्यय की केवल एक ही क्रिया का प्रयोग हरिरस में हुआ है।

एक वचन प्रथम पुरुष सर्वनाम पद हूँ (हों) का कर्म कारक मालाणी प्रान्तीय रूप हरिरस मे मना और असहा है। म्हनै और मनै भी इसके अन्य रूप हैं। अमहा (अमा) दोनों वचनों मे प्रयुक्त होता है—

२२- सानुनासिक वर्ण और उसके पूर्व आकार पर अनुस्वार लगने का नियम उन क्रियाओं पर लागू नही होता जिनके (आकार और सानुनासिक के) बीच मे वकार का आगम हो सकता है और उनके अर्थ मे कोई अन्तर नहीं आता। जाणो>जावणो (=जाना), आणो>आवणो (=आना), खाणो>खावणो (=खाना) इत्यादि, ऐसे व आगमवाले जाणो, आणो, खाणो आदि क्रिया शब्दों पर अनुस्वार नही लगता। इनमें व का लोप समझा जाना चाहिये। परतु जिन शब्दों मे व का आगम या लोप नही है, उनमे अनुस्वार लगता है, जैसे—आणो (=वधू का ससुराल जाना), जाणो (=मानो, गोया) इत्यादि।

इसी प्रकार सानुनासिक और उसके पूर्व ऊकार वाले शब्दो में भी प्राय यही नियम लागू होता है।

—लेखक की अप्रकाशित बाल-व्याकरण से उद्धृत

धरणीधर ! धर छंडतां, असहां तू आधार (६)

इसी प्रकार द्वितीय पुरुष एक वचन सर्वनाम तू का कर्म कारक रूप तनां है। अन्य रूप तनै और थनै है—

तनां घट मां हरि ! दीठउ तेम[२३] (२७७)

कुछ सर्वनाम शब्दों के रूप इस प्रकार प्रयुक्त हुए हैं—

१. प्रश्नवाचक सर्वनाम

कवण, कसा, कसी, किसो, कुण, को, केण, इत्यादि।

२. संबंधवाचक सर्वनाम

जके, जको, जिग्र, तिग्र, तास जिको, जिकण, जिकां, जिके, जिहि, जेण, जेना, ज्यां इत्यादि।

३. निश्चयवाची सर्वनाम

ऊ, ए, ओ, अै, इग्र, इहि इत्यादि।

४. पुरुषवाचक सर्वनाम (उत्तम पुरुष)

अम, अमतणा, अमांणिय आदि। तम, तमतणा, तमांणिय इसके मध्यम पुरुष रूप हैं।

कीधा अम कै तम किया (३०७)
तित कित हूता अमतणा (३०५)
प्रजाळहु देव! अमांणिय पीड़ (१७८)

म्हारउ, म्हारो, मांहळो, मो,
आपज, आपां पे इत्यादि २

उपरोक्त सर्वनाम शब्द सार्वनामिक-विशेषणों के रूप में भी प्रयुक्त हुए हैं।

हरिरस में बिशेषण शब्दों की स्थिति प्रायः दो प्रकार

से प्रयुक्त है। कहीं साधारण बोलचाल के अनुसार है और कहीं काव्यगत सुविधा को लेकर विशेष्य के बाद मे प्रयोग हुआ है, जैसे— कोड तेतीस, ताणा वाणा सब्ब, तीरथ सबै, पुहप भार अट्ठार, सरण असरण, इत्यादि।

एकवचन पुल्लिग सज्ञा के ओकारान्त विशेषण बहुवचन मे बोलचाल की भाषा की भाँति आकारान्त ही हैं पर कहीं कहीं विशेषण मे ज्यादा जोर देने के लिये अकारान्त रूप भी हैं जैसे घरा घणा घाट इत्यादि।

साधारण विशेषण शब्दों के अतिरिक्त अधिकतर सर्वनाम शब्द जैसा कि ऊपर कहा गया है विशेषण के रूप मे प्रगट हुए हैं।

हरिरस मे सख्या वाचक विशेषणों की प्रचुरता है और उनके भिन्न-भिन्न रूप कतिपय उदाहरणों के साथ द्रष्टव्य हैं—

इक, इको, एक, एको, एकोज, हिक, हेक, हेकरा। एकलो।
दोय बे, दुइ, दुई, दु उभै। दूजो, बिहा बिहु, बियो, दूण।
तीन तिर, त्रि, श्री, त्रय, त्रै, सुर। त्रणे।

(नमो नर तीन पगा त्रिभुवन्न।
मिटइ सुर लोक पैठो जळ माह)

चत्र, चतुर, चार, उभैकर दूण। चारिय, चियारं।

(उभैकर दूण आयद्ध प्रसण)

पच (नमो वय पच ग्रहे पञ्च वीर)
छ षट। (वर्द पग रा खट मास वखाण)
सत, सात, सप्त (सप्त पियाळ न सात समद)
आठू। (आठू पहोर अणद सु)
नव, नवे नवो (सुमरण सम सौदा नहीं, नर देखो नव खड)

दस, दसै, दह (नमो क्रत काळ तणा दह कंध)

दुवादस (दुवादस आंगळ गात दिपव्व)

चउद, चऊद, चवदै (रिणायर रोळर चउद रतन्न ।

(भुवन्न चऊद वँदै पग जांण)

सोळ (सोळ भांत पूजा समारिस । सस सोळ कळा अम्रत स्रवै)

अढार, अड्ढार (नमो पह कीध अढार पुरांण । पुहप भार अड्ढार)

इकोस (नमो किय वार नछत्री इकोस)

तेतीस (अमर कोड़ तेतीस, प्रभु तो पार न पावै)

बावन्न (नमो बळि बांधण रूप बावन्न)

अडसठ (पखाळत तीरथ अड़सठ पग्ग)

चौरासी (चंड मागै चौरासी)

सत (१००) (गुणां सत अस्तुति करत गणेस)

तीन सौ साठ (कवि ईसर हरिरस कियो, छंद तीन सौ साठ)

अठासी हजार (अठासी हजार अखै मन हेक)

इको न सहस्स (पुरै परिधांन इको न सहस्स)

सहस, सहस्स, सहस्र, सहस्सर । (सहस्सर बाहुव सेन संघार)

क्रोड़, कोट, कोटि, कोटो, करोड़ । (नमो वप कोट वसै ब्रहमंड)

त्रितीस करोड़ (कथै सुर नांम त्रितीस करोड़)

क्रोट छपन्न (जपै पग कोट छपन्न जदूव)

लख, चुरासिय लक्ख (लिया अवतार चुरासिय लक्ख)

पदम्म अढार (पदम्म अढार उतारिय पार)

अनेक, असल, अगम्य आदि शब्द भी सख्यावाची विशेषण हैं।

अवधी व्रज आदि कई भारतीय बोलियों[२४] की भांति डिंगल भाषा के साहित्य में सज्ञाओं और विशेषणों आदि के नामों मे काव्यगत सुविधा के लिये रूप-परिवर्तन की अपनी एक अलग शैली

२४- राम चरित मानस में, जो हरिरस की समकालीन रचना कही जाती है, शब्दो के रूप परिवर्तन की एक बडी शृंखला उसमे दिखाई देती है। शब्दो की यह रूप परिवर्तन-परपरा उस समय की सभी प्रान्तीय भाषाओ मे देखी जाती है। मानस की बैसवाडी (अवधी) भी इससे मुक्त नही रह सकी। ऐसे शब्दो मे अवधी और राजस्थानी के शब्दो मे कितना अनर वा मेल है इसे देखने के लिये मानस के कुछ शब्द राजस्थानी शब्दो के साथ यहा दिये जा रहे हैं।

मानस की अवधी	राजस्थानी	हिन्दी
भुअग	भुयग	भुजग
जागवलिकु	जागवलिक	याज्ञवल्क्य
छमा	खमा, छमा	क्षमा
छत	छत	क्षत
अछत	अछत	अक्षत
पसाउ	पसाय पसाव	प्रसाद
लुबुध	लुबध लुद्ध	लुब्ध
लोई	लोय, लोग	लोक
समदरसी	समदरसी	समदर्शी

है। हरिरस को ईसरदासजी ने अपने रचे सभी ग्रन्थों से सरलतम रचा है। फिर भी इसमें ऐसे रूप-परिवर्तित शब्दों की कमी नहीं है। उनका अनूठापन हरिरस की अपनी वस्तु है। कुछ शब्द यहां दिये जा रहे हैं—

अखोरण=अक्षौहिणी	निवांण-जग=भवार्णव
अजस्सिव=अज और शिव	पियाळपुरेस=पातालपुर पति, पाताल निवासी
करमन्न=कर्मण्य	

बिग्यान	विग्यान, विगनान	विज्ञान
ऐहहु	आवहो, आवजो	आवहु (आना)
ओतेहु	आता तो, आवता तो।	आते तो
भगति	भगती	भक्ति
मुकुति	मुगती	मुक्ति
भासा	भाखा, भासा	भाषा
रिषि	रिखि	ऋषि
उयउ	उदै	उदय
मुकताहल	मुकताफळ, मुताहळ, मोताहळ	मुक्ताफल
सुअ	सुअ, सुव	सुत
नाघत	उलांघतां	उल्लंघते
पब्बि	पब्बै	पर्वत
सावँकरन	सांमकरण, स्यांमकरण	श्यामकर्ण

फीट=कंटम
कु भेण=कु मकर्ण
कोयलाराणी=कोकिलारोहिणी
खर दूख=खर और दूषण
खोण=क्षोणि
गरभ्म-जगत्त=जगत् गर्भ
गळकासिला=गडकी शिला
गिनान-विसम=ज्ञान विश्रम
जदून=यादव
जमन्न=जैमिनी
जामदगन्न=यमदग्नि
जीवण-जदू=यादव जीवन
जुजठ्ठळ=युधिष्ठिर
दुग्राळ=जगद्याल
द्रजीत=इन्द्रजीत
द्रजोण=दुर्योधन

पोहकरनम=पुष्करनम
प्रकर्त्तराजान=प्रकृतिराजन्
मुताहळ=मुक्ताफल
म्रगकासब=मृगकश्यपु
रज्जियो=राजन्
लोकालोक महा ब्रहमंड=लोकालोक और महा ब्रह्माण्ड
वालखिला=वालखिल्य
वासिठ=वशिष्ठ
विनाण=विज्ञान, ज्ञानमय बात, रहस्य
वुछाव=उत्सव
सत्त भ्रणद-सचेत=सच्चिदानंद
सावेव=सावयव (सारूप्य)
सिदज्ज=स्वेदज
इत्यादि २

हरिरस काव्य मे प्राय सभी कारक विभक्तियों का प्रयोग हुआ है। कुछ मालाणी प्रान्तीय रूप भी हैं। प्रयुक्त विभक्तियो के रूप दिये जा रहे हैं—

कम कारक— नैं, ना
करण कारक— सू, हू, थी, थिय
अधिकरण कारक— में, मा, मझ, मांझ, मांझल, महीं

कन, कना, कनैं

पाहि, पाही, पांही

विखैं, विसैं

अपादान कारक— सूं, हुं, हूं, हुंत, हूंत, भणी

संबंध कारक— रा, री, रैं, रो, रउ

तण, तणा, तणां, तणी, तणैं, तणउ

चा, चो, चे

केर, केरी, केरे, केरो

कर्त्ता कारक पुरुष जातीय एकवचन में कोई प्रत्यय नहीं लगता। बहुवचन में कहीं कर्त्ता का अ, ओ आदि अन्त्य रूप मिटकर अन्त्य आ हो जाता है और कहीं आं बन जाता है। स्त्री-जाति में कुछ परिवर्त्तन हो जाता है।

डिंगल साहित्य के अनुसार हरिरस में संस्कृत की ऋ, ङ, ञ, ढ़, श, ष और विसर्ग ध्वनियों का प्रयोग नहीं हुआ है। ऋ का स्थान र, रि और रु ने ले लिया है। श की ध्वनि व्यापक रूप से दन्त्य स है। लिखने में केवल श्री शब्द का प्रयोग किया जाता है। ष के स्थान कहीं स और कहीं ख ध्वनि प्रयुक्त है। विरल स्थानों में ह ध्वनि भी; जैसे पुष्प का पुह्प। भविष्यत् काल के अन्त्य वर्ण सी रूप कहीं कहीं ही रूप में भी प्रयुक्त हुए है; जैसे— करसी का करही आवसी का आवही इत्यादि।

डिंगल भाषा में 'ळ' विशिष्ट प्रयोग है। इसका भी ण की भाँति शब्द के आदि में प्रयोग नहीं होता। क्ष के स्थान में ख और ज्ञ के स्थान में ग्य प्रयुक्त है।

इस प्रकार ध्वनि समूहों के आधार पर मोटे रूप से हरिरस के लिये ही नहीं, वरन डिंगल भाषा और साहित्य के लिये निम्न प्रकार केवल १० स्वरों और ३२ व्यंजनों की वर्णमाला पर्याप्त समझी जा सकती है—

अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ

ङ न म ण

क ख ग घ

च छ ज झ

ट ठ ड ढ

त थ द ध

प फ ब भ

य र ळ व

ह स ल ड़

—लेखक की अप्रकाशित बाल-व्याकरण से

विषय-विभाजित हरिरस और उसके छंद

प्रस्तुत संस्करण अद्यावधि प्रकाशित संस्करणों में अपना विशेष महत्व रखता है और वह है उसका विषय विभाजन। वैसे सभी (३६० छंदों के) पूर्ण संस्करणों में सभी विषयों के छंद बिखरी हुई स्थिति में, लेखकों की अपनी अनधिकार प्रवृत्ति को प्रदर्शित करते हुए अनेक प्रकार के पाठान्तरों के रूप में प्राप्त हैं। अनेक प्रतियों के अवलोकन से यह पता चलता है कि पाठ और विषय-भेदन की यह प्रक्रिया बाधा रहित चलती रही है। यही कारण है कि

किसी भी प्रति का किसी अन्य प्रति से न तो पाठ-साम्य है और न विषयानुक्रम-साम्य ही। प्रस्तुत संस्करण में भी विषय की दृष्टि से कोई-कोई छंद इधर-उधर प्रतीत होते है, परन्तु जिस रूप में वह प्राप्त है, उसका अध्ययन और मनन करने से वह यथातथ्य ही ज्ञात होता है। ज्ञान-कांड का अंतिम कुछ अंश ऐसा है जो इस कांड से मेल खाता हुआ नहीं दिखाई देता। वह अंश हरिरस का एक प्रशस्ति पाठ है, जिसमें हरिरस की महिमा के साथ कथित विषयों की सम्मिलित रूप से पुनरावृत्ति कर उनमें दृढ़ आस्था व्यक्त की गई है। वर्णित विषय पर बल देने के लिए अच्छे कवियों की यह परंपरा रही है। अतः जो विषयीकरण ईसरदासजी ने किया है वह सर्व सामान्य वर्ग के लिये एक उचित प्रकार है।

पुरानी परिपाटी के अनुसार विषयों के शीर्षक चालू पँक्ति में और राजस्थानी भाषा में लिखे हुए थे, जिनका भावार्थ लेकर हमने हिन्दी शीर्षक दिये है। अथ अवतारां रा नाम, अथ श्री चरणां री महमा अथ हरी सिंवरणरी सीख आदि शीर्षक वत नामों को अवतार नामावलि श्री चरण महिमा और श्री हरि-सुमिरण उपदेश शीर्षक देकर हिंदी रूप दिया है। श्री सत्य महिमा (३५१) और श्री मद्भागवत महिमा (३५२) ये दो शीर्षक-नाम हमने अपनी ओर से जोड़े हैं।

हरिरस में कुल पांच प्रकार के छंद व्यवहृत हैं। जिनमें दोहों की संख्या १०२, गाथा २ (चौ-झड़ो १ और १ दु-झड़ी), त्रिअखरी ३०, मोतीदाम २०६ और छप्पय २१ हैं। कांडानुगत छंदों

की सख्या ११४, १४७ और १०० हैं।

हरिरस की 'भक्ति-ज्ञानामृत भावार्थ दीपिका' नाम्नी भावार्थ-टीका के अतिरिक्त डिंगल साहित्य के शब्दों के अर्थ जानने के लिये शब्दों के यथातथ्य और व्यवहृत रूपों के साथ सयुक्त क्रियाओं और अन्य सयुक्त शब्दों का हमने ४७ पृष्ठों का एक शब्द कोश भी परिशिष्ट मे दे दिया है, जिससे भावार्थ समझने मे सुविधा रह सके।

अन्य परिशिष्टों में हरिरस के छन्दों की अनुक्रमिक प्रथम पंक्ति सूची, जिन २५। ३० हरिरस की प्रतियों से मिलान कर यह सस्करण तैयार किया गया है, उनके अतिरिक्त अनेकों प्रकाशित और अप्रकाशित प्रतियो से शताधिक बहु प्रचलित पाठान्तर और प्रक्षिप्त पाठ-परिशिष्ट, छोटे हरिरस के दो पाठों का परिशिष्ट और अंतिम पांचवां परिशिष्ट ६६ पृष्ठों का महत्वपूर्ण कथा कोश है, जिसमे हरिरस के अतर्गत आये हुए भक्त गणों, महात्माओं, तीर्थों, परिक्रियाओं और पारिभाषिक आदि लगभग १६५ नामों का प्रकरण से सबध रखने वाला सक्षिप्त परिचय दिया गया है। इन परिशिष्टों के पूर्व विषयानुरूप परिशिष्ट परिचय दिया गया है, जो इस भूमिका की कडी रूप मे पठनीय सामग्री है।

हरिरस के कोश तक के २१५ पृष्ठ अग्रवाल प्रेस, मथुरा में छपे हैं और उसके आगे की समस्त सामग्री श्री साधना प्रेस, रतनगढ (राजस्थान) मे छपी है। मथुरा से बद कर रतनगढ मे छपवाने की हमारी विवशताओं के सबध मे हम कुछ नहीं कहना चाहते। विलब की बात को छोड कर अन्य बातें यह पुस्तक ही कह सकेगी।

आभार

हरिरस के पाठों की जाँच और उसका भावार्थ लिखने में मेरे परम मित्र सत्कवर स्व० पंडित श्री रामयश गुप्त ने जो सहायता की थी, वह ऋण मेरे पर चढ़ा ही रहेगा। उनकी उत्कट इच्छा थी कि इसका भावार्थ मारवाड़ी और हिंदी दोनो भाषाओं में और इसके सभी शास्त्रीय और दार्शनिक अभिधानों का वृहत् कथा कोश केवल मातृभाषा मारवाड़ी में लिखा जाय जिससे सर्व-साधारण ग्रामीण जनता समझ कर इस रसामृत का पान सुलभता से कर सके। उनकी इस इच्छानुसार तो यह नहीं बन सका; पर उसकी आंशिक पूर्ति द्वारा उनकी स्मृति में उनका यह प्रिय ग्रन्थ उनको समर्पण करता हूँ।

स्व० श्री रामदेवजी चोखानी का भी मैं आभारी हूँ, जिनकी प्रेरणा इसको शीघ्र प्रकाशित करने की सतत मिलती रही और निराश नहीं होने दिया।

मेरा सम्पादित हरिरस अन्य ढंग से प्रकाशित हुआ। इसका संताप और पश्चात्ताप मित्रवर श्री सीतारामजी लालस को मेरे से अधिक हुआ। उनकी इस सहृदयता और सद्भावना से प्रेरित होकर मैं इस नवीन संस्करण के प्रकाशन की ओर प्रवर्त हो सका, एवं इस तथ्य की जाँच और गहराई में उतर कर तथ्यों को प्रकाश में लाने का जो सद्प्रयत्न श्री अगरचंदजी नाहटा ने किया, इसके लिये मैं इन दोनों महानुभावों का अत्यन्त आभारी हूँ।

जिन जिन महानुभावों ने मुझे अपनी प्रतियां देखने को दी, उनकी सूची बड़ी है, उनमें से कुछ का नामोल्लेख ऊपर किया है।

उन सभी का मैं बहुत ही आभारी हूँ और सबसे अधिक आभारी हूँ, हरिरस और उसके रचयिता ईसरदासजी के परमोपासक ठाकुर मोतीसिंहजी का। जिन्होंने अपने नित्य नियम की पाठ पुस्तक और पूजा-पुस्तक होते हुए भी दो दिन तक अध्ययन करने को अपनी पुस्तक मुझे दी। यही पुस्तक इस संस्करण के सम्पादन की मुख्य हस्तलिखित प्रति है।

श्री नेमीचंदजी पूगलिया ने कोश के शब्द छांटने और उनकी चिटें बनाने में योग दिया अतः इनका भी आभारी हूँ।

परम सुहृद्वर और मेरे सहयोगी श्री मुरलीधरजी व्यास का किन शब्दों में आभार प्रदर्शित करूं कुछ समझ में नहीं आता। बीकानेर में मेरी लंबी बीमारी में घंटों ही नहीं, रात के नौ-दस बजे तक पास में रह कर कथा-कोश लिखने में सहयोग देकर जो श्रम उठाया वह उनकी आत्मीयता का एक आदर्श है।

अपने कालेज काम में और सदन-निर्माण काम में अत्यन्त व्यस्त रहते हुए भी प्रूफ देखने और भूमिका आदि लिखने का चि० भूपतिराम ने जो सहयोग दिया उसके लिये अपनी शुभाशिष के साथ भगवान् से सर्वदा उसकी मंगलमय शतायु की प्रार्थना करता हूँ।

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट के विद्वान् अधिकारी श्री अगरचंदजी नाहटा और श्री लालचंदजी कोठारी का विशेष आभारी हूं जिन्होंने इन्स्टीट्यूट की ओर से इसे ऐसे सुन्दर रूप में प्रकाशित करने के लिये अपना अमूल्य योग दिया।

कार्य भार और अन्य कई विवशताएं होते हुए भी श्री साधना प्रेस, रतनगढ़ के अधिकारियों ने मथुरा के अधूरे मुद्रण काम को अपने हाथ में लेकर पूरा करने का जो सहयोग दिया, उसके लिये वे धन्यवाद के पात्र हैं।

साकरिया-सदन
वल्लभ विद्यानगर
(गुजरात)

निवेदक
प्रा. बदरीप्रसाद साकरिया

कर्म कांड

श्री हरिरस

मगलाचरण

१. श्री सरस्वती-गणपति वन्दना

दूहो

सरसति स्नेहे हो जपा, गणपति लागा पाय ।
ईसर ईस अराधवा, सदबुध करो सहाय ।1।

श्री सरस्वती का स्नेह पूर्वक स्मरण और श्री गणपति के चरणों का वन्दन करके मै (ईश्वरदास) प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझे सद्‌बुद्धि देकर ईश्वर आरावना मे मेरी सहायता करिये ॥१॥

गाथा

रिध-सिध दियण कोयलाराणी
वाळा बीजमत्र ब्रहमाणी
वयण-जुगति द्यो अवचळ वाणी
पुणा कीत जिम सारगपाणी ।२।

ऋद्धि-सिद्धि की देने वाली हे कोकिलारोहिणी देवी भगवती ! आप ही वालस्वरूप, बीजमत्र और ब्रह्माणी (प्रणव स्वरूप, गायत्री और सरस्वती) है। आप मुझे युक्ति युक्त और अविचल वाणी प्रदान कीजिये, जिससे मै सारगपाणि भगवान् विष्णु की कीर्ति का वर्णन कर सकू ॥२॥

२. श्रीगुरु वन्दना

दूहो

लागां हों पहला लळे, पीतांबर गुरु पाय ।
भेद महारस भागवत, पायो जेण पसाय ।३।

मै (ईश्वरदास) सर्व प्रथम अपने गुरुदेव श्री पीताम्बरदासजी के चरण-कमलों में झुक कर प्रणाम करता हूँ, जिनकी कृपा से श्रीमद्भागवत में वर्णित (हरि चरित्र के परमानन्दकारी) महान् रस के रहस्य को प्राप्त कर सका हूँ ।।३।।

३. कथारम्भ स्तुति

दूहो

भगतवछळ ! मो दे भगति, भांज परा सह भ्रम्म ।
मूझ तणा क्रम मेटवा, कथां तुहाळा क्रम्म ।४।

(ईश्वरदास कहते है कि) हे भक्तवत्सल ! मेरे समस्त संशय मिटाकर मुझे आपकी भक्ति का दान दीजिये, जिससे मैं अपने (शुभ और अशुभ) कर्मो का नाश करने के लिये आपके चरित्रो का वर्णन करूं ।।४।।

पीठ-धरण धर पाटली, हर-उत लेखणहार ।
तउ तोरा चरितां तणों, परम न लब्भै पार ।५।

समस्त पृथ्वी तल की यदि पाटी बना ली जाय और उस पर श्री गणेशजी स्वयं लिखने वाले हों ; तो भी हे परम प्रभो ! आपके चरित्रों का पार नही पाया जा सकता ।।५।।

तो अै हो पूरा तवण, सका केम समराथ ।
चत्रभुज ! सह थारा चरित, निगम न जाणं नाथ ।६।

तो फिर हे चतुर्भुज प्रभो ! मैं उन्हें वर्णन करने में सपूर्ण-तया समर्थ हो कैसे हो सकता हूँ ? हे नाथ ! जिन आपके समस्त चरित्रो को वेद भी तो नही जानते ॥६॥

कथा केम ईसर कहै, खाण सकळ प्रत खेत ।
वयण स्रवण ना मन वसै, निगम अगोचर नेत ।७।

ईश्वरदास कहते हैं कि मैं उस परब्रह्म का कथन कैसे करूँ जो कि स्थूल, सूक्ष्म और कार्य-कारण समस्त सृष्टि रूप सकल खानि के प्रति आधार हैं। और जो न तो वाणी द्वारा वर्णन किया जा सकता है, न कानो से सुना जा सकता है और न मन से मनन किया जा सकता है (जो न तो वाणी का न श्रवण का और न मन ही का विषय है)। जिसकी साक्षी शाश्वत वेद अगोचर और नेति-नेति कहकर देते हैं ॥७॥

देव ! कमी उपमा दिया, तै सरज्या सह कोय ।
तो सारीखो तु हिज है, अवर न दूजोहोय ।८।

इसलिये हे प्रभो ! आपकी महिमा का वर्णन करने के लिए ससार में कोई वस्तु ऐसो नहीं जिसका उपमा आपको दी जाय, क्योंकि उपमा देने योग्य ससार के जड-चेतन आदि समस्त पदार्थ आपही ने रचे हैं जो कि नाशवान् होने के कारण अपूर्ण हैं। इसलिए यही कहना ठीक होगा कि आपके समान तो आप ही हैं, दूसरा हो ही नही सकता ॥८॥

आभ विछूटा मांणसां, हैं धर झल्लणहार।
धरणीअर ! धर छंडतां, असहां तू आधार।९।

अन्तरिक्ष से बिछड़े हुए प्राणियों को आपका माया रूप संसार (पृथ्वी)धारण करने वाला है, परन्तु हे पृथ्वी को धारण करने वाले धरणीधर ! संसार (पृथ्वी) को छोड़ते समय हम समस्त जीवों का आश्रय तो केवल आप ही हैं ॥९॥

नारायण ! हों तुझ नमां, इअ कारण हरि ! अज्ज।
जिअ दी ओ जग छंडणों, तिअ दी तोसूं कज्ज।१०।

इसलिये हे नारायण ! जिस दिन यह संसार छोड़ना है उस दिन आप ही से काम है। अतएव हे हरि ! आज ही से मैं आपकी आराधना प्रारम्भ कर देता हूँ ॥१०॥

छंद विअखरी

माहरा करम मेटवा माधव
क्रम हों कथित तुहारा केसव
नांम तुहाळो हों घणनांमी
सासोसास संभारिस सांमी।११।

हे असंख्य नामों वाले माधव ! मेरे कर्म बंधनों का नाश करने के लिए श्वास प्रति श्वास तेरा सुमिरण करता हुआ तेरे पावन चरित्रों का इस हरिरस ग्रंथ में, मै वर्णन करूँगा ॥११॥

---

४. अवतार नामावलि

छंद त्रिभंगी

ग्रखभ कपिल हयग्रीव विसभर
दत्तात्रय हरि हस दमोदर
राय-विकुठ धनतर रिक्खभ
गरुडारुढ प्रथू प्रसनीग्रभ ।१२।

मच्छ कच्छ वाराह महम्मण
नारसिंघ वामन नारायण
दुज्जराम रघुराम दिवाकर
किसन बुद्ध कलकी करुणाकर ।१३।

नारद व्यास वद्रीनारायण
परम निरजण मुक्त सुपायण
वळि अवतार तुही वळि वधण
भक्त तणा धरिया दुखभजण ।१४।

हे विश्वम्भर ! आपने दीनो और भक्तो के कष्ट मिटाने के लिये वृपभ, कपिल, हयग्रीव, दत्तात्रय, हरि, हस, दामोदर, वेकुण्ठपति विष्णु, धन्वन्तरि, ऋषभ, गरुडारुढ, पृथु, पृश्निगर्भ, (ध्रुव नारायण, श्रीकृष्ण), मच्छ, कच्छ, वाराह, नृसिंह, वामन, नर-नारायण, परशुराम, सूर्यवशी श्री रामचद्र, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि, नारद, व्यास, परम निरजन और मुक्तिदाता श्रीबदरीनारायण और वलि का अवतार धारण कर स्वय वलि

को वामन रूप द्वारा बाँधना—ऐसे अनेक अवतार धारण किये। (अथवा नारद, व्यास और बदरीनारायण इत्यादि सब से परे निरंजन (निर्गुण) भाव से अपने भक्तों को मोक्ष देने के निमित्त ये सब अवतार आपने धारण किये। और हे भक्तों को बल बँधाने वाले ! आपने अनेक अवतार धारण कर भक्तों के दुःखों को अनेकविध नष्ट किया है ॥१४॥) ॥१२-१३-१४॥

जग अवतार नमो जगदीसर
अनत रूप धारण तन ईसर
तविजै हरि अवतार तुहारा
सदगत लहि छूटै संसारा ।१५।

यज्ञ का अवतार धारण करने वाले हे जगदीश्वर ! आपको नमस्कार है। आप अनंत रूप और शरीरों में अनन्त अवतार धारण करने वाले है। जिनका वर्णन करने से संसार के बन्धनों से छुटकारा होकर सद्गति की प्राप्ति होती है ॥१५॥

५. अवतार चरित्र

छंद मोतीदाम

विसव्व वणाविय केतिक वार
ब्रहम्माय हाथ दियो वहवार
आपोपिय इंछाय आप अलक्ख
लिया अवतार चुरासिय लक्ख ।१६।

प्रभो ! आपने अनेकों बार विश्व की रचना की और प्रत्येक वार उसके उत्पत्ति-क्रम का व्यवहार (व्यापार) ब्रह्माजो

को सौंप दिया। और फिर आपने ही उसमे अपनी इच्छा से अलक्षित रूप द्वारा चौरासी लाख योनियों मे अवतार धारण किये ॥१६॥

हुओ दिगमूढ ब्रह्मम्माय देख
अजपाय दाखव रूप अलेख
सनक्क सनातन गात सुरीन
चिताविय ब्रह्माय हंस चरीत ।१७।

अजपा जाप द्वारा जपने योग्य आपके इस अलख रूप को अपनी सृष्टि मे इस प्रकार देखकर ब्रह्मा दिङ्मूढ हो गये। उस समय आपने सनक सनातन आदि मानस पुत्रों के (रूप मे) और हंसावतार धारण किये और उनके संशय को मिटाकर उन्हे सचेत किया ॥१७॥

सुतो वड-पान समाध समद
माया सव सावट वाळमुकद
उपन्नाय दाणव दोय अजीत
भजे सव देव हुआ भयभीत ।१८।

विराट विश्व की सब माया को समेट कर प्रलय-समुद्र के बीच वट पत्र पर समाधि लगाकर आप बालक रूप मे सो गये। उस समय मधु और कैटभ नामक दो अजय दैत्य उत्पन्न हुये जिनसे भयभीत होकर देवता लोग इधर-उधर भागने लगे ॥१८॥

पुकारत आय तु पास परम्म
उचार विसन्न! कहे सुर अम्म

प्रमेसर सांभळ देव पुकार
विधूंसण सज्ज हुओ तिहि वार ।१६।

देवताओं ने आपकी शरण में आकर पुकार की कि, हे परमेश्वर विष्णो ! आप हमें बचाइये । उनकी पुकार सुनते ही आप उनका नाश करने से लिए तैयार होगये ॥१६॥

विहांसूं हि हेकण लीधिय बाथ
निरोहर मांहि कियो जुध नाथ
बिहूं मधु कीट यसा वळ-वुद्ध
जिता तैं दांणव बाहुव - जुद्ध ।२०।

महावली मधु और कैटभ दोनों को समुद्र के अन्दर एक ही बाँह में पकड़कर उनसे वाहु-युद्ध करके आपने उनको जीत लिया ॥२०॥

दईतां आगळि देव दतार
उबारिय देव किताइक वार
करेवाय देव तणा वड कांम
रह्यौ विच देत महाजळ राम ।२१।

इस प्रकार कई वार दैत्यों द्वारा सताये जाने वाले देवताओं को आपने छुड़ाया और उनके वड़े-बड़े कार्य सिद्ध करने के निमित्त अथाह समुद्र के अन्दर प्रवेश कर दैत्यों के मध्य हे राम ! आप इस प्रकार लीला करते रहे ॥२१॥

महागिड़ पैठ महाजळ सज्झ
किता जुध कीध प्रिथव्विय कज्ज

प्रिथव्विय जातिय रेस पयाळ
दढा ग्रहि राखिय दीनदयाळ ।२२।

दीनो पर दया करने वाले हे वाराह भगवान् ! जब दैत्य लोग पृथ्वी को पाताल मे ले जारहे थे तब आपने वाराह अवतार धारण कर उसको अपने दाँतो के ऊपर धारण करके उसकी रक्षा की। इस प्रकार कई वार महा-सागर मे घुम कर इस पृथ्वी की रक्षा के लिए दैत्यो से कितने ही वडे वडे युद्ध किये ॥२२॥

रखी धर वार किता तै राम
सजै हिरणाख विसै सगराम
अकासय वार किता तै आव
वसाविय त्रीपुर अम्रित वाव ।२३।

कितनी वार हिरण्याक्ष के साथ सग्राम करके आपने पृथ्वी की रक्षा की और कितनी ही वार अन्तरिक्ष से आपने अमृत वर्षा द्वारा त्रिलोकी को वसाया ॥२३॥

वेदा रीय व्हार करी कई वार
मुधी लड कीध दईत सँघार
विमोहिय रूप अगाध वणाय
जटाधर काज दईत जळाय ।२४।

कितनी ही वार दैत्यो का सहार करके उनसे वेदो की रक्षा की और भगवान् शकर के लिए अत्यन्त सुन्दर मोहिनी रूप धारण कर भस्मासुर दैत्य को जला डाला ॥२४॥

उसे अपने ही वचनों द्वारा बाँध कर पाताल में चले जाने के लिए विवश किया। इस प्रकार ऐसे कई बनाव बनाकर आपने दानवों का नाश किया ॥३०॥

भगीरथ भेख भयौ तु, भुगोळ
करंतिय आंणिय गंग किलोळ
किताइक वार नरां सुख कीध
दया करि देव त्रिविस्टप दीध ।३१।

कितनी ही बार भगीरथ के रूप में हे देव ! पृथ्वी पर कल्लोल करती हुई गंगा को आप दया करके ले आये जिससे सहज ही प्राणीमात्र को स्वर्ग सुख का अधिकारी बना दिया ॥३१॥

हुआ असुरांण तणा हलकार
पुणै जमदग्न मुखंत पुकार
आयौ तिहि वार फरस्सउ धार
सहस्सरबाहुव सेन सँघार ।३२।
खत्री वँस वार किताइक खेस
प्रिथव्त्रिय विप्रन कूं दिय पेस
जिपै तैं बार किता बळि जंग
रखावण तात जनेताय रंग ।३३।

असुरों के आक्रमण करने पर जब यमदग्नि ने आपको पुकारा, आपने तब परशु धारण कर सेना सहित सहस्रबाहु का संहार कर डाला। कितनी ही बार अपने माता-पिता की आज्ञा

का पालन करने के लिए वडे-वडे पराक्रमी राजाग्रो को जीत कर एव कितने ही क्षत्री-वशोका नाश करके उनके राज्य ग्रौर उनकी पृथ्वी ब्राह्मणो को दान करदी ॥३२–३३॥

धरै नर देह अजोधिया धाँम
राजा दसरत्थ तणै घर राम
अनत विसामित्त राम अणाय
सजै रिख जाग सकाज सहाय ।३४।

सुवाहु मरीच ताडीका सँघार
महारिख कीध निसक मुरार
जनक्क तणै वळि आविय जाग
भुतेम धनूस भँग्यो वड भाग ।३५।

किधौ रव घोर महेस कोदड
व्रवै तिरलोक डर्‌या वळवड
आयौ रिख कोप चवत अँगार
तज्यौ वळ चाप हुओ दुज त्यार ।३६।

ग्रयोध्या मे महाराज दशरथ के घर ग्रापने मनुष्य देह धारण किया। वहाँ ग्रापके उस राम ग्रौर लक्ष्मण रूप को महाराज दशरथ से महर्षि विश्वामित्र ग्रपने यज्ञ की रक्षा के लिए माँगकर ग्रपने साथ ले ग्राये। ग्रापने सुवाहु राक्षस ग्रौर ताड़िका राक्षसी को मार ग्रौर मारीच को भगाकर हे राम! विश्वामित्र ऋषि को ग्रापने निर्भय कर दिया। वहाँ से राजा जनक के यज्ञ मे ग्राकर हे महाभाग! ग्रापने शिवजी के धनुष को तोडा।

भगवान् शंकर के महा कठोर धनुष के टूटने से घोर शब्द हुआ जिससे तीनों लोक चकित हो गये और बड़े-बड़े शक्तिशाली भयभीत होगये। महर्षि भगवान् परशुराम क्रोधाग्नि बरसाते हुए वहाँ आये किन्तु आपके पूर्ण कलामय ब्रह्मस्वरूप का परिचय पाकर उसमें शान्त होगये। और अपनी अदृश्य माया शक्ति को आपकी अनिर्वचनीय ब्रह्म-शक्ति में प्रविष्ट कर मात्र अपने ब्राह्मण रूप में शेष होगये एवं अपना धनुष आपको अर्पण कर दिया ॥३४-३५-३६॥

वुओ वर व्यात्र वुछाव विसेस
धायै जहँ देव दिनेस धनेस
कुवुद्धि किकेइ कुमंत किवेव
सिया वन रांम अनंत सिवेव ।३७।

हे राम ! धनुष के टूटने पर आप चारों भाइयों का श्रेष्ठ विवाहोत्सव सम्पन्न हुआ। आपके सूर्यवंश में अवतीर्ण होने के गौरव से गर्वित और लालायित होकर इस अनुपम विवाह को देखने के लिए आपके वडेरे भगवान सूर्यदेव स्वयं और अपने दिव्य और अतुल वैभव को नगण्य समझते हुए देवताओं के कोषाध्यक्ष कुबेर एवं अन्य समस्त देवता लोग मनुष्य रूप धारण कर वहाँ आये। आपके राज्यतिलक के समय मन्थरा दासी की खोटी मति से प्रेरित होकर कैकेयी ने कुबुद्धि की जिसके कारण आपको लक्ष्मण और सीता सहित चौदह वर्ष का वनवास हुआ ॥३७॥

मिळै उर रांम किधौ गुह मीत
पखाल कुटंब किधौ सु प्रवीत

विरूप किधी सुपणेखाय वन्न
तदो खरदूख वछोड़िय तन्न ।३८।

वहां आपने जो कार्य किये वे वडे विचित्र है—गगा पार करते समय गुह निपाद को अपना मित्र वनाकर उसे अपने हृदय मे लगाया। निपादराज गुह ने आपके चरणोदक को पान कर अपने कुटुम्ब को पवित्र किया। आपको वरण करने को आई हुई सुपनखा राक्षसी के नाक-कान काट कर उसे कुरूप कर दिया इस कारण खर और दूपण आप पर चढ आये जिनको भी आपने मार दिया ॥३८॥

हरी महम्माय धर्‌यौ छळ हाव
मिळे हनूमान महावळ माव
विँधे सत ताड पमँ कपि बोध
जदी विहुँ भ्रात भिडै महा जोध ।३६।

रहसिय वाळि स किसकँध-राय
किधौ अद मीत सुग्रीव सकाय
उपाड वँधाड समदर ओड
कपी सम नील जके दु करोड ।४०।

धरी दध पाज महा नग धार
पदम्म अढार उतारिय पार
पड्यौ वळि आय वभीखण पाय
लिधौ तिहि राघव कठ लगाय ।४१।

कितावर पांडव ऊपर कीध
लाखाग्रह हूंत उगारिय लीध ।४५।

और उसका राज्य उग्रसेन को देकर यदुवश का कार्य सिद्ध किया। पाँडवों पर आपने कितने ही उपकार किये। उनको लाखागृह से बचाया ॥४५॥

दुसासण द्रोण गंगेव द्रजोण
खपै कुरखेत अढार अखोण
किता तैं सेवग सारण काज
रच्यौ हथणापुर पांडव राज ।४६।

कितने ही भक्तों के कार्य सिद्ध करने के लिये दुशासन द्रोणाचार्य भीष्म और दुर्योधन आदि और उनकी अठारह अक्षौहिणी सेना का नाश करवा कर हस्तिनापुर में पांडवों का राज्य स्थापित करवाया ॥४६॥

जळा चख जाळिय काळजवन्न
किधौ मुचकंद निमित्त क्रिसन्न
बांणासुर छेद भुजा बळवंत
किधी जगजीत लखम्मिय-कंत ।४७।

हे श्रीकृष्ण ! कालयवन के नेत्रों की ज्वाला से जलाने के लिये मुचुकुन्द को आपने निमित्ति बनाया बलवान बाणासुर की भुजाओं का छेदन कर हे लक्ष्मीपति ! आपने विश्व विजय की ॥४७॥

धरै तुम वार किता हर ध्यांन
ग्रहावण लोक अनोअन ग्यांन

भिदै कई वार असूर अभग
जुगोजुग कीध किताइक जग ।४८।

और हे श्रीकृष्ण ! कितनी ही वार स्वर्ग-पाताल आदि लोको मे ज्ञान प्रदान करने और उनके परस्पर के ज्ञान की प्राप्ति के निमित्त आपने अनादि और अयोनि रूप सच्चिदानद भगवान् श्रीशकर का ध्यान किया और अपनी नियमित पूजा के समय नियत कमल पुष्पो की सख्या में एक कमल की कमी होजाने के कारण अपने कमल रूप नेत्र को निकाल कर अर्पण कर दिया। भगवान् शकर ने प्रसन्न होकर अपना सर्वोपरि और प्रिय अस्त्र सुदर्शनचक्र और त्रिभुवन मोहिनी सिद्धियो का आपको वरदान दिया जिससे युग २ मे कितने ही युद्ध करके नाश नही हो सकने वाले असुरो का नाश किया ॥४८॥

गुआळा सहेत रखी तैं गाय
महादुख हूत छुडाविय माय
जळनाय उत्तरा ग्रभ्भ मँझार
अनत परीखत संत उगार ।४६।

ग्वालो सहित आपने गायो की रक्षा की। माता देवकी को कस के महादु खो से छुडाया। हे अनन्त ! उत्तरा के गर्भ मे सतप्त परीक्षित् जैसे सत का उद्धार करके ॥५०॥

निरभ्भय कीन अभँमन नार
मिळाविय गोप अक्रामुर मार
जिवाडिय नार तणी जयदेव
ग्रही चक्र राखिय पत्त गगेव ।५०।

आपने अभिमन्यु की स्त्री को निर्भय कर दिया । नरकासुर को मारकर गोपियों को गोपों से मिला दिया । भक्त जयदेव की मृत स्त्री को आपने जीवित कर दिया । चक्र को धारण करके भीष्म की प्रतिज्ञा को रखा ॥५०॥

पंचालिय सांभळ दीन-पुकार
उवारिय लाज विखम्मिय वार
पुरै परिधांन इको न सहस्स
रमापति ! तोर अभूत रहस्स ।५१।

द्रौपदी की दीन पुकार को सुनकर के उसके एक वस्त्र के स्थान पर सहस्रों वस्त्रों की पूर्त्ति कर आपने उसको विषम स्थिति में लाज रखली । हे रमापति ! आपका रहस्य बड़ा अद्भुत है ॥५१॥

वछोडिय रुद्र कपाळ ब्रहम्म
किधौ सुकदेव अतीत करम्म
उगारिय स्राप थकी अमरीख
सदा किय सेवक आप सरीख ।५२।

ब्रह्मा का सिर काटने पर रुद्र को ब्रह्महत्या से मुक्त किया । शुकदेव को कर्म वन्धन से मुक्त किया । भक्तराज अम्बरीष को महाक्रोधी दुर्वासा ऋषि के शाप से बचाया और अपने भक्तों पर दया करके आपने उनको अपने समान बना दिया ५२॥

---

८. अवतार-स्तुति

छंद मोतीदाम

असखय तूझ तणा अवतार
ब्रह्म्म स रुद्र लहै न विचार
नमो सनकादिक स्याम सरीर
नमो वय पच ग्रखे चत्र वीर ।५३।

प्रभो ! आपके अगणित अवतार है जिनकी गिनती ब्रह्मा और रुद्र भी नही कर सकते । नित्य पाँच वर्ष की आयु वाले श्याम शरीर (भगवत् स्वरूप) को धारण किये हुये सनकादिक चारों भ्राताओ को नमस्कार है ॥ ५३ ॥

नमो मही-साह वराह समत्य
नमो हिरणाख हत्यौ निज हत्य
नमो मछ स्रग मँडाण मुकद
नमो कळि रा सह दैत निकद ।५४।

पृथ्वी को अपनी दाढो मे रखकर हिरण्याक्ष को अपने हाथो मे मारने मे समर्थ वाराह भगवान आपको नमस्कार है। कल्प के छठे चाक्षुप मन्वन्तर के प्रलय काल मे समुद्र मे डूबी हुई पृथ्वी को अपने सींग से बाँधकर हे मत्स्य भगवान् ! आपने उसकी रक्षा की । ऐसे माप रूप दैत्यो का नाश करने वाले हे मुकुन्द ! आपको नमस्कार है ॥ ५४ ॥

नमो हयग्रीव निगम्म सहेत
नमो खळ मार हयानन खेत
नमो विध ! वेद समापण त्रिध्ध
नमो सुर काज करे हरि सिद्ध ।५५।

भगवान् हयग्रीव आपको और आपके द्वारा निर्गत स्वारा-मय वेदों को नमस्कार है। रणक्षेत्र में दुष्ट हयग्रीव दैत्य को मारने वाले हे प्रभु ! आपको नमस्कार है। मधु दैत्य को मारकर आपने वेदों को ब्रह्मा के अधीन किया और देवताओं के कार्य सिद्ध किये। ऐसे हे महान् (विधि-) विधान आपको नमस्कार है ॥५५॥

नमो तन हंस त्रिलोकिय तात
नमो विध ग्यांन सुणावण वात
नमो प्रहळाद उगारण प्रम्म
नमो अगकासब मारण ग्रम्म ।५६।

हे त्रिलोकी के पिता ! ब्रह्मा को वेदों का ज्ञान सुनाने वाले आपके हंसावतार को नमस्कार है। हिरण्यकशिपु को मर्म-स्थान से मारने वाले और प्रह्लाद का उद्धार करने वाले भगवान् नृसिंह आपको नमस्कार है ॥५६॥

नमो कमठा धर रूप सकाय
नमो मँदराचळ पीठ भ्रमाय
नमो हरि आप धनंतर होय
नमो सब रोग निवारण सोय ।५७।

मदराचल पर्वत को अपनी पीठ पर भ्रमण कराने वाले दीर्घकाय भगवान् कूर्म आपको नमस्कार है। समस्त रोगों का निवारण करने वाले भगवान् धन्वन्तरि आपको नमस्कार है ॥ ५७ ॥

नमो ध्रम देह विसभर धार
नमो मध व्यापक सोय मुरार
नमो वळि-वांधण रूप वावन्न
नमो भर तीन पगा त्रिभुवन्न ।५८।

समस्त सृष्टि मे धर्म रूपी शरीर द्वारा व्यापक होकर समस्त विश्व का भरण पोषण करने वाले हे विश्वम्भर ! आपको नमस्कार है। धर्म मय ब्राह्मण रूपी वामन शरीर धारण करके त्रिभुवन को त्रिपाद द्वारा नाप कर वलि को बाधने वाले हे मुरारि ! आपको नमस्कार है ॥५८॥

नमो त्रय रूप दतात्रय देव
नमो जप तप्प स ध्यान अजेव
नमो जग आद-पुरक्ख जगीस
नमो अवतार असख अधीस ।५६।

जप, तप और ध्यान में अजेय तथा ब्रह्मा, विष्णु और महेश इन तीनो के एक रूप दत्तात्रय भगवान् आपको नमस्कार है। जगत् के आदि पुरुष (आदि कारण), जगत के ईश्वर, जड चेतनात्मक अथवा अनन्त विभूति मय अवतारो के अधीश्वर हे यज्ञ भगवान् ! आपको नमस्कार है ॥५६॥

नमो नर-नारण जोग निवास
नमो दुख हूंत उगारण दास
नमो गज तारण मारण ग्राह
नमो व्रज काज सुधारण वाह ।६०।

अपने दासों का दुःख से उद्धार करने वाले, निरंतर ध्यानावस्थित रूप भगवान् नर-नारायण ! आपको नमस्कार है। ग्राह को मार कर गज को तारने वाले ! आपको नमस्कार है। व्रजवासियों के काज सुधारने वाले ! आपको नमस्कार है। आपको धन्य है ।।६०।।

नमो धर ध्यांन हरी निरधार
नमो मनसा ध्रुव पूर मुरार
नमो पुन भूपत प्रित्थू पुनीत
नमो अवनी अघ मेट अनीत ।६१।

अचल ध्यान धरने वाले भक्त ध्रुव की इच्छा को पूर्ण करने वाले हे हरि ! आपको नमस्कार है। पृथ्वी का पाप और अनीति का नाश करने वाले आपके पुनीत 'पृथु' नामक नृप रूप को नमस्कार है ।।६१।।

नमो रिख तापस रूप रिखंभ
नमो अवतार उदार असंभ
नमो कपिलेसर दिस्ट करूर
नमो सुत-सग्र जळावण सूर ।६२।

असम्भव उदारवृत्ति वाले आपके तपस्वी और ऋषि रूप भगवान् ऋषभदेव को नमस्कार है। अपनी क्रूर दृष्टि द्वारा महाराज सगर के साठ सहस्र पुत्रो को भस्म कर देने वाले कपिल भगवान्! आपको नमस्कार है ॥६२॥

नमो रिख जामदगन्न सुरीस
नमो किय वार नछत्री इकीस
नमो रण रामण मारण राम
नमो किय सिद्ध वभीखण काम ।६३।

इक्कीस वार पृथ्वी को क्षत्रियो से रहित कर देने वाले देवताओ के ईश भगवान् परशुराम! आपको नमस्कार है। रावण को रण मे मारकर विभीषण का कार्य सिद्ध करने वाले भगवान् राम! आपको नमस्कार है ॥६३॥

नमो कन्ह रूप निकदन कस
नमो व्रजराज नमो जदुवस
नमो प्रम संत गऊ प्रतपाळ
नमो दुसटा-दळ दीनदयाळ ।६४।

कस का सहार करने वाले व्रजराज-यादव श्रीकृष्ण रूप! आपको नमस्कार है। अपने परम भक्त सतो और गौओ का प्रतिपालन करने वाले, दीनो पर दया करने वाले और दुष्टो का दलन करने वाले! आपको नमस्कार है ॥६४॥

नमो भत्र बोध भये भगवान
नमो ग्रहि जोव-दया उर ग्यान

नमो वेदव्यास निगम्म वखांण
नमो पह कीध अढार पुरांण ।६५।

जीवदया और ज्ञान को धारणकर उसका संसार को प्रतिबोध देने वाले भगवान् बुद्ध ! आपको नमस्कार है। वेदों की व्याख्या रूप अठारह पुराणों को रचने वाले भगवान् वेदव्यास ! आपको नमस्कार है ।।६५।।

नमो इळ मेटण पाप अपार
नमो वरताविय सतजुग वार
नमो निकळंकिय नाथ नरेह
नमो कळि काळख नास करेह ।६६।

कलिकाल में पृथ्वी पर फैले हुये अपार कलुषित आचार-विचार और पापों का नाश कर पुनः सतयुग को प्रवर्त करने वाले कल्कि भगवान् ! आपको नमस्कार है ।।६६।।

नमो अवतार अनंत अपार
नमो पढ सेस लहै नहिं पार
नमो अतुळीबल तात-अनंग
नमो निरवांण नमो निरळंग ।६७।

हे अनन्त ! हे मोक्षरूप ! हे कारण से रहित ! हे अतुलित शक्ति सम्पन्न ! और हे कामदेव के पिता श्रीकृष्ण ! आपको नमस्कार है। आपके अपार अवतार हैं जिनका भगवान् शेष भी पार नहीं पा सकते ।।६७।।

नमो प्रति सूरज कोट प्रकास
नमो वन माळिय लील विलास
नमो लख कद्रप लावण-तन्न
नमो मनमोहन रूप मदन्न ।६८।

करोडो सूर्य के समान प्रकाशमान्! आपको नमस्कार है। लीला विलास करने वाले वनमाली! आपको नमस्कार है। कामदेव को भी मोहित करने वाले लाखो कामदेवो के समान जिसका रूप और लावण्य है वह कामरूप भगवान्! आपको नमस्कार है ।।६८।।

वदन्न हुलासत नेत्र विसाळ
मुगट्ट किरीट अखै गळमाळ
वसत्र सुपीत वपू घनवान
मकराक्रत कुडळ सोभत कान ।६९।
उभै-कर-दूण आवद्ध असख
सारग पदम्म गदा चक्र सख
नमो पच व्रन्न[1] परम्म पुनीत
सितासित पीन सुरत्त हरीत ।७०।

---

१ भगवान् के शरीर में पचवर्ण विद्यमान हैं—
१. श्वेतवर्ण—नेत्र, दात, नख और शख।
२ श्यामवर्ण—शरीर और केश।
३ पीतवर्ण—पीताम्बर।
४ रक्तवर्ण—ओष्ट और हाथो पावो के तल।
५ हरितवर्ण—मयूर पख, दुपट्टा औरचित्त।

(कवि उस त्रिभुवन-मोहिनी रूप का वर्णन करता है-)
आपका मुखारविंद नित्य प्रफुल्लित है, नेत्र विशाल हैं, सिर पर मुकुट किरीट, और गले में वैजयंती अक्षमाला। मेघवर्ण शरीर पर सुन्दर पीत वस्त्र और कानों में मकराकृत कुण्डल धारण किये हुये हैं आपकी चारों भुजाओं में धनुष पद्म, गदा, चक्र, शंख इत्यादि आयुध धारण किये हुये हैं। श्वेत, श्याम, पीत, रक्त और हरित—इन परम पवित्र पाँचों वर्ण वाले प्रभो ! आपको नमस्कार है ॥६९॥७०॥

निरंजण नाथ नमो निकळंक
कळंकिय टाळण साध कळंक
नमो बहुनांमिय माधव बुद्ध
सेवक्क-सधार सदा सिव सुद्ध ।७१।

कल्कि अवतार धारण करने वाले हे निरंजननाथ ! आप निष्कलंक हैं और साधुओं के कलंक को मिटाने वाले हैं। सेवकों के आधार स्वरूप हे बहुनामी माधव ! आपके बुद्ध अवतार को नमस्कार है। आप सदा शुद्ध शिव रूप हैं ॥७१॥

नमो स्रब-कारण तारण सांम
उबारण गोकळ इन्द्र उणांम
नमो जग वंदण जीवण-जद्द
महा विख नाग उतारण मद्द ।७२।

आप सब (सृष्टि) के मूल कारण और सब का उद्धार करने वाले हैं। इन्द्र के उपद्रव से आप गोकुल का उद्धार करने वाले हैं। भयंकर विष वाले काली नाग के मद को दूर करने

वाले ! जगत् के वदनीय ! यादवो के जीवन ! आपको नमस्कार है ।।७२।।

नमो मुर मद्द मरद्दण मल्ल
सँखासुर काळ बकासुर सल्ल
नमो कँस केसि विधूँसण कन्न !
रुकम्मणि-प्रांण पुरक्ख रतन्न ।७३।

मुर नामक दैत्य के मद को मर्दन करने वाले हे मल्ल ! आपको नमस्कार है । शखासुर के साल और बकासुर के काल ! आपको नमस्कार है । हे रुक्मिणी के प्राण ! पुरुषरत्न ! कस और केशि नामक दैत्यो का नाश करने वाले हे श्रीकृष्ण ! आपको नमस्कार है ।।७३।।

नमो प्रम हस सरोवर प्रेम
निरम्मळ गोकळनाथ निगेम
नमो भगता वस गो-भरथार
विसन्न व्रिदावन लील विहार ।७४।

हे निगम स्वरूप गोकुलेश ! मन रूपी मानसरोवर के आप हस हैं और आप ही उसके विशुद्ध प्रेम और ज्ञान के निर्मल स्रोत है । आपको नमस्कार है । हे पृथ्वीपति ! आप भक्तो के वश मे रहने वाले हैं । आपको नमस्कार है । वृन्दावन की पवित्र भूमि पर लीला और विहार करने वाले हे श्रीकृष्ण ! आपको नमस्कार है ।।७४।।

नमो अच्चुतानद गोविंद अज्ज
नमो वरखा हुँतं राखण व्रज्ज

नमो सिध जोगिय संकर सेस
नमो व्रज-ईश नमो नट वेस ।७५।

हे अज ! अच्युतानंद गोविंद ! आपको नमस्कार है। मूसलधार वर्षा से व्रज को रक्षा करने वाले आपको नमस्कार है। आप ही सिद्धयोगो, शंकर और शेष रूप हैं। आपको नमस्कार है। नट का वेष धारण करने वाले हे व्रज के ईश ! आपको नमस्कार है ॥७५॥

नमो तु गोविंद नमो तु गोपाळ
नमो गिरधारिय नंद गुवाळ
नमो बळदेव नमो व्रज वाळ
नमो दुख भंजण दीनदयाळ ।७६।

गौओं का पालन करने वाले हे गोविद ! आपको नमस्कार है। गिरिवर को धारण करने वाले हे नंदग्वाल ! आपको नमस्कार है। हे बल्देव ! हे व्रजबाल ! आपको नमस्कार है। दीनों पर दयाकर उनके दुःखों का नाश करने वाले ! आपको नमस्कार है ॥७६॥

नमो नँदनंद नमो नंदनेस
नमो व्रजचंद नमो व्रजदेस
नमो जदुनाथ बळीभद्र जोड़
रिणायर वास नमो रणछोड़ ।७७।

नंदनंदन ! आपको नमस्कार है। नंदनेश ! आपको नमस्कार है। व्रजचन्द्र आपको नमस्कार है। ब्रजदेश को नमस्कार है। श्रीकृष्ण और बलभद्र की युगल-जोड़ी को नमस्कार है । रण-

छोड कर रत्नाकर समुद्र (रेणु मरोवर) के निकट द्वारका मे जा कर निवास करने वाले हे द्वारकाधीश रणछोड ! आपको नमस्कार है ॥७७॥

नमो पुरुपोतम पूरणब्रह्म
नमो मरजाद अखड निगम्म
नमो सतरुघण भरत सनेह
नमो अवगत्त भगत्त अछेह ।७८।

हे पूर्णब्रह्म पुरुपोत्तम ! आपको नमस्कार है । वेदो की अखड मर्यादा के रूप आपको नमस्कार है । श्री भरत और शत्रुहन के रूप मे जो मूर्त्तिमान स्नेह है, वह आप ही हैं । आपको नमस्कार है । हे अविगत ! आप अपने भक्तो के लिये अनन्त हैं । आपको नमस्कार है ॥७८॥

नमो दुज-पख विजै रथ धज्ज
गुणेह अतीत लखन्न-अग्रज्ज
नमो प्रभू सायर बाधण पाज
नमो रण रावण रोळण राज ।७९।

हे विजय रथ वाले गरुडध्वज ! आपको नमस्कार है । सागर पर सेतु बाध कर रावण और उसके राज्य का नाश करने वाले गुणातीत श्रीराम ! आपको नमस्कार है ॥७९॥

नमो कुंभेण तणा भुज काळ
नमो खळ राखस कुळ खंगाळ
नमो रघुवंस तणा रवि राम
विघूंसण लंक वडा वरियाम ।८०।

कुंभकर्ण की दीर्घ भुजाओं के काल ! आपको नमस्कार है। लंका और उसके दुष्ट राक्षसों के कुलों का नाश करने वाले सर्व-श्रेष्ठ रघुवंश के सूर्य, भगवान् श्रीराम ! आपको नमस्कार है ॥८०॥

नमो दुजरांम दमोदर देव
नमो गुरु द्रोण करण्ण गंगेव
नमो वप वांमण दीरघ वीख
भिखंग पुरंदर भांजण भीख ।८१।

हे परशुराम भगवान् ! आपको नमस्कार है। द्रोणाचार्य, करण और भीष्म जैसों को शिक्षा देने में गुरु रूप हे दामोदर ! आपको नमस्कार है। तीनों भुवनों को अपने दीर्घ चरणोके द्वारा तीन पैंड से नाप कर विचारे इन्द्र के भय को मिटा देने वाले वामन शरीरधारी भगवान् ! आपको नमस्कार है ॥८१॥

नमो नरसिंघ लखम्मीय नार
विसंभर वीठळ आद वराह
नमो मछ माधव कच्छ कुरम्म
पतीत-उधारण देव परम्म ।८२।

हे लक्ष्मीपति ! आपके नृसिंह, विश्वम्भर, विठ्ठल और आदि वाराह अवतारों को नमस्कार है। पतितों का उद्धार करने वाले हे परमेश्वर ! आपके मच्छ, कच्छप और कूर्म अवतारों को नमस्कार है ॥८२॥

नमो गुरु आद प्रसन्निय ग्रभ्भ
नमो रघुराज कपिल्ल रिखभ्भ

नमो गुरु नारद ब्रह्म-गिनान
नारायण जोगिय जोग-निधान ।८३।

आदि गुरु भगवान् पृश्निगर्भ (ध्रुव नारायण) ! आपको नमस्कार है। आपके राम, कपिल और ऋषभ रूपो को नमस्कार है। योगीजनो के लिये योग के भण्डार रूप और नारद को ब्रह्मज्ञान का उपदेश देने वाले सनकादिक रूपधारी हे नारायण ! आपको नमस्कार है ॥८३॥

नमो सिरि मकर भाजण मूळ
मुरार मुकद महातत मूळ
नमो नित नाम अमीय निखात
त्रिवीध अतीत प्रदूमन-तात ।८४।

बाणासुर के युद्ध मे भगवान श्री शकर के पाशुपत्य अस्त्र को काटने वाले हे मुकुन्द ! मुर दैत्य के शत्रु ! मूल महातत्त्व रूप ! आपको नमस्कार है। त्रिविध-अतीत, अमृत की खानि रूप प्रद्युम्न के पिता श्रीकृष्ण ! आपको नमस्कार है ॥८४॥

नमो सुख साध समद मयक
नमो निकळक नमो निरसक
नमो सिसपाळ विहडण नूर
जरासध देवण रेस जरूर ।८५।

समुद्रवत गभीर साधुजनो को सुख देने वाले चन्द्र रूप ! आपको नमस्कार है। नि शक कल्कि रूप आपको नमस्कार है। शिशुपाल और जरासध के प्रकाश को नाश करने वाले ! आपको नमस्कार है ॥८५॥

नमो हयग्रीव निगम्म निखात
बडा कवि ब्रह्म वदै वड वात
नमो प्रिथू रूप प्रताप प्रत्ख्य
नमो वर-लाछ परम्म विरक्ख ।८६।

वेदों की खानि रूप और उनका उद्धार करने वाले भगवान् हयग्रीव आपको नमस्कार है, जिनके द्वारा महाकवि रूप ब्रह्माजी आपके महान् गुणों का वर्णन करते है। प्रत्यक्ष प्रतापी आपके पृथु रूप को नमस्कार है। ससार रूपी परम वृक्ष ! लक्ष्मी के पति ! आपको नमस्कार है ॥८६॥

नमो वर-सीत त्रिभूवण वंद
नमो मधु कीटभ जीत मुकंद
नमो विध लाधण मेटण व्याध
सराप भसम्म उतारण साध ।८७।

त्रिभुवनवंद्य सीता के पति श्रीराम ! आपको नमस्कार है। मधु और कैटभ को जीतने वाले भगवान् ! आपको नमस्कार है। हे आधि-व्याधि के मिटाने वाले और भक्ति-ज्ञान आदि विधियों से प्राप्त होने वाले प्रभो ! आपको नमस्कार है। आप साधुजनों को दिये जाने वाले भस्म हो जाने योग्य भयकर शापों को मिटाने वाले हैं ॥८७॥

नमो मधूसूदण देवण मोख
नमो दत देव विडारण दोख
नमो प्रहळाद उतारण पार
नमो हर संकट-मेटणहार ।८८।

मोक्ष की प्राप्ति कराने वाले हे मधुसूदन ! आपको नमस्कार है। संसार के त्रितापों का नाश करने वाले हे दत्तात्रय ! आपको नमस्कार है। प्रह्लाद की रक्षा करने वाले नृसिंह भगवान् ! आपको नमस्कार है। विकराल नृसिंह रूप की कोपाग्नि द्वारा उत्पन्न संकट से मुक्त करने वाले भगवान शंकर ! आपको नमस्कार है ॥८८॥

नमो ओऽम् रूप नमो ओंकार
नमो अजरामर सेस अवार
नमो अवतार सकाज अवीस
नमो जगताज नमो जगदीस ।८९।

प्रणव रूप ओमकार, अजरामर, शेष के आधार ! आपको नमस्कार है। धर्म, गौ और भक्तों के कारण अवतार धारण करने वाले जगत् के मुकुट श्री जगदीश ! आपको नमस्कार है ॥८९॥

नमो अण-आमय जोत-अखंड
नमो वप कोट वसै ब्रहमंड
नमो अग आणद रूप अतीत
नमो अवधूत अक्रम्म अजीत ।९०।

आपकी माया रूप अंधकार रहित अखण्ड ज्योति को नमस्कार है। करोड़ों ब्रह्मांड जिसके शरीर में निवास करते हैं उस परब्रह्म को नमस्कार है। हे आनंद रूप ! रूपातीत, अजीत, अक्रिय, और अवधूत ! आपको नमस्कार है ॥९०॥

नमो अवधूत उदास अलक्ख
नमो गुरदत्त गिनान गोरक्ख

नमो विगनांन गिनांन विसंभ
थँभावण आभ धरा विण थंभ ।९१।

गोरख को ज्ञान देने वाले, राग रहित, अलख और अवधूत गुरु दत्तात्रय ! आपको नमस्कार है। बिना स्तम्भ के स्वर्ग और पृथ्वी स्थिर रखने वाले ज्ञान और विज्ञान के आधार रूप आपको नमस्कार है ।।९१।।

नमो धरणीधर धारण धीर
नमो भवतारण भंजन भीर
नमो हरिदेव नमो हरि रांम
नमो हरि रूप नमो हरि नांम ।९२।

धैर्य की मूर्त्ति पृथ्वी को धारण करने वाले भगवान धरणीधर आपको नमस्कार है। दुःखों का नाश कर संसार रूपी समुद्र से पार लगाने वाले भगवान आपको नमस्कार है। हे राम ! आपको नमस्कार है। हे हरि ! आपके रूप और नाम को नमस्कार है। ९२।।

नमो हरि रस्स नमो हरि हंस
नमो हरि कांन्ह नमो अरि-कंस
नमो अवगत्त नमो अकळीस
नमो अपरम्म नमो स्रब ईस ।९३।

परम रस रूप हरि ! आपको नमस्कार है। हंसावतार श्री हरि ! आपको नमस्कार है। कंसारि श्रीकृष्ण आपको नमस्कार है। अविगत अकल ईश्वर ! आपको नमस्कार है । हे अप्रमेय सर्वेश्वर आपको नमस्कार है ।।९३।।

नमो निरलेप नमो निरकार,
नमो निरदोस नमो निरधार
निरग्गुण नाम नमो तुव नाथ
सरग्गुण नाम नमो समराथ ।९४।

निर्लिप्त निराकार आपको नमस्कार है। सर्व दोषो से शून्य और अन्य आधार से रहित आपको नमस्कार है। आपके निर्गुण नाम को नमस्कार है और सगुण रूप वाले हे समर्थ ! आपको नमस्कार है ॥९४॥

नमो प्रह्ळाद तणा प्रतपाळ
नमो सस सूरज जोत सिगाळ
नमो करुणाकर रूप कंठीर
नमो वर-लाछ तणा रघुवीर ।९५।

प्रह्लाद की प्रतिपाल करने वाले दया की खानि श्रीनृसिंह भगवान् ! आपको नमस्कार है। सूर्य और चन्द्र की ज्योति को प्रकाश देने वाले हे प्रभु ! आपको नमस्कार है। हे लक्ष्मीपति श्री राम ! आपको नमस्कार है ॥९५॥

नमो नर सदण-हाकणहार
सबै दळ कौरव करण संघार
नमो क्रत काळ तणा दसकध
नमो बहो देव छुडावण वध ।९६।

महाभारत के युद्ध मे सारथी बन कर अर्जुन के रथ को हाक कर समस्त कौरव दल का नाश कराने वाले भगवान्

श्रीकृष्ण ! आपको नमस्कार है। रावण का नाश कर अनेक देवताओं के बन्धन छुड़ाने वाले श्रीराम ! आपको नमस्कार है ॥९६॥

नमो हरि लीलाय उत्तम नांम
सोहं अवतार नमो सियारांम
विसन्न नमो तुझ आद विभूत
को जांणव तूझ तणी करतूत ।९७।

लीलाएं करने को लिये हुये आपके अनेक अवतारों के नामों को नमस्कार है। सोऽहं रूप परब्रह्म का अवतार श्रीराम ! आपको नमस्कार है। हे विष्णु ! आपकी आदि विभूति परब्रह्म रूप को नमस्कार है। आपकी इन करतूतों (चरित्रों) को कोई नहीं जान सकता ॥९७॥

बुझै कुण नाथ तोरा वोह बंग
सकत्त न सीव मुरत्त न लंग
करंताय कालाय-वालाय कीत
चतुरभुज रूड़ीय मांनोह चीत ।९८।

हे नाथ ! आपके इन अनेक रूप और चिह्नों के रहस्यों को शिव और शक्ति कोई नही समझ सकते। इसलिये जैसी तैसी (भोली भाली) विनम्रता युक्त विनती को हे चतुर्भुज ! आप उसे अपने उदार हृदय में भली समझने की कृपा करिये ॥९८॥

॥ ॐ शिव ॥

७. शरीर के समस्त अंगों को भगवान् की पूजा के निमित्त ही काम में लाना और उसी के द्वारा उनके पवित्रीकरण का वर्णन।

छंद त्रिभंगी

अनत उर आरती उतारिस
सोळ-भात पूजा सभारिस
भाव भगति करतो जग-भावन
पतित सरीर करिस इम पावन ।९९।

षोडशोपचार पूजा कर हे अनन्त! हृदय से आपकी आरती उतारूँगा और भावभक्ति के साथ हे जगभावन! मेरे इस अधम शरीर को पावन करूँगा ॥९९॥

मस्तक पवित्र करिस मधुसूदन
वदै चरण तूझ जगवंदन
वेणि निपाप करिस लछमीवर
मस्तक चाढै तुळसी-मंजर ।१००।

हे जगवन्दन! मधुसूदन! आपके चरणों मे नमस्कार कर मै अपने मस्तक को पवित्र करूँगा, और हे लक्ष्मीपति! मस्तक पर तुलसी और उसकी मंजरी चढाकर मैं अपनी शिखा को पवित्र करूँगा ॥१००॥

स्रवण निपाप करिस इम सांमी
गुण तुझ कथा सुणं घणनांमी
भ्रकुटी पवित्र करिम वींसंभर
धारै गोचंदण धरणीधर ।१०१

हे अनन्तनाथ ! आपकी कथा और गुणों को श्रवण करके मै अपने कानों को पवित्र करूँगा और हे विश्वम्भर ! धरणीधर ! गोपीचन्दन धारण कर मैं अपनी भृकुटी को पवित्र करूँगा ।।१०१।।

नयण निपाप करिस नारायण
पेख रूप तुझ भक्त-परायण
नासा-रंध करिस इम निरमळ
प्रभु आघ्रांणै पद रज परिमळ ।१०२।

हे नारायण ! आपके भक्ति परायण रूप का दर्शन कर मै अपने नेत्रों को पाप रहित बनाऊँगा और हे प्रभु ! आपके पदरज की परिमल को सूंघकर मैं अपने नासारन्ध्रों को पवित्र बनाऊँगा ।।१०२।।

अधर पवित्र करिस अहिवारण
मुळकै प्रेमभक्ति मधु-मारण
वांणी पवित्र करिस सीतावर
नित तुव क्रीत प्रकासै नरहर ।१०३

हे नाग को नाथने वाले मधुसूदन ! प्रेम भक्ति की मंद मुसकान द्वारा मैं अपने होठों को पवित्र करूँगा और हे नरहरि !

हे सीताराम ! आपके गुणो का वर्णन करके मैं अपनी वाणी को पवित्र करूंगा ॥१०३॥

रसणा पवित्र करिस इम राघव
भणै तूझ गुण तारण-दव-भव
दसण पवित्र करिस दामोदर
आणद हसै तूझ गिरि-उद्धर ।१०४।

हे राघव ! ससार समुद्र से पार करने वाले आपके गुणो का वर्णन करके मैं अपनी रसना को पवित्र करूंगा और हे दामोदर गिरिधारी ! आपके दर्शनो द्वारा आनन्दित होता हुआ आपके सन्मुख हँसकर मै अपने दांतो को पवित्र करूंगा ॥१०४॥

कठ पवित्र करिस करुणाकर
गायै चरित्र तूझ गोपीवर
मुख इम पवित्र करिस अघमजण
भखै प्रसाद तूझ दुखभजण ।१०५।

हे गोपीवर ! आपके चरित्र गाकर मै अपने कठ को पवित्र करूंगा और हे दु ख और पापो का नाश करने वाले ! आपकी जूठन के महाप्रसाद को भक्षण कर मैं अपने मुख को पवित्र करूंगा ॥१०५॥

पवित्र खभ हो करिस अेणिपर
अ क दिवाड सख्र चक्र ऊपर
पवित्र कध इम करिस महा प्रभ
नमै तूझ चरणै पोहकरनभ ।१०६।

दोनों बाहुओं पर शंख चक्र के चिन्ह धारण करवा कर उन्हे पवित्र करूँगा और हे पुष्करनभ ! आपके चरणों में नमस्कार करके मैं अपने कंधों को पवित्र करूँगा। १०६।।

मन इम पवित्र करिस प्रभु मांरा
त्रीकम नांम धरं उर तांरा
कर वे पवित्र करिस सेवा कर
जोड़ै तुझ आगळै जगत-गुर ।१०७।

आपके नाम को हृदय मे धारण कर हे त्रिविक्रम ! मैं अपने मन को पवित्र करूँगा। आपकी सेवा (पूजा) करके और नम्रता पूर्वक दोनों हाथ जोड़ कर मैं उन्हें पवित्र करूँगा ।।१०७।।

उदर पवित्र करिस अपरमपर
चरणाम्रत तुझ धार चक्रधर
पावन रिदो करिस पुरुषोतम
संच गिनांन तूझ श्रीसंगम ।१०८।

हे चक्रधर ! हे अपरम्पार ! आपके चरणामृत को पान करके मै अपने उदर को पवित्र करूँगा और हे पुरुषोत्तम ! श्रीसंगम ! तेरे ज्ञान को संचय करके (ज्ञान द्वारा आपके और मेरे बीच का भेद मिटाकर) मैं अपने हृदय को पवित्र बनाऊँगा ।।१०८।।

इंद्रिय पवित्र करिस अपरमप्रम
दमै गिनांन तूझ दइतां-दम
चरण पवित्र हों करिस चत्रभुज
त्रिगुणनाथ नाची आगळ तुझ ।१०९।

हे दैत्यो का दमन करने वाले अप्रमेय ! ज्ञान द्वारा इन्द्रियो का दमन करके मैं उनको पवित्र करूँगा। और हे त्रिगुणनाथ ! चतुर्भुज ! आपके सन्मुख नृत्य करके मैं अपने चरणो को पवित्र करूँगा ॥१०६॥

तुचा पवित्र करिस दसरथ-तण
चरचवि लेप केर हरि त्रदण
काय निपाप करिस हो केसव
दडवत करं तूझ दङता-दव ।११०।

हे दशरथ नदन ! आपके चरणो पर चढाये हुये चन्दन को मेरे समस्त शरीर पर लेपन कर मैं अपनी त्वचा को पवित्र करूँगा। और हे दैत्यो का दमन करने वाले केशव ! आपके चरणो मे दण्डवत करके मै अपनी देह को पवित्र बनाऊँगा।११०।

रोम रोम तव नाम रखाविस
इम करतो प्रभु चरणे आविस
मनसा वाचा क्रमणा माही
नरहर तो विण राखिस नाही ।१११।

मेरे मन, वचन और कर्मो का विषय आपके बिना अन्य नही रखूगा। रोम रोम मे आपके नाम को धारण करूँगा और हे नरहरि ! आपके चरणो मे प्राप्त हो जाऊँगा ॥१११॥

विखै ससार तणा वीसारिस
श्रीरग गुण थारा सभारिस
हो म्हारी इद्री सह माधा
वळि-उद्धार ! विखै तो वाधा ।११२।

वलि का उद्धार करने वाले हे माधव ! हे श्रीरंग ! मैंने अपनी समस्त इन्द्रियों को आपके साथ जोड़ दिया है जिससे अब संसार के समस्त विपयों को भुला कर मैं आपके गुणों का स्मरण करता रहूँगा ॥११२॥

आठूँ पहोर अनंत उळाविस
रात दिवस हरि रिदै रखाविस
मांडै पूजा तूझ महणमथ !
सकळ सरीर करिस इम सुक्रियथ ।११३।

हे अनन्त ! रात दिन आपके 'हरि' नाम को हृदय में रखूंगा और आठों प्रहर उल्लास के साथ उसका उच्चारण करता रहूँगा और हे समुद्र को मंथन करने वाले ! आपकी पूजा करता हुआ मैं अपने शरीर के समस्त अंगों को कृतार्थ बनाऊंगा ॥११३॥

गळकासिला सिला–गोमत्ती
मांडै वे संगम मूरत्ती
साळगरांम-सिला सुध सेविस
अगर धूप चंदण ऊखेविस ।११४।

गंडकी और गोमती दोनों के संगम की शुद्ध शालिग्राम शिलाओं की प्रतिष्ठा कर (स्थापित कर) मैं उनकी सेवा करूंगा, चन्दन चढ़ाऊंगा और अगर और धूप खेऊंगा ॥११४॥



उपासना काण्ड

१. ईश वन्दना

दूहो

मनछा डाकण माहरै, राघव ! काढ रुदाह ।
जिअ वन मे केहर वसै, आमै अगला ताह ।११५।

जिम वन मे मिंह रहने लग जाता है उस वन के सभी मृग भयभीत होकर भाग जाते हैं। उसी प्रकार हे राघव ! मेरे हृदय मे वसी हुई वासना रूपी डाकिनी को आप उसमे निवास करके भगा दीजिये ।।११५।।

छद विमखरी

तूझ विमै मत दे ध्रुव-तारण !
कूप-मसार काढ सवकारण !
फेरा घणा भवोभव फरतो
माधव ! राख जनमतो मरतो ।११६।

ध्रुव का उद्धार करने वाले हे माधव ! मुझे ऐसी बुद्धि दीजिये जो आपके स्वरूप मे लगी रहे। हे समस्त जगत् के कारण ! ससार में वार २ जन्म लेने और मरने को मिटाकर मुझे इस ससार रूपी कूप मे से वाहिर निकाल दीजिये ।।११६।।

पाप करतो मो मन पापी
ताहरै नाम जाय सह तापी
नारायण ! तो सम को नाही
चवदै भुवन हुकम चा माही ।११७।

प्रभो ! पाप करने वाले मेरे इस पापी मन के तीनों ताप आपका नाम लेने मात्र से नष्ट हो जाते हैं । प्रभु ! आपके समान कोई नहीं । चौदह ही भुवन एक सूत्र में आपकी आज्ञानुसार चल रहे हैं ॥११७॥

ओ संसार असार अनामी
सार अवार लीजिये सांमी
त्रिभुवननाथ ! नहीं को तोलै
वांह ग्रहो प्रभु ! ईसर वोलै ।११८।

नाम आदि विशेषणों से रहित हे स्वामी ! इस असार संसार में मेरा आपके सिवाय कोई नहीं है। आप कृपा कर मेरी तुरंत सुधि लीजिये। ईश्वरदास कहते है कि हे प्रभो ! हे त्रिभुवननाथ ! आपके समान मेरी रक्षा करने वाला कोई नहीं है। आप मेरी वांह पकड़िये ॥११८॥

दूहो

दीह घणा मांझल दुनी, रुळियो पेखण रूप ।
माहव ! हिवै पमाड़ मो, सिव ताहरो सरूप ।११९।

आपके (अनिर्वचनीय और अगोचर) रूप के दर्शन करने के लिये इस संसार में वहुत दिनों तक इधर उधर भटका, परंतु उसके दर्शन नहीं हुए। हे माधव ! अब आपके उस सर्वव्यापी जन्म-मरण के दुखों से छुड़ाने वाले कल्याण (कारी) शिव स्वरूप के दर्शन कराइये ॥११९॥

छंद त्रिभ्रगरी

मुणा हो ख्यात महारिय मत्त
गोविंद ! न जाणव तोरिय गत्त
भणा भगवान करा गुण भेट
महा ग्रभवास तणा दुख मेट ।१२०।

हे गोविन्द ! मैं आपकी गति-विधियों को तो जानता नहीं फिर भी मैं मेरी मदमति के अनुमार आपके चरित्रो का वर्णन करता हूँ। आपके गुणो को गा कर इन्हे ही आपकी भेट करता हूँ। भगवन् ! आप मेरे गर्भवास (जन्म-मरण) के महान् दुखो को मिटा दीजिये ॥१२०॥

माग्यो हो सरव दियो तैं मूझ
तुहारिय गत्त मागा कन तूझ
मागा मन वाच करम्म मुरार !
नारायण ! जामण अत्त निवार ।१२१।

(मानव शरीर और उसके उपयुक्त) मैंने जो कुछ माँगा, आपने वह मव मुझे दे दिया। अव हे मुरारि ! मन, वचन और कर्म से आपमें आपकी गति को प्राप्त हो जाना मागता हूँ। इसलिये हे नारायण ! मेरे जन्म-मरण को आप मिटा दीजिये ॥१२१॥

इको रसणाह लहा किम अत
पारा नह पामत सेस पुणत
न जाणव तोराय पार नरेस
आदेस ! आदेस ! आदेस ! आदेस ! ।१२२।

जिन आपके चरित्रों का वर्णन करते हुए, शेष जी अपने हजार मुखों की दो हजार जिह्वाओं से भी पार नहीं पाते हैं तो मै एक जिह्वा से उनका कैसे पार पा सकता हूं। हे नरेश ! मैं आपका अंत नहीं जान सकता। आपको वारम्बार प्रणाम है॥१२२॥

छप्पय

कसा करव हों महल, महल गिरिमेर कहावै
कसा गाव हों गुणव, गुणव ज्यां तुम्मर गावै
मेल्हों की धन माल, सिरीजी चरणां आगै
कसा पखाळां पांव, पवित्र नख गंगा लागै
की पुहप चढावां सिर परै, पारिजात व्रख तुझ घरै
राजाधिराज ! की रीझवां, कवि संकर सेवा करै ।१२३।

स्वर्णमय सुमेरु पर्वत के उत्तुङ्ग गिरि शिखर रूप जिसके महल है, उसके लिये मै कौनसा मंदिर बनवाऊं। जिसके गुणों को देवता लोग गा रहे हैं, मैं उसका क्या गुण गाऊं ! लक्ष्मीजी जिनके चरणों में विराज रही है, उसके आगे मैं कौन से धन माल की भेट धरूं। जिसके पवित्र चरणों के नखों को गंगाजी स्पर्श कर रही हैं, उसके चरणों का प्रक्षालन मैं किससे करूं। हे राजाधिराज ! आपके तो घर में ही कल्पवृक्ष है, मैं कौन से पुष्प आप पर चढ़ाऊं और जिसकी सेवा ब्रह्मा और शंकर कर रहे हैं, फिर मैं कौनसी सेवा कर आपको प्रसन्न करूं ? ॥१२३॥

नमो नांम नीगमण, नमो नर सुर नीपावण
नमो गो करण-ग्रहण, नमो थांभा विण थंमण
नमो वेद विसतरण, नमो हव कव्व हुतासण
नमो भुवण भोगवण, नमो निसचर नीझावण

ईसरो भणै असरणसरण, विहड-कस साभळ वयण
जग जाड जीव जामण-मरण, छोड छोड गज-छोडवण १२४

आपके निगम नाम को नमस्कार है। मानव और देव योनि को उत्पन्न करने वाले आपको नमस्कार है! पृथ्वी को उत्पन्न और धारण करके उसको विना आधार के ठहराने वाले आपको नमस्कार है। वेदो का विस्तार करने वाले आपको नमस्कार है! हव्य, कव्य और इनको ग्रहण करने वाले हुताशन रूप आपको नमस्कार है! चौदह भुवनो का पोषण और उनको भोगने वाले आपका नमस्कार है! निशिचरो का नाश करने वाले आपको नमस्कार है! ईश्वरदास कहते हैं कि हे अशरण-शरण! कस निकदन! गज को ग्राह से छुडाने वाले मेरी विनती सुनिये। इस जीव को जगत की जडता, जन्म और मरण से छुडाइये ॥१२४॥

राखै ज्यु त्यु रहा, जिहा निरमै त्या जावा
हुकम तणा वस हुवै, जिको सिरि गिरा जणावा
काम लोभ मद क्रोध, मोह वड सह जग माही
तूं ही मार जिवाड, परम ततर तुव पाही
ध्यान कर नजर तोसूं धरै, सो निवाण जग निरतरै
राजाधिराज! तोरी रजा, ईसर रा सिर ऊपरै ।१२५।

प्रभो! हम प्राणियो को जिस स्थिति में आप रखते हैं उसी स्थिति मे हमे रहना पडता है, जिस जगह पर रहने के

लिये जिस किसी योनि में आप हमारा निर्माण कर देते हैं, वहीं रहने के लिये हमें जाना पड़ता है। और श्रीमुख की आज्ञा के वशवर्ती होकर हमें उन्हीं योनियों की वाणियों में उच्चारण करना पड़ता है। काम, लोभ, मद, क्रोध, मोह आदि कुवासनाएँ (अविद्यायें, संसार की उन सभी योनियों में हम प्राणियों के पीछे लगी रहती है। तू ही मारने वाला और तू ही जिलाने वाला है। यह परम तंत्र तेरे ही पास है। जो प्राणी आपकी ओर दृष्टि लगा कर आपका ध्यान धरता है वही संसार समुद्र से पार हो जाता है। ईश्वरदास कहते है, हे राजाधिराज! जैसी भी आपकी आज्ञा है, मेरे लिये तो शिरोधार्य है ॥१२५॥

छंद मोतीदाम

दाखै कवि सेवक ईसरदास
प्रमेसर टाळिजै जांमण पास
आखै हिव ईसर तेज-अंवार
प्रभूजी! टाळिजै जम्म प्रहार।१२६।

सेवक कवि ईश्वरदास कहते है कि हे परमेश्वर! अब मेरी जन्म-पाश टाल दीजिये। आवागमन की यम-यातनाओं को हे प्रकाशपुञ्ज! हे प्रभु! अब आप निवारण कर दीजिये ॥१२६॥

पयंपत ईसर जोड़िय पांण
क्रपाळ करो हिव मूझ कल्यांण
दिखावउ तूझ अनूप दिदार
संसारह बाहर मांहि संसार।१२७।

साँई ! तूँ ज वडो धणी, था सूं वडो न कोय ।
तू जेना सिर हत्थ दे, सो जग में वड होय ।१३१।

प्रभु ! आप ही सब से बड़े और सबके स्वामी हैं । आपसे बड़ा कोई नहीं है । आप जिसके सिर पर हाथ रख दें वही संसार में बड़ा हो जाता है ॥१३१॥

आलम माहर अवगुणा, साहब¹ तूझ गुणांह ।
बूँद-ब्रखा अर रेण-कण, थाघ न लाधै तांह ।१३२।

जिस प्रकार वर्षा के बिन्दुओं और धूलि के कणों का थाह नहीं लग सकता, उसी प्रकार मेरे औगुण और आपके गुणों का हे विभु ! थाह नहीं लग सकता ॥१३२॥

कल्प वेद सासत्र कथै, सिध साधक सह कोय ।
अन विण त्रपत न ऊपजै, हरि विण मुगत न होय ।१३३।

वेद और कल्प सूत्रादि शास्त्र एवं सिद्ध और साधक इन सभी का यही मत है कि जिस प्रकार अन्न के बिना तृप्ति नहीं हो सकती, उसी प्रकार हरि की प्राप्ति के विना मुक्ति भी नहीं हो सकती ॥१३३॥

अखिल ! तु हिज कै को अवर, बहोनामी ! बुज्झव्व ।
लखमीवर ! लेखा नहीं, समवड़ प्रांणी स्रव्व ।१३४।

हे बहुनामी अखिलेश ! मै आप से पूछता हूँ कि आपके समान आप ही है या कोई दूसरा भी है । हे लक्ष्मीपति ! प्राणियों में तो आपकी समानता करने वाला मुझे तो कोई नही दिखाई देता ॥१३४॥

कदी हुवो ईसर कहे, कुण जायौ करतार ।
ब्रह्मा रुद्र विचार वड, पामै निगम न पार ।१३५।

ईश्वरदास कहते हैं कि इस जगत् का कर्त्ता कब हुआ और किसने उसको उत्पन्न किया ? इनका विचार करने मात्र से ब्रह्मा और रुद्र को भ्रम उत्पन्न होता है और वेद तो इसका पार ही नही पाते ॥१३५॥

छद मोतीदाम

ब्रहम्मा विचारत रुद्र वडम्म
न पावत तोराय पार निगम्म
प्रमेस्सर तूझ न पार पडोय
कुराण पुराण न जाणत कोय ।१३६।

उस परब्रह्म परमेश्वर का ब्रह्मा और रुद्र विचार करते है । वेद, पुराण और कुरान पच-पच कर हार गये परन्तु वे उसका पार नही पा सके ॥१३६॥

अधोखज अक्खर तूझ अवेव
दिनकर चद न जाणत देव
त्रणं-गुण तूझ न जाणत तत
अहीस सवद्द न जाणत अत ।१३७।

हे अधोक्षज ! आप नाश रहित और परिणाम रहित हैं । सूर्य, चन्द्रमा और आपके तीनो गुणो की प्रतिरूप मूर्ति—ब्रह्मा, विष्णु और महेश आपके तत्व को नहीं जान सके और शेष और शारदा आपका पार नहीं पा सके ॥१३७॥

वडा ग्रह तूझ लहै न विचार
पुरंदर तूझ न पांमत पार
भला मुनि तूझ न बूझत भेद
विरंचिय तूझ न जांणत वेद ।१३८।

जिस प्रकार सूर्य और चन्द्र आदि बड़े-बड़े ग्रह आपका विचार ही नही कर सके, उसी प्रकार इन्द्र भी आपका पार नही पा सका। बड़े-बड़े मुनिगण आपके भेद को नही समझ सके और ब्रह्मा तो आपको वेदों के द्वारा भी नही जना सके ॥१३८॥

दामोदर ! तूझ दसैं दिगपाळ
किताइक पार न जाँणत काळ
उमा अणपार अगम्म अलेख
लखम्मिय पार न जांणत लेख ।१३९

हे दामोदर ! दशों दिग्पालों ने कितने ही काल तक आपका पार पाने का प्रयत्न किया, पर वे भी नही पा सके। पार्वती और लक्ष्मी भी आपके अगम और अलख रूप को किंचित् भी नहीं जान सकी ॥१३९॥

महातत तूझ न जांणत माह
कियो तुझ केण आयो तुझ काह
अनीलोय नील कहंत असेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४०।

हे महान् ! आपके तत्त्व को बड़े-बड़े नहीं जान सके। आपको किसने उत्पन्न किया और आप कहां से आये—इसका

कोई पता नही । कोई आपको श्याम और कोई आपको श्वेत कहते हे और कोई आपको अनत कहते हैं । आपको वारम्वार प्रणाम हे ॥१४०॥

अलाह अथाह अग्राह अजीत
अमात अतात अजात अतीत
अरत्त अपीत असेत अनेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४१।

हे प्रभु ! आप अलभ्य, अथाह, अग्राह्य और अजीत हैं। माता पिता और जन्म (वा जाति) मे रहित है । आप लाल नही, पीले और श्वेत भी नही । आपका कोई नियाम (वा स्वामी) नही । आपको वारवार प्रणाम है ॥१४१॥

अनख न सक न वख न धीस
निवास न सास न आस न ईस
निराळ निकाळ त्रिकाळ नरेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४२।

हे अधीश्वर ! आप इच्छा रहित, भय रहित और ईर्षा रहित है । आपका कोई घर नही । स्वासा और आशा नही । आप निराले, काल रहित और तीनो ही कालो के स्वामी हैं। आपको वारम्वार प्रणाम हे ॥१४२॥

क्रिपाल गोपाळ भूपाळ क्रिसन्न
वडाळ सिगाळ छत्राळ विसन्न
म्रिणाळ भुजाळ विसाळ मुनेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४३।

हे कृपालु ! पृथ्वी और गौओं का पालन करने वाले भगवान् श्रीकृष्ण आप ही है। बडे से बड़े और उच्च से उच्च छत्रधारियों में आप ही श्रीविष्णु भगवान् है। हे पद्मनाभ ! आप विशाल भुजाओं वाले है। हे मुनियों के ईश ! आपको बारम्बार प्रणाम है ॥१४३॥

अनाथ अगम्म अनेह अगेह
दतार अपार अणंकव देह
जरा जमजीत अजीत जोगेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४४

प्रभो ! आपका कोई स्वामी नही। आप अगम्य, इच्छा रहित और घर रहित हैं। आप अपार दानी हैं। आप किसी भी प्रकार के चिह्नों से रहित शरीर वाले है (अथवा किसी भी प्रकार से आपका आकलन नहीं हो सकता) आप जरा और काल को जीतने वाले है। हे अजेय योगीश्वर ! आपको बारम्बार प्रणाम है ॥१४४॥

निमूळ निसाख निरंजणनाथ
सरज्जण भूवण-तीन समाथ
मुनीगण सेवक सूर महेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४५।

हे नाथ ! आपका न तो कोई कारण है और न कोई कार्य है। आप निरंजन है। हे समर्थ ! आप तीनों ही लोकों का सर्जन करने वाले है। मुनिगण, भक्तगण, देवतागण और महेश आपको बारम्बार प्रणाम करते है ॥१४५॥

अधोमुख ताप तपै मुनि-ईस
रजो तम रच धरै नही रीस
ध्रुव रवि चद्र सु ध्यान धरेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४६।

रज और तम से रहित, किसी पर भी क्रोध नहीं करने वाले कई बडे मुनीश्वर औंधे लटक कर आपके निमित्त अग्नि तप रहे हैं। ध्रुव, सूर्य और चन्द्र आपका ध्यान धरते है। हे प्रभो! आपको बारम्बार प्रणाम है ॥१४६॥

सवै कुळ मेरु सु सात समद
उचारत नाम अहोनिस इद
सुखा नित टेरत ब्रह्म महेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४७।

सुमेरु और दूसरे सभी पर्वत, सातो समुद्र, ब्रह्मा, महेश और इन्द्र अहर्निश आपका नाम उच्चारण करते है। आपको बार बार प्रणाम है ॥१४७॥

अहोनिस कागभुसड अराध
पढै तुव नाम सदा प्रहळाद
जपै सुकदेव जिसा जोगेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४८।

काकभुशुडि अहर्निश आपकी आराधना करते हैं, प्रह्लाद सदा ही आपके नाम का पाठ करते है और शुकदेव जैसे योगीश आपका नित्य जप करते रहते हैं। हे प्रभो! आपको बार बार प्रणाम है ॥१४८॥

ब्रह्माजी और शिवजी कहते हैं कि पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र आदि ग्रहगण, मनुष्यगण, व्यापक महाकाश और छोटे-बड़े अनन्त ब्रह्माण्ड ये तब कुछ नहीं थे। आदि में वही एक था। वही था ॥१५४॥

सपत्त पियाळ न सात समंद
दिसा दिगपाळ न चंद दिनंद
सुमेर न सेस पहिलोय सो.;ज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।१५५।

सृष्टि-रचना के पूर्व सातों पाताल, सातों समुद्र, दशों दिशाओं के दिग्पाल, चंद्र, सूर्य, सुमेरु, और शेष इत्यादि इनमें से कोई नहीं था। केवल वही था। आप ही था ॥१५५॥

जमी असमांण न आण न जाण
प्रलोक भुलोक न खाण न पाण
कुरांण ·पुरांण वखांण न कोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।१५६।

उस समय न तो पृथ्वी, न आकाश और न आना और जाना था। परलोक और यह लोक भी नहीं थे। खाना और पीना भी नही था और न थे आपकी कीर्त्ति गाने वाले पुराण और कुरान ही। केवल आप ही आप थे ॥१५६॥

जनम्म न दम्म न जीव न जंत
अक्रम्म न क्रम्म न आद न अंत
सुरेस महेस न सेस सरोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।१५७।

उस समय न तो कोई जीव जन्तु थे और न उनका कोई जन्म मरण ही था। पुण्य और पाप भी नहीं थे। आदि और अन्त भी नहीं था। इन्द्र, महेश, शेष और ब्रह्मा भी नहीं थे। केवल तू ही था।

गोळाक्रित चक्र न वक्र गणीत
अगोचर नाम सदा तूं अतीत
अकामिय अंग अभंग अकोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।१५८।

रेखागणित के आधार, चक्र के समान गोलाकृति और वक्राकृति इत्यादि गणित सिद्धान्त के द्वारा भी आप सिद्ध नहीं हो सकते। आपका नाम अगोचर और आप सदा अजेय है। आप एक और असंग है और अकामीजनों के अंग है। आप आपही है और समस्त के आदि में आप ही थे ॥१५८॥

मिटइ सुरलोक पैठो जळ माह
तठे इक अंड निपाविय ताह
किधा धर अंबर वारि एकोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।१५९।

तीनों लोकों का महा प्रलय होने के बाद आपने महाजल में प्रवेश किया। वहां (अग्नि और वायु रूप से) आपने एक अण्ड उत्पन्न किया और उसी अण्ड में पृथ्वी, आकाश और जल बनाये। भगवान् ! उस समय यह एक आप ही थे ॥१५९॥

नतो गह थापण थीर सुनाम
धरै कउ लोक अलोकिक धाम

महादत मोख समापण मोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।१६०।

महादान रूप मोक्ष के अक्षय सुख को देने वाले हे प्रभु ! आपने नवो ग्रहों की रचना और नामकरण करके महाकाश में उन्हें स्थिर किया और कई अलौकिक लोक और धामों को आपने रचना की, जिनके पूर्व एक मात्र आप ही थे ॥१६०॥

वदै चत्र वेद विरंच वखांण
प्रकासत व्यास अढार पुरांण
खत्री दुज वैस गया सुद्र खोज
हुतोज हुतोज. हुतोज- हुतोज ।१६१।

चारों वेदों में ब्रह्माजी और अठारहों पुराणों में व्यासजी ने भी यही वर्णन किया है। इसके अनन्तर ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र आदि चारों वर्ण निरंतर आपकी खोज करते रहे हैं और वे भी यही कह रहे है कि उस समय एक वही था ॥१६१॥

सत्रूपा नार सयभुव भूप
रहस विचार स दीठोय रूप
मांग्यो वर पुत्र हुई हरि मोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।१६२।

स्वायंभुव मनु और उनकी पत्नी शतरूपा ने इस रहस्य को समझ कर आपके उस रूप के दर्शन किये और उसी रूप में उनके पुत्र होने का उन्होंने वरदान मांगा। आपने प्रसन्नता के साथ उनका पुत्र होना स्वीकार किया। वह उसी परब्रह्म का रूप था जो सृष्टि के आदि काल में था ॥१६२॥

अनत पराक्रम तू ज अनत
नही तुझ आद नही तुझ अ त
नही तुव रूप नही तुझ रेख
नही तुव वप्प नही तुव वेस ।१६३।

हे अनत ! आप अनत पराक्रम वाले है। आपका आदि और अन्त नही । आपको कोई रूप-रेखा नही और नही आपका कोई शरीर और वेश ही है ॥१६३॥

नही तुव जात नही तुव जाण
नही तुझ पिंड नही तुझ प्राण
नही तुव सार नही तुझ सुद्ध
नही तुव बाळ नही तुव व्रद्ध ।१६४।

प्रभो ! आपकी कोई जाति और पहिचान नही । आपका कोई शरीर और उसमे रहने वाला प्राण भी नही । आपको सार-सुधि की आवश्यकता नही (न आप मे वृत्ति है और न कोई स्मृति है)। न आप बालक हैं और न आप वृद्ध ॥१६४॥

नही तुव जोग नही तुव जाप
नही तुव पुन्न नही तुव पाप
नही तुव भिन्न नही तुझ भास
नही तुव वन्न नही तुव वास ।१६५।

आप न तो योग हैं, न जप है, न पुण्य है और न पाप हैं। न आप भिन्न (अदृश्य) हैं और न दृश्य। अत आप वन मे नही और घर मे भी नही ॥१६५॥

नहीं तुझ नैण नहीं तुझ नास
नहीं तुव सुन्न नहीं तुव सास
नही तुझ ठोड़ नहीं तुझ ठांम
नहीं तुझ गोठ नहीं तुझ गांम ।१६६।

आपके न तो नयन हैं और न नासिका है। स्वास लेने को शून्याकाश नही। निवास करने को कोई ठाम-ठिकाना और कोई गांव-गोष्ठी भी नहीं ॥१६६॥

नहीं तुव दीह नही तुव रात
नहीं तुझ जात नहीं तुझ भ्रात
नहीं तुव गुज्ज नहीं तुझ जांण
नहीं तुझ मांण नहीं तुझ दांण ।१६७।

आप न तो दिन है और न रात। आपकी जाति नहीं और न बिरादरी भी। आपका कोई गुप्त भेद नहीं उसी प्रकार प्रगट भी नहीं। आप में न तो मान है और न दान है। ॥१६७॥

नहीं तुव विप्र नही तुव वैस
नहीं तुझ खत्रिय सूद्र न वेस
नहीं तुव दैत नहीं तुव देव
नहीं तुझ भेद नही तुझ भेव ।१६८।

आप ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र नहीं। आप देव और दैत्य भी नही। आपका कोई प्रकार और रूप नहीं। ॥१६८॥

नहीं तुव नांम नहीं तुझ नेम
नहीं तुव अंतर प्रेम अप्रेम

नही तुव धुप नही तुव छाह
नही तुव नार नही तुव नाह ।१६६।

आपका कोई नाम नही । आपके कोई नियम नही । आपमे न प्रेम है और न अप्रेम है । आप मे न धूप है और न छाया । नही आप स्त्री है और न आप पुरुष (पति) हैं ॥१६६॥

नही तुव वित्त नही तुव व्हाण
नही तुव खेत नही तुव खाण
नही तुझ दीग्घ सूक्षम देह
नही तुव नार पुरस्स सनेह ।१७०।

आप न धन (वित्त गाय बैल आदि पशु) रूप हो और न वाहन रूप हो । न आप खेत हो और न आप खान हो । आप दीर्घ और सूक्ष्म देह रूप नहो । न आप मे स्त्री-पुरुषो (पति-पत्नी) का स्नेह ही है ॥१७०॥

नही तुव कम्म नही तुव काम
नही तुव ध्रम्म नही तुव धाम
नही तुव मूळ नही तुव डाळ
नही तुव पत्र नही तुव पाळ ।१७१।

आपका कोई कम नही और आपकी कोई इच्छा नही आपका कोई कारण है और न आपका कोई कार्य है) आपका कोई धर्म नहीं और न आप का कोई धाम है । आपकी कोई मूल नही, शाखा और पत्र नहीं और नही कोई रक्षक ही (मर्यादा और सीमा से रहित हैं) ॥१७१॥

नहीं तुव साधक तंत न तंत्र
नही तुव जंत्र नहीं तुव मंत्र
नही तुझ साख समंध सँसार
नहीं तुव जांण-पिछाण जुहार ।१७२।

आप न तो जादू है और न टोना है और न आप उनके तत्त्वों के साधक हैं। न आप यंत्र रूप है और न आप मंत्र रूप है। संसार के संबध की कोई शाखा (साक्षी) आप नहीं, अतः आपकी किसी से जान-पहिचान और जुहार-प्रणाम भी नहीं।१७२।

प्रथी अप तेज अनील अकास
नहीं तुझ सुन्न असुन्न निवास
प्रमेसर प्रांण-पुरक्ख प्रधांन
गरब्भ जगत्त वेदान्त-गिनांन ।१७३।

पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु और आकाश एवं शून्य और अशून्य, इनमें से कोई भी आपका निवासस्थान नहीं। आप प्रधान प्राण-पुरुष जगत के कारण और वेदान्त का ज्ञान हैं। ॥१७३॥

नहीं तुझ मात नही तुझ बाप
आपेह आपेज उपन्नोय आप
मनिछा-बीज चलावण मूळ
थळेचर खेचर सुच्छम थूळ ।१७४।

आपके माता और पिता रूप कोई सहकारी नहीं; आप ही आप व्यक्त हुए हैं। मनेच्छा रूपी बीज के चालक आपही हैं जिससे कि थलचर और नभचर आदि स्थूल और सूक्ष्म सृष्टि उत्पन्न हुई ॥१७४॥

विराट विसाळ निपाविय व्रक्ख
दुई फळ जेण किया सुख दुक्ख
निपाविय रूप उभै नर नार
वधारिवा जगत तणो विसतार ।१७५।

इस प्रकार के एक विशाल और विराट वृक्ष को उत्पन्न करके उसमे सुख दुख रूपी फल लगा दिये। ऐसे इस जगत का विस्तार करने के लिये पुल्लिग और स्त्रीलिंग (नर और नारी) के दो आकार आपने बना दिये ॥७५॥

किधा कई जीव दिधा कड कर्म
धरै इक पाप धरै इक धर्म
सरज्जिय आप त्रिवीध समार
हुवो मझ आपज रम्मण-हार ।१७६।

कई प्रकार के जीवो को उत्पत्ति करके उनके पीछे कर्म लगा दिये। उनमे से किन्ही को पाप कर्म और किन्ही को धर्म कार्य करना धारण करवाया। स्थूल, सूक्ष्म और कारण रूप त्रिगुणात्मक ससार का निर्माण कर और व्यापक सत्ता रूप से आप उसमे प्रविष्ट होकर रमण करने वाले होगये ॥१७६।

घडै सह आपज हूताय घाट
वणाविय विस्व किधो वइराट
किताइक वार व्रहम्माय कीध
लिला-अवतार किना: तै लीध ।१७७।

अपने बिना किसी की सहायता के अनेक प्रकार के रूप बनाकर इस विराट विश्व की उत्पत्ति की। आपने कितनी ही बार सृष्टि रचना के निमित्त ब्रह्मा को बनाया और जगत् को अपनी लीला दिखाने के लिये उसमें कई बार अवतार लिये ॥१७७॥

महागज ग्राह छुडावण मंत
सनातन पाळक केवळ संत
भगत्त स भूधर ! भांजण भीड़
प्रजाळहु देव ! अमांणिय पीड़ ।१७८।

गरुड़ और सुदर्शन चक्र भी उस त्वरित गति से नहीं पहुँच सकने के कारण आपने पैदल दौड़ कर अथाह जल में ग्राह द्वारा खींचे जाने वाले गज को बचाया। अनादिकाल से संतों की रक्षा करने वाले और अपने भक्तों की भीड़ को मिटाने वाले हे भूधर ! अब आप मेरी पीड़ा को भी मेटिये ॥१७८॥

भणै गुण तोर लछी-भरतार !
लगै न तिकां मन पाप लिगार
मुकंद ! तु आय वसै जिअ मुक्ख
सँसार-समुद्र तरै वह सुक्ख ।१७९।

हे लक्ष्मीपति ! जो आपके गुणों का कथन करता है उसको लेशमात्र भी किसी पाप कर्म का स्पर्श नहीं होता। हे मुकुन्द। आप जिसके मुँह में आकर निवास कर लेते हैं, वह सुख से इस संसार-समुद्र को तिर जाता है ॥१७९॥

मुरार ! तु आय वसै जिअ मन्न
दहै नहीं ताहि सँसार-दवन्न

जपै हरि तोर मु जाप जिकाह
टळै भव बंधन पाप तिकाह ।१८०।

और हे मुरारि ! आप जिसके मन मे आकर निवास कर लेते हैं, वह निरन्तर फिर आप ही का जप करता रहता है। उसके ससार मे बंधन के कारण रूप समस्त पाप नाश हो जाते हैं और फिर उसे ससार-दावानल जला ही नही सकता ॥१८०॥

त्रिबोध त्रिजग्ग त्रिविक्रम तार
चतुरभुज आतम चेतन सार
बळोभद्र-बंधव गोकुळ-वाळ
खिमावंत माधव दुस्ट-संगाळ ।१८१।

बलभद्रजी के बन्धु गोकुल वाले हे श्री चतुर्भुज ! हे त्रिविक्रम ! आप सज्जनो पर दयालु और दुष्टो का नाश करने वाले है। त्रिविध जगत के त्रितापो से मुझे बचाइये और चेतन आत्मतत्व के मुझे दर्शन कराइये ॥१८१॥

गोविंद ! भगत्त निवारण ग्रभ्भ
परम्म अमीय मय पद प्रभ्भ
सदा उनमट्ट जोगाणंद सिद्ध,
वय तन बाळ न जोवन ब्रद्ध ।१८२।

हे गोविन्द ! आप भक्तो का गर्भ (जन्म) निवारण करने वाले हैं और उन्हे अमृतमय परम पद को देने वाले हैं, जहा नहीं कोई शरीर है और नही उसकी बाल, युवा और वृद्ध अवस्थाएँ ही है किन्तु उन्मद योगानंद के समान सदा आनंद ही आनंद है ॥१८२॥

आदेस करां इअ नांम नां, जो जोनी संकट हरै
आदेस अहोनिस अलख नां, कर जोड़ी ईसर करै ।१८६।

उस अलख पुरुष को आदेश है जिसने आदि में इस जगत को उत्पन्न किया। जिसने विशद वैकुण्ठ की रचना की उस अलख पुरुष को प्रणाम है। जिसने पृथ्वी, पाताल और आकाश को धारण कर रखा है उस अलख पुरुष को नमस्कार है। जिसकी सेवा करने से अनेक भक्त गण इस भवसागर से पार होगये उस अलख पुरुष को नमस्कार है। भक्त ईश्वरदास हाथ जोड कर कहते है कि उस अलख पुरुष के नाम को रात-दिन (नित्य) बारम्बार प्रणाम है कि जो चौरासी लाख योनियों के जन्म-मरण के दुखों का नाश करने वाला है ॥१८६॥

आदि अंत आदेस, अलख आदेस अनंतर
अंग-अलख आदेस, अगम आदेस अपंपर
एक तूझ आदेस, जगत गुरु जोग जोगेसर
ओमकार जोगेस, अनेक आदेस नरेसर
आद्यंत नमो भगतां ईस, गुण जंपै ईसर गुणी
आदेस अलख इक तूझ तू नमो नाथ त्रिभुवन धणी ।१८७।

हे आद्यन्त रहित अलख पुरुष ! आपकी आदि और अंत संज्ञाओं को आदेश है। आदि और अंत की संज्ञाओं को समवेत करने वाली आपकी अनंतर (=ब्रह्म) सज्ञा को आदेश है। अलख स्वरूप को लखने के जो साधन-अंग (=सगुण रूपादि) है, उन्हें नमस्कार है। आपके अगम्य और अपरम्पार रूप को

नमस्कार है। हे जगत के गुरु-योग और योगेश्वर स्वरूप ! आप एक ही हैं, आपको नमस्कार है। आप योगेश्वर और नरेश्वर के रूप मे ओमकार स्वरूप है, आपको अनेक प्रणाम हैं। अलख रूप एक आप ही हैं आपको नमस्कार है। कवि ईश्वरदास कहते है कि हे त्रिभुवन के स्वामी ! मैं आपके उस अलख स्वरूप का ध्यान करता हूँ। आपको बारम्बार नमस्कार है ॥१८७॥

अलख पुरस आदेम, अमर नर नाग उपावण
सतत रत मघार, चार ही खाण चलावण
धर अ वर टक्रियण, वेद ब्रह्मा विसतारण
त्रिभुवन तारण-तिरण, सरण-असरण साधारण
घण घणा घाट भाजण वडण, विस्व ईस ! साभळ वयण
ईसरो कहे असरण-सरण, नमो नाथ तो नारीयण ।१८८।

हे अलख पुरुष ! आप देवता, मनुष्य और नागो को उत्पन्न करने वाले हैं। उद्भिज, स्वेदज, अडज और जरायुज– इन चारों प्रकार की योनियो मे आप सृष्टि को नित्य चलाने वाले और उसका सहार करने वाले ह। पृथ्वी को आकाश से ढकने वाले और ब्रह्मा के रूप मे वेदो का विस्तार करने वाले हैं। आप त्रिभुवन के आधार रूप और उसका उद्धार करने वाले एव अशरण-शरण हैं। कवि ईश्वरदास कहते हैं कि असख्य सृष्टियो के रचने वाले और नाश करने वाले हे विश्वेश ! आप मेरी भी विनती सुनिये। हे नाथ ! हे अशरण-शरण ! आपको नमस्कार है ॥१८८॥

सिंघासण धर सोह, करत वींजण समीर कर
पुहप भार-अड्डार, पूज चढवै विधि-विधि पर
छांह धरत घन छत्र, करै संकर कीरत्ती
अवतारत निस-अहर, अरक ससिहर आरत्ती
धुनि करत वेद मंगळ धमळ, ग्रह तुम्मर गावंत गुण
मांनवी ताहरी महमहण ! करइ सेव रिझवै कवण ।१७६।

समस्त धरातल आपका सिंहासन है, पवन अपने हाथ से आप पर पंखा झल रहा है। अठारह-भार वनस्पति अपने अनेक प्रकार के पुष्पों को चढ़ा कर आपकी पूजा करती है। बादल छत्र के रूप में आप पर छाया कर रहे हैं। भगवान् शंकर आपका कीर्त्ति-गान करते है। सूर्य और चंद्र रात दिन आपकी आरती उतार रहे है। वेद आपके यश की निर्मल मंगल-ध्वनि कर रहे हैं और अनेक ग्रहगण और देवता लोग आपके गुणों का गान कर रहे हैं। हे महा महार्णव ! इस प्रकार की सेवा के सम्मुख एक साधारण मनुष्य आपकी किस प्रकार की सेवा करके आपको प्रसन्न कर सकता है ? ॥१८६॥

ब्रह्मा वेद उच्चरै, वीण बहो तुमर वजावै
रंभा अवसर रचै, गीत सुरसत्ती गावै
व्यास कीरत विसतरै, सक्र सिर चम्मर ढाळै
सिव आलोचन करै, पाव गंगा सु पखाळै
सस सोळ कळा अम्रत स्रवै, सूरज जोती सुभ धरै
एकत्र नाथ सुर निस अहो, कमळा तो आरति करै ।१९०।

प्रभो ! वेदो द्वारा ब्रह्मा आपके गुणो का उच्चारण करते है, देवता लोग वीणा बजा रहे है, रभा नृत्य कर रही है और सरस्वती आपका गीत गा रही है। भगवान् वेदव्यास आपकी कीर्ति पढते है, इन्द्र आप पर चमर झल रहा है। भगवान् शकर विवेचन करते है और गगा आपके चरणो का प्रक्षालन करती है। चद्र अपनी सोलह कलाओ द्वारा अमृत वर्षा कर रहा है और सूर्य शुभ प्रकाश कर रहा है। इस प्रकार लक्ष्मीजी द्वारा आपकी की जाने वाली आरती मे देवता लोग निरतर एकत्रित होते हैं ॥१६०॥

नमो निरजणनाथ, पार कुण तोरा पम्मै
निगम कहै गम नाय, देह जोगेसर दम्मै
नाग-नवै-कुळ आय, चरण रज सीस चढावै
गगा गायत्री गवरि, गुण सह थारा गावै
सह धाम प्राग तीरथ सवै, चद रवी पूजै चरण
कर जोड दास ईसर कहै, नमो नमो नारायण ।१६१।

हे निरजननाथ ! चारो वेद आपके सम्बन्ध मे सब कुछ कहने के बाद कह देते है कि इसके आगे हम कुछ नही जानते, वह 'नेति' है। योगीश्वर लोग आपकी प्राप्ति के लिये अपनी देह का दमन करते है। नवो ही कुलो के नाग लोग आकर आपकी चरण रज अपने शीश पर चढाते है। गगा, गायत्री और गौरी सभी आपका गुण गाती है। सभी (चारो) धाम और प्रयाग आदि सभी तीर्थ, सूर्य और चन्द्रमा आपके चरणो की पूजा करते है। ईश्वरदास कहते हैं कि हे नारायण ! आपका पार कौन पा सकता है। आपको बारम्बार नमस्कार है ॥१६१॥

सेस अनंत सिव सक्ति, ध्यांन कर निस दिन गावै
अनँत वेद अज इंद्र, कीरती तोर कहावै
अनँत कोट अवधूत, महा तपसी वन मांही
भजै अनंत ससि भांण, पार जस कोउ न पाही
दिगपाळ देव दांनव सकळ, सगुण कथत थारा सबै
किणमात विया प्राकृत कवि, चत्रभुज थारा गुण चवै १६२

शेष, शिव शक्ति, वेद, ब्रह्मा और इन्द्र निशदिन अनंत प्रकार से ज्ञान द्वारा आपकी कीर्त्ति का वर्णन करते हुए आपका गुणगान करते हे। अनन्त कोटि अवधूत और महा तपस्वी वन में आपका भजन करते हैं। अनंत सूर्य और चन्द्रमा कोई भी आपके यश का पार नहीं पा रहे हैं। दशों दिग्पाल, देवता और दानव सभी आपके सगुण रूप का कथन करते हैं। (ईश्वरदास कहते हैं कि) हे चतुर्भुज ! इन सबके आगे अन्य साधारण कवि आपके गुणों का वर्णन किस प्रकार करने में समर्थ हो सकते हैं ? ॥१६२॥

दूहा

नारायण नारायणा, तारण-तिरण अहीर।
हों चारण हरि गुण चवां, सागर भरियो खीर।१६३।

हे नारायण ! आपही नर-नारायण हे। अहीर कुल में अवतीर्ण होकर गौ और भक्तजनों का उद्धार करने वाले आप ही श्रीकृष्ण है। उन श्री हरि के गुणों का मैं चारण ईश्वरदास वर्णन करूँ, मेरे लिये यह सौभाग्य ? क्षीर से भरे सागर की प्राप्ति के समान है ॥१६३॥

नारायण नारायणा, म्होटा काटण फंद
हो चारण हरि गुण चवा, सोनो अनै सुगध ।१६४।

चारण ईश्वरदास कहते है कि हे नारायण ! हे विष्णो ! आप जन्म-मरण के बधन को काटने वाले हैं। ऐसी अहेतुकी कृपा करने वाले श्री हरि के गुणो का मै चारण ईश्वरदास वर्णन करू, यह सोने मे सुगधि के समान है ॥१६४॥

॥ ॐ शिव ॥

३. नाम महिमा

गाथा

अहळै हो हरि नाम, जाण अजाण जपोजै जोहा
सास्त्र वेद पुराण, सर्व मही तत अक्खर सार ।१६५।

वेद, पुराण और सभी शास्त्रो मे हरि के नाम के अक्षर तत्त्व और सार रूप कहे गये है। इसलिये जान या अनजान जैसे भी हो श्री हरि का नाम जिह्वा से जपते रहना चाहिये ॥१६५॥

दूहा

पहलो नाम प्रमेम रो, जिय जग मँडियो जोय ।
तीन भवन चो रज्जियो, सुफळ करेसी सोय ।१६६।

जिस परमेश्वर ने जगत् की रचना की है उसी का नाम सर्व प्रथम लेना चाहिये । वही त्रिभुवन का स्वामी है और प्राणी मात्र के जीवन को सफल बनाने वाला है ॥१६६॥

अहळै नारायण तणों, जे नर नांम लियंत
ते जमरांणापुर तजी, राघव चरण रहंत ।१६७।

जो मनुष्य सहज ही में नारायण का नाम लेते रहते हैं, वे यमराणापुरी (यमपुरी) को छोड़ कर (यमलोक में नहीं जाकर) भगवान राम के चरणों में जाकर निवास कर लेते हैं ॥१६७॥

नारायण रो नांम तो, भूंडां ही भल वांण
चोपडियो चंगो थियै, जहड़ो-तहड़ो खांण ।१६८।

जैसा-तैसा भोजन भी घृत युक्त होने से श्रेष्ठ अथवा स्वादिष्ट हो जाता है, इसी प्रकार बुरे मनुष्यों के मुँह से श्रीनारायण का नाम निकलते ही वह मनुष्य भला बन जाता है ॥१६८॥

नांम सु तीरथ नांम व्रत, नांम सलभ्भो कांम
एको अक्खर तंत फळ, जप जिभ्या श्रीरांम ।१६६।

श्री हरि नाम का जप ही तीर्थ, व्रत और सुकृत्य (लाभ-दायक काम) है। उसका एक-एक अक्षर (एक ही नाम) तत्त्व फल का देने वाला है। अतः जिह्वा से श्री राम के नाम का जप कर ॥१६६॥

दाखै ईसरदास यूँ, कटक न होणा कीध ।
रांम रांम रटतां थकां, लंक वभीखण लीध ।२००

ईश्वरदास कहते हैं कि राम के नाम का प्रभाव तो देखिये। विभीषण ने राम का नाम रटते हुए बिना सेना की सहायता के (युद्ध किये बिना ही) लंका का राज्य प्राप्त कर लिया ॥२००॥

राम जपता राज श्री, राम भणंता रिद्ध ।
राम नाम सभारता, पामीजै नव निद्ध ।२०१।

श्रीराम का नाम जपने से राज्य और लक्ष्मी, राम का नाम जपने से ऋद्धि और राम के नाम का सुमिरण करने से नौ ही निधियां प्राप्त हो जाती हैं ॥२०१॥

राम नाम रटता रहो, आठूं पहोर अखड ।
सुमरण सम सौदा नही, नर देखो नवखड ।२०२।

आठों पहर अखड रूप से श्री राम का नाम रटते रहिये । नौ ही खड में देख लीजिये—श्रीराम नाम के सुमिरण के समान कोई (सुलभ और लाभकारी) सौदा नही है ॥२०२॥

नारायण रो नाम जिअ, ना लीधो निरणाह ।
यूं जनमारो जिकण रो, ज्यूं जगळ हिरणाह ।२०३।

जिन्होंने प्रात काल भोजन करने के पहले नारायण के नाम का उच्चारण नही किया, जिनका जीवन जगल के हरिण की भाति यो ही गया ॥२०३॥

नारायण रा नाम सू, लोक मरै कर लाज ।
बूडैला बुध-बाहरा, जळ बिच छोड जिहाज ।२०४।

श्री नारायण का नाम लेने से जो लोग लाज मरते हैं, वे बुद्धिहीन नाम रूपी जहाज को छोडकर भव जल में डूब जायेंगे ॥२०४॥

नारायण रा नाम री, मोडी पडी पिछाण ।
कई दिन बाळापण गया, कई दिन गया अजाण ।२०५।

कई दिन तो बचपन और अनजान में बीत गये, परंतु अब बहुत देरी से (बुढ़ापे में) श्री नारायण के नाम की पहिचान हुई ॥२०५॥

नारायण रा नांम सूं, प्राणी कर लै प्रीत ।
इअ घट वणियो आतमा, चत्रभुज आसी चीत ।।२०६।

हे प्राणी! तू नारायण के नाम से प्रीति कर, क्योंकि इस मनुष्य शरीर में जब तक आत्मा का प्रकाश बनाया हुआ है, तभी तक वह याद आ सकेगा ॥२०६॥

नारायण रा नांम सूं, प्रांणी वांणी पोय ।
जम डांणी लागै नहीं, हांणी मूळ न होय ।२०७।

हे प्राणी! नारायण के नाम रूपी रत्न को रसना रूपी धागे में पिरोदे। पिरोलेने के बाद उस पर फिर यम-डाणी (कर वसूल करने वाला) पाप-पुण्य के व्यापार का लेखा करके उसका फल भुगताने वाले यमराज का कोई कर नहीं लग सकेगा। और मोक्ष प्राप्ति रूप अपने मूल धन की तो कोई हानि हो ही नहीं सकती ॥२०७॥

नारायण रा नांम सूं, भरियो रह भरपूर ।
दामोदर नाँ दाखवै, दम हिक करै न दूर ।२०८।

हे प्राणी! तू श्री नारायण के नाम रूपी रस से पूर्ण भरा रह। श्री दामोदर के नाम का सुमिरण एक स्वास के लिये भी दूर मत कर ॥२०८॥

नांम समोवड़ को नहीं, जप तप तीरथ जोग ।
नांमे पातक नासही, नांमे नासै रोग ।२०९।

नाम के समान जप, तप, तीर्थ और योग कोई नही है। नाम से पाप और ताप नाश हो जाते हैं ॥२०६॥

खुधा न भाजै पाणिया, त्रिखा न छीजै अन्न।
मुगत नही हरि नाम विण, मानव साचे मन्न।२१०।

भूख पानी से और तृषा अन्न से नही मिटती। इसी प्रकार हे मानव! यह सच समझ कि हरि के नाम सुमिरण बिना मुक्ति नही ॥२१०॥

वैद तणी वसावळी, कहो कि वाचण काम।
मिटै रोग जांमण मरण, निगम लियता नाम।२११।

वैद्य की वशावली पढने से (खुशामद करने से) क्या प्रयोजन? जब कि जन्म-मरण जैसी भयकर व्याधियें भी उस परब्रह्म परमात्मा का नाम लेने मात्र से ही मिट जाती है॥२११॥

अजामेळ जम-दळ अगा, विछुटो विखमी वार।
करते नारायण कह्यो, पुत्र हेत पोकार।२१२।

नारायण नाम के अपने पुत्र को अत समय मे पुकारने के कारण अजामिल यमदूतो के दल से मुक्त हो गया ॥२१२॥

न ले साद क्यु नाथजी, सादविया ज्या सत।
आपण नाम उळावतां, घीणू कान धरत।२१३।

अपना नाम पुकारने से गौ भी उधर कान देती है। तो भला जिन सतो ने भगवान को पुकारा है, उनकी पुकार वे क्यो नही सुनेंगे? ॥२१३॥

अंको नाम अनत रो, पालै पाप प्रचड।
जव तिल जेतो जाळनळ, खोण दहै नव-खड।२१४।

नाम का प्रभाव प्रगट है जिसने यमदूतों को त्रास दिखा कर अजामिल को वैकुंठ में वसा दिया। नाम का प्रभाव प्रगट है जिससे घोर चौरासी के दुख मिटकर हृदय में कोई संताप नहीं रहने पाता। राम का नाम रटने से जल पर पत्थर तिर गये। ईश्वरदास कहते है कि हे प्राणी !(अब भी कुछ नही बिगड़ा है।) सांसारिक कामों मे यमयातना का भय मानते हुए उसके निवारणार्थ अब भी मुख से श्रीराम के नाम का उच्चारण कर और उसका ध्यान धर ॥२२०॥

रांम नांम परताप, हणूं दूणागिर लायो
रांम नांम परताप, इंद्र इंद्रासण पायो
रांम नांम परताप, धुरू अवचळ हुइ रहियो
रांम नांम परताप, पांडु कुळ नकळंक कहियो
सो रांम नांम रटतां रसण, अनंत भक्त जन उद्धरै
धर ध्यांन ईसरा संक धर, अजूं रांम मुख उच्चरै ।२२१।

श्री राम नाम के प्रताप से हनुमान द्रोणागिरि उठा कर ले आये। श्री राम नाम के प्रताप से इन्द्र ने इन्द्रासन प्राप्त किया। श्रीराम नाम के प्रताप से ध्रुव को अचल धाम की प्राप्ति हुई। श्री राम नाम के प्रताप से पाण्डुकुल निष्कलंक कहलाया। उसी राम नाम को रसना द्वारा रटते रटते कई भक्तजनों का उद्धार हो गया। ईश्वरदास कहते है कि हे प्राणी ! परभव का डर मानकर श्री राम नाम का मुख से उच्चारण करता हुआ अब भी तू उसका ध्यान धरना शुरू करले ॥२२१॥

वासुदेव परब्रह्म, परम आतम परमेसर
अकळ ईस अणपार, जगत जीवण जोगेसर

निरालव निरलेप, अखिल ईसर अविनासी
थावर जगम थूळ, सुछम जग माय निवासी
दाळद्र पाप राखस दमन, पारस सगम लोह परि
निज नाम नमो नारायणा, हसराज सिरताज हरि ।२२२।

हे परब्रह्म परमात्मा ! आप परमेश्वर वासुदेव हैं। निराकार ईश्वर हैं। अपार हैं। जगत के जीवन और योगीश्वर हैं। आप अवलवन रहित और निर्लेप हैं। अखिल विश्व के ईश्वर और अविनाशी है। स्थावर, जगम, स्थूल और सूक्ष्म— समग्र जगत् मे सत्ता-स्फूर्ति से निवास कर रहे हैं ! सर्वशिरोमणि परमात्म स्वरूप हे श्री नारायण ! आपके नाम रूपी पारस के सगम से लोह रूपी दारिद्रय और पाप नामक राक्षसो का नाश हो जाता है ॥२२२॥

छद मोतीदाम

न मेलहु तूझ तणो कदी नाम
विसन्न ! भगत्त तणा विसराम
परम्म निवास निवारण पाप
जोगेसर भद्र अजपाय जाप ।२२३।

हे भक्तो के विश्राम विष्णु भगवान् ! आप पापो का नाश करने वाले और परम-निवास (मोक्ष स्वरूप) हैं। आप ही कल्याणकारी शिव हैं और आप ही अजपा जाप हैं। आपके ऐसे परम पावन नाम को मै अब कभी नही छोडूगा ॥२२३॥

प्रगट्टत ग्यान तोरो ज्या प्रम्म
भगँ मद मम्मत छूटत भ्रम्म

वदै तव नाँम लखम्मण-वीर
नरां त्याँ घात लगै नहिं नीर
द्रढै तव नाँम सु अक्खर दोय
नैड़ो रह प्रांण नियारो न होय ।२३०।

हे लक्ष्मणाग्रज श्रीरामचन्द्र ! जो आपके नाम का उच्चारण करते हैं उन्हें जल घात नहीं होती। और प्राण समीप आने (कंठगत होने) के समय जो 'राम' इन दो अक्षरों को दृढ़ता से कह देता है, उससे यम की फाँसी अलग हो जाती है (वह यम की फाँसी से छूट जाता है) ॥२३०॥

चतुरभुज नाँम धरै तुव चित्त
नवो-निध सिद्ध मिळै त्याँ नित्त
रुचै तव नाँम जिके घण रूप
कधी न पड़ै नर सो भव-कूप ।२३१।

हे चतुर्भु ज ! जो आपके नाम को चित्त में धारण करते हैं, उन्हें नौ निधि और अष्ट सिद्धि नित्य प्राप्त होती है। हे घन-रूप ! जो आप के नाम में रुचि रखते हैं, वे कभी संसार-कूप में नहीं गिरते ॥२३१॥

उळग्गत राँम ज आपहि-आप
विखै तन पंच सकै न वियाप
भजै तव नांम जिके भगवाँन
खपै त्यां पाप त्रिखा खय मांन ।२३२।

इस प्रकार हे भगवान् ! आपके 'श्रीराम' के नाम को जो मस्त होकर अहर्निश गाता ही रहता है, उसको ससार के पच विषय नही व्याप सकते। और उसके पाप, तृष्णा और मान अपमान आदि विकारी भावनाओ का नाश हो जाता है ॥२३२॥

छप्पय

त्रीकम पुरुसोतम्म, रूप हे महा मनोहर
हरि वांमन हयग्रीव, धनुस धारण फरसूधर
निकळक गोपीनाथ, पतित पावन प्रमोदघण
माधव साळगरांम, अनत नांम नारायण
त्रयलोक नाथ तारण-तिरण, साहब बलिभद्र सभरै
धर ध्यांन ईसरा सक धर, रांम नांम मुख उच्चरै ।२३३।

श्री त्रिविक्रम, पुरुषोत्तम, हरि, वामन, हयग्रीव, धनुषधारी श्रीराम, परशुराम, कल्कि, गोपीनाथ, पतितपावन, आनद धाम, माधव, सालिग्राम, नारायण, त्रिलोकीनाथ, तारण-तरण, श्रीकृष्ण आदि उसके अनन्त महा मनोहर रूप और नाम है। उनका तू सुमिरण कर। ईश्वरदास कहते है कि हे प्राणी ! परभव का डर मानकर तू उस प्रभु के एक श्रीराम नाम का ही मुख से उच्चारण करता हुआ अब भी उसका ध्यान धरना शुरू करले। (तेरा बेडा पार हो जायेगा) ॥२३३॥

॥ ॐ शिव ॥

४. श्री चरण महिमा

छंद मोतीदाम

सहस्र विभूत वियापक स्रव्व
दुवादस आंगळ गात दिपव्व
जदूकुळ-नायक सांमिय-जग्ग
पदम्म पताक अलंक्रत पग्ग ।२३४।

सहस्रों विभूतियों द्वारा सारे संसार में आप व्यापक है एवम् सर्व प्राणियों के बारह अगुल के दहराकाश में भी आप उसी प्रकार विद्यमान (प्रकाशमान) हैं । ऐसे हे सर्व जगत् के स्वामी यदुकुलनायक भगवान् श्री कृष्ण ! आपके चरण ध्वजा और पद्मादिक चिह्नों से अलंकृत हैं ॥२३४॥

पगां रिय रेण धरै सिर प्रम्म
धियावत पग्ग अहोनिस ध्रम्म
पुजै पदपंकज कोमळ पांण
उदक्क चढावत गंग सु आंण ।२३५।

आपके चरणों की रेणु को श्री शंकर सिर पर धारण करते हैं। धर्मराज अहर्निश आपके चरणों का ध्यान करते हैं । कोमल करोंवाली श्री लक्ष्मीजी आपके चरणों की पूजा करती हैं और श्री गंगाजी स्वयं आपके चरणों को अर्घ्य प्रदान करती हैं ॥१३५॥

पखाळत तीरथ अडसठ पग्ग
इद्रादिक देव करत ओळग्ग
तळासत पाय नवे निध तम्म
महा सिध साधक जाणन म्रम्म ।२३६।

अडसठ तीर्थ आपके चरण-कमलो का प्रक्षालन करते हैं। इन्द्रादिक देवतागण उनकी स्तुति करते हैं। नौ ही निधियाँ आपके चरण कमलो की सेवा करने के लिये आतुर रहा करती हैं। आपके इन चरणो की महिमा के रहस्य को महा सिद्ध और साधक ही जानते हैं ।।२३६।।

महातम जाणत ब्रह्म महेस
सदा पग आगळ लोटत सेस
गुणा सत अस्तुति करत गणेस
पगा रिख लाग करै नित पेस ।२३७।

आपके चरणो की महिमा को श्री ब्रह्मा और श्रीशकर जानते है और शेष भगवान तो सदा चरणो के आगे लोटते ही रहते हैं। भगवान गणेश आपके चरणो की स्तुति सैकडो प्रकार से करते ही रहते हैं और ऋषिगण आपके चरणो का स्पर्श करके नित्य अपनी सेवा अर्पण करते है ।।२३७।।

पगा हणमत करत प्रणाम
सदा पग वदत कार्तकसाम
पगा तळ मडत सीस प्रयाग
वसै पग आगळ ग्यान विराग ।२३८।

महावीर श्री हनुमान और स्वामिकार्तिक नित्य आपके चरणों में प्रणाम करते हैं । तीर्थराज प्रयाग अपना मस्तक आपके चरणों के तलों में लगाते है और ज्ञान और वैराग्य आपके चरणों में निवास करते हैं ॥१३८॥

पियै पग-रस्स ब्रह्म्म-सपूत
अमीय सुरंभ लिवै अवधूत
पुजै पग विम्मळ वेद पुरांण
अळीयळ नाथ लियै अघरांण ।२३९।

सनकादिक और अनेकों अवधूत आपके सुगंधयुक्त चरणामृत का पान करते हैं। वेद और पुराण आपके चरण कमलो की पूजा करते है और नौ नाथ भौंरों के समान श्री चरण-कमलों की सुगंधि पान करते हैं ॥२३९॥

लखम्मिय पग्ग धरै उर लेह
बुधो सिधि पग्ग तळै रह वे:
रमै पग छांह मधूकर रक्ख
तकै प: नाग सरीखाय तक्ख ।२४०।

श्री लक्ष्मीजी आ के चरण कमलों को हृदय में धारण किये रहती हैं । शारदा और सिद्धि दोनों चरणतल में निवास करती है । ऋषिगण रूप भ्रमर आपके चरण कमलों की छाया में क्रीड़ा करते हैं और शेष सरीखे नागराज आपके चरणों के दर्शन करने की ताक में रहते हैं ॥२४०॥

पगां भणि सिंधुव सात पियाळ
मेल्है पग अग्गि मुताहळ-माळ

सुहै पग छाह सातू-रिख साम
रहै पग छाह यसा वरियाम ।२४१।

सातो समुद्र और सातो पाताल (उनके अधिपति देवता वरुण और शेष नाग) आपके चरणो को मोतियो की मालाओ से पूजा करते हैं। सप्तऋषि आपके चरणो की छाया मे रह कर शोभा पा रहे है। ऐसे सभी श्रेष्ठ और दिव्य पुरुष आपके चरणो की छाया मे निवास करते हैं ।।२४१।।

सेवै तुझ पाव सदामद सक्क
इळा पग छाह मयक अरक्क
सेवै तुझ पाव समंदर सात
निरजण पाव नमो निरगात ।२४२।

इन्द्र निरतर आपके चरणो की सेवा करते है। पृथ्वी, चद्र और सूर्य आपके चरणों की छाया में रहते हैं। सातो समुद्र आपके चरणो की सेवा करते हैं। निरजन और निराकार ब्रह्म का चिन्तन करने वाले ज्ञानी जन भी उन चरणो को नमस्कार करते हैं ।।२४२।।

जपै पग गोतम गर्ग जमन्न
कपिल्ल कणाद कहै करमन्न
पतजळ व्यास जुडै नित पाण
वदे पग रा खट-भाख वखाण ।२४३।

गौतम, गर्ग, जैमिनी, कपिल, कणाद, पतजलि और व्यास जैसे कर्मण्य महामुनि सदा हाथ जोड

कर प्रणाम करते हैं और छहों शास्त्रों द्वारा (न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, सांख्य और पातंजल योग) आपके चरणों की स्तुति करते हैं ॥१४३॥

नमै पद कुंभज द्रोण नारद्द
वदै पद भारदुआज विहद्द
जपै पग वासिठ जांमदगन्न
महा वलमीक सनक्क मगन्न ।२४४।

अगस्त्य, द्रोण, नारद, भारद्वाज, वसिष्ठ, जमदग्नि, वालमीकि और सनकादि महामुनिगण आपके विशद चरणों की मग्न हो कर सेवा-पूजा करते हुए गुणगान करते हैं ॥२४४॥

परासर वालखिला पद-सेव
अस्टावक्र अत्रि जांणै अस भेव
विस्वार्मित कासप गरुड़ विमेक
अठा॰॰ हजार अखै मन हेक ।२४५।

पाराशर, (साठ सहस्र) वालखिल्यऋषि, अष्टावक्र, अत्रि, विश्वामित्र, कश्यप, गरूड आदि अठासी सहस्र ऋषि एक ही मन और वाणी से स्तुति करते हुए आपके चरणों की महिमा और रहस्य को समझ कर उनकी सेवा करते हैं ॥२४५॥

जुजठ्ठळ भीम करै पग जाप
वंदै पग रेण अरज्जुण आप
देखै पग छांह रहै सहदेव
सदाहि नकूल करै पग सेव २४६।

युधिष्ठिर और भीम आपके चरणों का जप करते हैं। आपकी चरण रज को अर्जुन नमस्कार करते हैं। सहदेव आपके चरणों की छाया की प्रतीक्षा करता है और नकुल नित्य आपके चरणों को सेवा करता है ॥२४६॥

सेवै पग जन्नक सन्नक सूर
अभेमन ओधव त्यूं अकरूर
जपै पग कोट-छपन्न-जदूव
वंदै सुकदेव जसा विसनूव ।२४७।

देवता, सनकादिक, जनक, अभिमन्यु, उद्धव और अक्रूर आपके चरणो की सेवा करते हैं। छप्पन करोड यादव आपके चरणो का ध्यान धरते हैं और परम वैष्णव शुकदेव जैसे आपके चरणो को प्रणाम करते है ॥२४७॥

पगा विहु-राह करत प्रयाण
सेवै पदकज सन्यासि सयाण
प्रणम्मत पाय परम्म प्रवीत
सावित्रिय गौरि गायत्रिय सीत ।२४८।

निवृत्ति और प्रवृत्ति दोनो मार्गो के अनुयायी आपके चरणा को भक्ति द्वारा मोक्ष को प्राप्त होते हैं। इसलिये ज्ञानी सन्यासी भी आपके चरण कमलो की सेवा करते हैं। आपके परम पवित्र चरणारविंदों मे सावित्री, गौरी, गायत्री और लक्ष्मी प्रणाम करती हैं ॥२४८॥

सेवै पग गंध्रव-चारण सिद्ध
वदै पग रा जस वंस विसुद्ध
जुहारत पग्ग जसा जयदेव
सेवक्क अनेक करै पग सेव ।२४९।

गंधर्व, चारण और सिद्ध जन विशुद्ध वंशों का वर्णन करने के पूर्व आपके चरणों के यश का वर्णन करते हैं। जयदेव जैसे भक्त आपके चरणों को प्रणाम करते हैं और आपके अनेक सेवक आपके चरणों की सेवा करते हैं ॥२४९॥

हिये पद छांह सदा हर-हार
सुरंभत पग्ग पहाड़-सधार
चहै पग छांह विवुद्ध समाज
रहै पग छांह वडा वळिराज ।२५०।

गोवर्धन पर्वत को धारण करने वाले गिरधारी के सुरभित चरणों की छाया को शेष सदा अपने हृदय में धारण किये हुए हैं। देवगण आपके चरणों की छाया की इच्छा करते हैं और महा दैत्य बलिराजा आपके चरणों की छाया में निवास करते है ॥२५०॥

चरच्चत पाव सुसीतळ चंद
दियै पग वंदन देव दुंड़िंद
तळै पग छांह नवग्रह तांम
पगां दिगपाळ करंत प्रणांम ।२५१।

शीतलता प्रदान करने वाले चन्द्रदेव आपके चरणों की सदा अर्चा करते हैं। सूर्यदेव (समिष्ट रूप से अपने प्रकाश द्वारा)

आपके चरण कमलो को प्रणाम करने के लिये देखते रहते हैं। नवो ग्रह आपके चरणो की छाया तले निवास करते हैं और दशो दिक्पाल आपके चरणो को प्रणाम करते हैं ॥२५१॥

वडा पग नित्त वँदै दरवेस
अणी पग देव लहत आदेस
उळग्गत पाव धरम्म अलक्ख
चहै पग गोरख-आतुर-चक्ख ।२५२।

आपके महान् चरणो को ज्ञानी साधु प्रणाम करते हैं। देवता लोग इन्ही चरणो को नमस्कार करते हैं। आपके चरणो का यशगान करने से अलक्ष धर्म की प्राप्ति होती है इसीलिये गोरखनाथ वडी आतुर दृष्टि से आपके चरणो के दर्शनो को चाह रहे हैं ॥२५२॥

अळूझत पात्र विरक्त अमाण
सेवै पग राउर दास सुजाण
पगा स्रव वँदई जोडत पाण
भुवन्न-चऊद वँदे पग भाण ।२५३।

वडे वडे अमानी विरक्तगण आपके चरणो मे उलझ रहे हैं। आपके दास और ज्ञानी आपके चरणो की सेवा करते हैं। चौदह ही भुवन और उनके चौदह ही सूर्य हाथ जोड कर आपके चरणो में प्रणाम करते हैं ॥२५३॥

अहल्या दीधस उत्तम अग
सरीर कुवज्जाय कीध सुचंग
दियो नळ कूवड पूरव देह
न भाग्योह नागणि नाग सनेह ।२५४।

इन्हीं पावन चरणों ने शिलारूप अहिल्या को उत्तम अंग प्राप्त कराया। कुबड़ी कुब्जा की कूब को मिटा कर उसे सुंदर बना दिया। वृक्ष रूप नल और कूबर को अपनी पूर्व मनुष्य-देही दे दी। परस्पर अत्यन्त स्नेह वाले काली नाग और नागिन को आपके चरणों ने वियोग नहीं करा कर उनके स्नेह को तोड़ा नहीं ॥२५४॥

अखां उपमा नख कोट अरक्क
समाथ सरज्जण भांजण सक्क
इके खिण मांझ भँजै धर आभ
निपाय अधेखिण पद्‌मनाभ ।२५५।

आपके चरणों के नखों की उपमा करोड़ों सूर्य के समान है और वे इन्द्र जैसों को बनाने और विगाड़ने में समर्थ हैं। हे पद्मनाभ ! आपके चरण-नख एक क्षण में पृथ्वी और आकाश को नष्ट कर आधे ही क्षण में पुनः उत्पन्न कर सकते हैं ॥२५५॥

इसा पग तूझ तणाह उदार
सेवै तिहि पाप टळै संसार
म ठेल म ठेल पगां सुंय भूझ
त्रिविक्रम नाथ अनाथांह तूझ २५६।

आपके चरण कमल ऐसे उदार हैं कि जिनकी सेवा करने से संसार के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। हे अनाथों के नाथ ! त्रिविक्रम ! ऐसे आपके चरण कमलों से आप मुझे दूर नहीं कीजिये ॥२५६॥

वडा स्रव योगि वंछै पग-वास
तुहाळा पाव न मेलुंह तास
परीमळ कम्मळ सद्रस पग्ग
निधान परम्म निवारण श्रग्ग ।२५७।

सुगधयुक्त सु दर कमल के समान आपके चरण नरक का निवारण करके मोक्ष को देने वाले हैं। बडे-बडे योगीजन आपके चरणों मे निवास करने की इच्छा करते हैं। हे प्रभु ! अब आप मुझ पर भी ऐसी कृपा कीजिये कि मै आपके चरणो से कभी दूर नही रहूँ ॥२५७॥

छप्पय

असरण-सरण असग, परम मोहादि पनगह
सकर ब्रह्म सकत्ति, अखिल गण-ईस अनगह
मगळ बुद्ध मयक, तरण-तन मुकर गुरू लित
राह केत रथी-अरण, नवग्रह साति करै नित
पूरण पुनीत श्रीराम पद, विघन हरण त्रै लोक वर
परणाम हेत ईसर पुणै, ततह नाम भवसिंधु तर ।२५८।

अशरण-शरण, असग, परम मोहादि शत्रुओ के लिये पन्नगरूप, पूर्ण पुनीत, विघ्न हरण, त्रिभुवन मे श्रेष्ठ, परिणाम के हेतु श्रीरामचन्द्रजी के चरणो के प्रभाव से शकर, ब्रह्मा, शक्ति, गणेश, कामदेव आदि देवता और मगल, बुध, चद्र, शनि, शुक्र, गुरु, राहु, केतु और सूर्य-ये नौही ग्रह नित्य शान्ति करते हैं। अत ईश्वरदास कहते हैं कि हे प्राणी ! उस नाम का सुमिरण करके तू भी भवसागर से पार- हो जा ॥२५८॥

॥ ॐ शिव ॥

५. भक्ति महिमा

छंद विग्रखरी

भमतो राख हिवै जग भावन
प्रेम-भक्ति दै त्रिभुवन पावन
क्रिसन ! राख हिवै हूं-तूं करतो
धरणीधर मन ममता धरतो ।२५६।

हे धरणीधर ! हे श्रीकृष्ण ! त्रिभुवन को पावन करने वाली प्रेम भक्ति देकर अब आप मुझे चौरासी लाख योनियों में भटकने से रोक दीजिये। मैं और तू से संबंध रखने वाली मेरी और तेरी, इस ममता सें बचाइये ॥२५६॥

दूसरा अर्थ

हे जगत् के प्रिय ! तीनों भुवनों को पवित्र करने वाली आपकी प्रेम लक्षणा भक्ति देकर अब मुझे जन्म-मरण के भ्रमण से बचाइये और हे धरणीधर ! हे श्री कृष्ण ! मैं और तू रूपी अहंता और मेरापन रूपी ममता को मेरे मन से हटाइये ॥२५६॥

छंद मोतीदाम

दातार मुगत्त अणंकल देव
सालोक, सामीप सायुज्य सावेव
सदाणंद दाताह नांम सहस्स
रघुपती भक्ति तु अम्रत रस्स ।२६०।

हे निष्कल परमात्म देव ! आप सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य और सायुज्य मोक्ष रूप परमानद के दाता हैं। हे रघुपति ! आपके सहस्रो नाम हैं जो सदा भक्ति और आनद को देने वाले हैं, जिनके उच्चारण मात्र से ही अमृत वत रस की प्राप्ति होती है ॥२६०॥

भगत्त अधीन मुगत्ति भडार
अगोचर वेद ब्रह्म्म उचार
निरजणनाथ नमो निरवाण
क्रिसन्न महा घण रूप कल्याण ।२६१।

हे अगोचर ! आप भक्तो के अधीन और मुक्ति के भडार है, ऐसा वेद और ब्रह्मा कह रहे हैं। घनश्याम स्वरूप श्रीकृष्ण ! आप निरजन हैं, कल्याण स्वरूप हैं और निर्वाण स्वरूप हैं। आपको नमस्कार है ॥२६१॥

॥ ॐ शिव ॥

१. ब्रह्म दर्शन अर्थात् आत्म साक्षात्कार

छंद बिमारी

जवतां चरित तुहारा चेतन
जनम नही पुनरपि मानव जन
अकळ अजन्मा अलग्ग अलेपम
क्रम हो छुटिस तुझ जपतां क्रम ।२६२।

हे चेतन (ज्ञानस्वरूप)! आपके गुणानुवादों का कथन करने से प्राणी को पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता। आप कलाओं से रहित हैं, अजन्मा हैं, अलग हैं और अलेप हैं। आपके गुणानुवादों का कथन करने से मैं अपने कर्मों से छूट जाऊँगा ॥२६२॥

छंद मोतीदाम

पदारथ लक्षोहि तूझ परब्ब
गुना जिम नाना-वाणा ग्रब्ब
पुराण न अक्ख वेचाणा पस
जगत्पति तूंहिज तूं ज जगत्त ।२६३।

ताने-बाने के रूप में सूत ही समस्त वस्त्र में व्यापक है उसी प्रकार हे ब्रह्म! इस जगत के ताने बाने में पृथ्वी, जल आदि, किन्तु भी तुम रूप से व्यापक पदार्थ आप मुझे ज्ञात हुए हैं। पुराण आदि शास्त्रों के वर्णों में भी यही पढ़ने में आता है कि आप ही जगत्पति अर्थात् जगत का निमित्त कारण और आप ही जगत अर्थात् जगत् का उपादान कारण भी (अभिन्न रूप से केवल) आप ही हैं ॥२६३॥

जगत्त हि जातिय-पांतिह जांण
प्रछन्न हुओ तउ दीठउ प्रांण
दिठौ प्रभ आतम आपहि दाख
भुवन्न नहीं जिअ ठोड़ स भाख ।२६४।

जगत् के जाति भांति रूपी नाम रूपात्मक लौकिक ज्ञान से आप छिपे हुए होने पर भी मैने आपको नाम रूपों के प्राण स्वरूप (आधार रूप से) देख लिया है। मैंने अपनी आत्मा रूप से व्यापक प्रभु को देखा। चौदह भुवनों में कोई ऐसा स्थान नहीं जिसमें आप न हो ।।२६४।।

छुटो थयो माहव ! गूंघट छोड़
ठयो तू ठावो ठाविय ठोड़
मुणां किथ जाग असी जग-मूर
नहीं जिअ मांझ तुहारोय नूर ।२६५।

हे माधव ! जब मैने अपना अज्ञानावरण हटाया तो मिथ्या जगत से मैं पृथक् प्रतीत हुआ और आपको प्रसिद्ध एवं निश्चित स्थानरूप सर्वत्र व्यापक पाया। हे जगदाधार ! अब ऐसा कौनसा स्थान बतलाऊं कि जिसमें आपका अस्तित्व न हो ।।२६५।।

जळां-थळ थावर जंगम जोय
किथै हरि ! तूझ पखै नहीं कोय
मकोड़िय कीट पतंग मुणाळ
भिखंग तु हीज तु हीज भुआळ ।२६६।

जल, स्थल, स्थावर और जगम इत्यादि की आपके विना कोई सत्ता नही है। कीडी-मकोडी से लगाकर सूर्य और ब्रह्मा और भिखारी से लगा कर राजा पर्यन्त सभी रूपो मे एक मात्र आपही प्रकाशित हो रहे हैं ॥२६६॥

सोहो भरपूर रह्यो घणसाम
रमै घट माझ सदा तुहि राम
हरि ! तू वणाविय बाजिय हद्द
बाजीगर तूझ वडो हि विहद्द ।२६७।

हे घनश्याम राम ! आप सर्वत्र भरपूर है और सबके घटो मे (सत्ता और ज्ञान रूप से) आप रमण कर रहे है। हे हरि ! आपने यह कमाल बाजी रची। आप वह महा बाजीगर हैं जिसका कोई पार नही पा सकता ॥२६७॥

अछै सब माझ तु आप अळूझ
गोविंद ! तुहाळ लघो हिव गूझ
मुकद ! म पैठ पडद्दा माय
ठावो हो कीध सरव्वस ठाय ।२६८।

हे गोविन्द ! आपके रहस्य को अब जान गया। आप ससार के समस्त पदार्थों मे चिज्जड ग्रन्थि रूप आत्मा अनात्मा के तादात्म्य सबध से उलझे हुए अर्थात् ओत-प्रोत हुए हैं। उन सब पदार्थों मे अणु प्रत्याणु रूपी हृदयदेश मे आपके सत्ता स्फुर्यात्मक व्यापक रूप को जान लिया है। किन्तु हे मुकुन्द ! अज्ञानावरण के होते थके आपकी प्रतीति नही होती थी ॥२६८॥

अवै अराथांन हों देखत थांह
मांणस्सां देवत नागां मांहि
इंडज पिंडज जग [illegible]
माया मांय मुझ न भुलाव मुझ ।२६६।

मनुष्य लोक, देवलोक और नाग लोक, इन सभी लोकों में मुझे आपकी सत्ता के दर्शन होते हैं। अंडज, पिंडज, स्वेदज और उद्भिज इत्यादि योनियां—ये सभी आप ही की हैं। (किंतु नाम-रूपात्मक) माया है। मुझे उससे डर लगता है। इसलिये अब मुझे उसमें फिर न भुलाइये ॥२६६॥

सुरत्त तु हीज तु हीज सबद्द
मरद्द-महेळिय मांहि मरद्द
कतांत तु कर्म-क्रिया बुधि [illegible]
रमाड़ म पछा जगां हिव मोय ।२६७।

सुरत रूपी अंतःकरण की बुद्धि वृत्ति [illegible] और शब्द ध्वनि (सुरत द्वारा बिन्दु-सृष्टि और शब्द द्वारा नाद-सृष्टि) आप ही हैं। स्त्री-पुरुषों (नर और नारी जाति) में पौरुष, संहार-कर्त्ता काल, कर्त्ता, कर्म और इच्छा—ये सब आप ही हैं। इस प्रकार सर्वगत रूप ज्ञात हुए आप पुनः विस्मृत न होइये ॥२६७॥

म राख पड़दोय आडो मूझ
जिथां निरखां तिथ दाख्रव तूझ
विधोविध दीठौ मांझ त्रिभूत
धुताड़्य मूक परी हिव धूत ।२६८।

अब हे ईश्वर ! ऐसा करिये, कि जहाँ कहीं भी मेरी दृष्टि जाय, अस्ति, भाति, प्रिय रूप आपको ही देखू । नाम रूपात्मक अज्ञानावरण मे दृष्टि न जाय। युक्ति, प्रमाण और अनुभव से सब पदार्थों मे अनुगत एक आपको मै देख चुका हूँ। अपनी महान् आनन्द सत्ता को छिपा कर पच क्लेशो से आवृत्त मिथ्या और दुखमय ससार रूप दिखा देने की महान् धूर्तता करने वाले हे धूर्तेश्वर ! नाम रूपात्मक विकारो मे सत्य बुद्धि कराने की इस धूर्तता को अब आप शीघ्र त्याग दीजिये ॥२७१॥

प्रभु ! तू पाणिय नू ज पवन्न
गरज्जत भोम पियाळ गगन्न
इळा त्रय तू ज उडीयण अभ्भ
पुणगा मेघा माहि परभ्भ ।२७२।

हे प्रभु ! आप ही जल है, आप ही पवन है, आप ही पृथ्वी, पाताल और आकाश मे गरज रहे हे। तीनो लोक आपही है । आकाश के नक्षत्र आप ही हैं और सृष्टि को जीवन देने वाली मेघों की बूदे भी आप ही है ॥२७२॥

रमै तू राम जुवा धरि रग
तु हीज समद तु हीज तरग
अणु परमाणु तिहारो हि अस
हिवै म सँताय छतो थइ हंस ।२७३।

हे राम ! आप पृथक्-पृथक् आकार धारण करके इस प्रकार व्यापक हो रहे हो जैसे तरंगों में समुद्र और समुद्र में तरंगें। सृष्टि के अणु-अणु में आप ही का सत्यांश विद्यमान है। हे परमात्मन् ! इस प्रकार प्रकट होकर अब छिपिये नहीं ॥२७३॥

जड़्यो हिव ओभळ छोड़ जिवन्न
पेखां तुव डाळांय साखां पत्र
अजांण रि आगळ रे तु अजांण
जांणीता पाहि न अंतर जांण ।२७४।

हे जीवन (आत्मस्वरूप) ! मैंने आपको प्रत्यक्ष अपना स्वरूप जान लिया है। नाम रूपात्मक अप्रत्यक्षता सदैव के लिये मिटा दीजिये। इन नाम रूपों को आपके ही अनिर्वचनीय शाखा-प्रशाखा और पत्र रूप से मैं देखा करूं। अज्ञानियों के सम्मुख आप दूर हैं। हे ज्ञान स्वरूप ! ज्ञानियों को आप सदा प्रत्यक्ष है ॥२७४॥

लगाड़ गळै जनि अंतर लाय
वहेलो थाय नहीं सहवाय !
वसीकर सब्ब तुहाळो वेस
नहीं तू जेथ स दाखव नेस ।२७५।

क्षण मात्र भी स्वरूप की विस्मृति न करके सदा स्वरूप स्थिति में मुझ से अभिन्न हो रहिये, क्योंकि अब वियोग सहन

नही हो सकता । अपना नाम रूपात्मक बाह्य स्वरूप अस्ति, भाति, प्रिय रूप से स्वाधीन कर दीजिये। ऐसा कोई स्थल न हो जहाँ मै आपको अस्ति, भाति, प्रिय रूप से भिन्न देखूं ।।२७५।।

लख्यो हिव रूप प्रछन्न न लाय
मुरार ! प्रतक्ख हि बाहर माय
ठगारा ठाकर हेकट थीय
पडद्दो नाख परो हिव पीय ।२७६।

हे मुरारि ! बाहिर अस्ति, भाति, प्रिय रूप से और भीतर आत्मस्वरूप से मैंने आपको प्रत्यक्ष देख लिया है। अब पुन आवरण का कष्ट न करिये। हे प्रियतम ! अज्ञान रूपी आवरण को जो मैने हटाया तो ठगारा रूपी माया और ठाकुर रूपी चेतन दोनो अभिन्न प्रतीत हुए ।।२७६।।

जोयो हो राम विमासिय जेम
तना घट मा हरि ! दीठउ तेम
गळी गयो भ्रम्म छुटी मन गठ
करो हरि ! वात लगाडिय कठ ।२७७।

हे राम ! जिस व्यापक रूप से मैंने आपको देखा (अर्थात् जिस प्रकार श्रवण किया उसी प्रकार मनन एव निदिध्यासन करने पर) वैसा ही हृदय मे प्रत्यक्ष पाया। जिससे मेरे समस्त

भ्रम नष्ट हो गये और चिज्जड़-ग्रन्थि छूट गई।[१] हे आत्म-स्वरूप हरि ! अब ऐसी बात करिये कि मानो मुझे आप अपने कंठ से लगा कर एक हो गये हों अर्थात् मैं सदा अखंड आनन्द रूप में स्थित हो जाऊँ ॥२७७॥

त्रिणो नहँ पेखां आडो तूझ
मुखांमुख सेव कराड़उ मूझ
त्रिभंगिय ! हेक हुआ हम-तम्म
प्रपोटांय अंव तणीपरि प्रम्म ।२७८।

हे परम ! ध्याता, ध्यान और ध्येय रूप आप और हम एक ही होगये हैं; जैसे कि पानी और उसके बुदबुदे पानी से भिन्न नहीं। आप और हमारे बीच तृण मात्र भी अंतर लाने वाला कोई पदार्थ नही देख रहा हूँ अतः प्रत्यक्ष मेरी सेवा मुझे करने दीजिये। (अपने ब्रह्म स्वरूप को पहिचान कर उसमें लीन हो जाने की चेष्टा करूं ऐसी शक्ति दीजिये)। यथार्थतः ब्रह्म ही ब्रह्म की सेवा कर रहा है[२] ॥२७८॥

समांणोय तूझ मँहि घणसांम
रघूवर ! माहरो आतम रांम

---

१. भिद्यंते हृदयग्रन्थि छिद्यन्ते सर्व संशया।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।

२. चित्त चेतन्य विलास तद्रूप छे, ब्रह्म लटका करे ब्रह्म पासे।
—नरसी महता

महारउ ठाकर बैठो माहि
पुजावत आपहि आपहि पाहि ।२७६।

हे रघुवर ! अत्यन्त श्याम नामक अज्ञान मिथ्या होकर मेरा आत्माराम अभिन्न रूप से आप मे सम्मिलित हो गया। मेरा ध्येय रूप स्वामी मेरे अतर घट में अपना स्वरूप ही विराज कर आप ही अपनी पूजा करवा रहा है ॥२७६॥

अजै अह मझ तु वैसीय गूझ
पुजारा मु पच चढावहि पूज
सबै तुझ मझ तुहा थिय सव्व
उपज्जहि जेम सु अब्बुद अव्व ।२८०।

हे परमात्मन् ! आप हृदयगत दहराकाश में विराज कर गुह्य राज (अनिर्वचनीय प्रकाश) कर रहे हैं। पच ज्ञानेन्द्रिय रूप आपके पुजारे शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गध, इन पच विषयों द्वारा आपका पूजन कर रहे हैं। सत्ता-स्फूर्ति रूप से समस्त विश्व आपमें स्थित है और इसी रूप से आप सर्वत्र व्यापक हैं। जिस प्रकार मेघ से पानी उत्पन्न होता है उसी प्रकार यह सृष्टि आपसे उत्पन्न होती है ॥२८०॥

कहै जिम कथ करा सुहि काम
रिदा मझ लाधो तु आतमराम

नजीक निहाळ तनां मम नाथ
सदा शिव मुक्त असंगहि साथ ।२८१।

हे नाथ ! आप मुझे मेरे हृदय में निकटतम आत्म रूप से प्राप्त हुए। (यह महान आनंद का विषय है)। अब मैं संग रहित होकर सदा कल्याणकारी मुक्ति स्वरूप हो गया हूँ और केवल आपकी आज्ञा रूप वेदशास्त्रानुकूल (लोक संग्रह के निमित्त) कर्म करूंगा ॥२८१॥

समांणउ तूझ मँहि सुख सांत
वँछै वह सांम करां जिहि वात
सेवग्ग पयंपै तूझ समोह
विसन्न ! रखे हिव थाय विछोह ।२८२।

हे विष्णु ! मैं अभिन्न रूप से आपमें सम्मिलित होकर सुख शान्ति को प्राप्त हुआ। (प्रारब्ध निःशेष पर्यंत) आपकी (वेद की) आज्ञानुसार व्यवहार करूंगा। किन्तु हे प्रभु ! मैं यह निवेदन करता हूं कि कहीं अब ऐसा न हो कि मुझे पुनः अविद्या सम्मोहित करके आप से विछोह करा दे ॥२८२॥

दधी लहरी जळ हेक न दोय
हरी ! तिम तूझ विसै जग होय
मुकंद ! लहै कुण ताहरो भ्रम्म
अणू मझ दाखवि कोटि अलम्म ।२८३

जैसे समुद्र मे तरगें समुद्र रूप ही है, भिन्न नही है। उसी प्रकार हे हरि ! यह जगत भी आप से भिन्न नही है। हे मुकुद ! एक अणु मे करोडो सृष्टियें आप दिखा सकते हैं। आपके रहस्य को कौन जान सकता है ? ॥२८३॥

समाणउ सामिय माहि सरीर
गोविंद गदाधर ग्यान- गहीर !
प्रगट्टिय अतर पूरख-प्राण
आदेस करै सह आपहि आण ।२८४।

हे अज्ञान नाशक ज्ञान रूप गदाधर ! हे इन्द्रियों के अधिष्ठान ! ब्रह्मज्ञान के द्वारा आप परमात्मा मे मेरा आत्म-स्वरूप अभिन्न रूप से सम्मिलित हो चुका ! मेरे हृदय मे पुरुष नामक परमेश्वर प्राण नामक आत्म रूप से प्रत्यक्ष हो गया। अतएव आदेश करने वाले शासक और शासित केवल आप ही है ॥२८४॥

हुवा इम सामिय सेवक हेक
उळखिय अतर एक अनेक
हुवो हिव हेक जुओ नही होय
गगोदक आण मिल्यो गग जोय ।२८५।

वाहर जो नाम रूप से अनेक प्रतीत हो रहा है, वही अतर्दृष्टि करने से एक प्रतीत हो गया। जो तत्त्व रूप से

प्रत्यक्ष ही एक है, वह अब पृथक होना असंभव है। जिस प्रकार गगाजल गंगा में मिल कर एक हो जाता है; उसी प्रकार स्वामी और सेवक अर्थात् जीव और शीव (शिव) एक होगये।।२८५

समांणउ मांहि हुअउ सुख सांत
भरम्म दुआळ छुटै जग-भ्रांत
सथीरण सत्त-अणंद-सचेत
गोविंद ! गहीर तु ग्यांन-रुपेत ।२८६।

हे गोविन्द ! मेरी जगत की भ्रान्तियां और भ्रम आदि जगड्वाल मिट कर मैं आप में मिलकर अखंड सुख शान्ति को प्राप्त हो गया। हे सच्चिदानंद ! आपके इस गंभीर ज्ञान स्वरूप को प्राप्त कर मैं उसमें स्थिर हो गया हूं ।।२८६।।

सच्चिदायनंद अतीत संसार
विभू अतुळीबळ प्रम्म विचार
धरम्म करम्म परम्म सुधांम
रहीत सबद सु केवळ रांम ।२८७।

हे सच्चिदानंद श्रीराम ! आप संसार से विरक्त हैं, व्यापक है; अतुलित बलशाली और परम विचारणीय हैं। आप ही धर्म और कर्म हैं। आप ही परम धाम हैं और आपही शब्द रहित केवल्य रूप हैं ।।२८७।।

जाण्यो तव रुप कह्यो नव जाय
मळी जिम मूक सिता मुख माँय
पमै कुण पार तोरा परचड
वमै प्रति रोम विसै ब्रह्मड ।२८८।

जिस प्रकार मूक मिसरी को चखकर भी उसके मिठास का वर्णन करने में असमर्थ है, उसी प्रकार ही प्रत्यक्ष रुप से आपका स्वरुप जान लेने पर भी, वाणि का अविषय होने से वर्णन नही किया जा सकता। हे प्रचड ! आपके प्रत्येक रोम मे अनत ब्रह्माण्ड प्रतिभासित हो रहे है। आपका पार पाने में कौन समर्थ हो सकता है ? ॥२८८॥

तना मध आद प्रपूरण अत
सनक्क सनातन जाणत सत
तुही सब काळ तुही सब देस
निगम्म अनत करै निरदेस ।२८९।

समस्त देश कालो मे, आदि, मध्य और अत मे सनकादिक समान सर्वज्ञ सत आपको सनातन, प्रपूर्ण (व्यापक) जनाते हैं। और इसी प्रकार वेद आपको 'नेति' कह करके निर्देश करते है ॥२८९॥

दिठी तउ गत्त न बूझव देव
अगम्म अगोचर तोर अवेव

हे प्रभु ! आप इस जगत् के कारण रूप और उसके उद्धार कर्त्ता है। जगत् के समस्त पदार्थों में आप सर्वत्र व्यापक हैं। जगत् की उत्पत्ति और नाश आपकी माया है और हे सनातन ! आप इस जगत् के आधार और संग होते हुए भी आप इससे असंग है ॥२६४॥

बिना वप रूप अनंत विथार
अमूळ विसव्व-विरक्ख अधार
प्रछन्न प्रतक्ख प्रधांन-पुरक्ख
अगोचर हेक अनेक अलक्ख ।२६५।

आपका कोई शरीर और रूप (आकृति और अवस्था) नहीं, फिर भी आप अनंत विस्तार वाले है। आप विश्व रूपी वृक्ष के आधार हैं परंतु स्वयं आधार (मूल) रहित है। आप गुप्त हैं और प्रत्यक्ष प्रधान पुरुप भी है। एक, अगोचर और अलक्ष्य हैं और अनेक भी हैं ॥२६५॥

ग्रहै विण पांण अपाव गवन्न
अलेखत रूप सोहो अनअन्न
मुनेस महा चित अंतर मंझ
प्रचंड महावळ तेज-प्रचंड ।२६६।

मुनीश्वर गणों के महान हृदयों में निवास करनेवाले हे प्रचण्ड वली और तेज के पुंज ! आप विना हाथों के ग्रहण

करने वाले और विना पाँवो के चलने वाले है एव विना नेत्रो के अणु अणुगत समस्त रूपो को देखने वाले है ॥२९६॥

अखील तपोनिध त्रीगुण-ईस
अजीत जराअत जोग अधीस
विमव्व विमोह विसन्न विग्यान
रतीपत-तात ! प्रकर्त्ती-राजान ।२९७।

हे तपोनिधि ! आप त्रिगुणात्मक सृष्टि के अखिलेश्वर हैं। जरा और मृत्यु से नही जीते जाने वाले योगीश्वर (शकर) हैं। विश्व को मोहित करने वाले विष्णु हैं और विज्ञान रूप (ब्रह्मा) हैं। आप कामदेव के पिता और माया के पति हैं॥२९७॥

वदै इम ईसर सूव्व-वियाप
जुवो जनि थाय अजप्पा जाप
अजपाय जाप तणो तु अधीस
अजपा माहरो आतम ईस ।२९८।

ईश्वरदास कहते हैं कि हे ईश्वर ! आप सर्वत्र व्यापक हैं एवम् 'अजपा जाप' अर्थात् मन और वाणि के अविषय हैं। आप अजपा जाप के आधार हैं और मेरा आत्मा भी मन-वाणि का अविषय है। अतएव आप और मैं—एक हैं। अब पुन सम्मोहन द्वारा पृथक न हुइये ॥२९८॥

अकरम करम उपाय कर, जागविया तैं जीव ।
जगपत ! को जांणै नहीं, गत थारी हयग्रीव ।३०३।

शुभाशुभ कर्मों को उत्पन्न करके आपने इन जीवों की सृष्टि की। आपके इस रहस्य को हे जगत्पति ! कोई नहीं जानता ॥३०३॥

खांण चियारै खोण धर, जाया जे दी जंत ।
कीधा कुण-पाखै किसन ! उत्तम मध्यंम अंत ।३०४।

हे कृष्ण ! जिस दिन आपने पृथ्वी पर चतुर्विध जीवों को उत्पन्न किया तो इनको उत्तम, मध्यम और निकृष्ट किसलिये बनाया ? ॥३०४॥

ताहरि इंछा दीध तैं, जीवां आदि जनम्म ।
तित कित हूता अम-तणां, केसव ! कसा करम्म ।३०५।

हे केशव ! हम तो यही जानते है कि आपने अपनी इच्छानुसार आदि में जीवों की सृष्टि की। उस समय वहाँ हमारे कौन से कर्म शेष रह गये थे ? ॥३०॥

ओ परपंच अमाप रो, तू करता त्रीकम्म ।
आपांपै अळगो रही, केक भळावै क्रम्म ।३०६।

हे त्रिविक्रम ! इस अपरिमित प्रपंच के कर्त्ता आप हैं। किन्तु उससे अलग रहकर आपने इस झगड़े को औरों के सिर डाल दिया ॥३०६॥

एह पटतर दाख इम, वतसळ-भगता ब्रह्म ।
कीधा अम के तम किया, धुर हरि पाप धरम्म ।३०७।

हे भक्त वत्सल ब्रह्म ! मुझे यह रहस्य तो बताइये कि इन पाप और पुण्यों को प्रारम्भ में आपने पैदा किया या हमने ? ॥३०७॥

विण अपराध विटवतो, रे हो त्रिभुवन राय !
कर कूडा सासत्र कथन, कर कूडा क्रम काय ।३०८।

हे त्रिभुवन पति ! इस जीवात्मा को विना अपराध ही जन्म-मरण के दुखों को भुगताते हुए इधर-उधर मारा-मारा भटकाया जा रहा है । यह क्या रहस्य है ?

सृष्टि के आदि में एक से अनेक (एकोऽहम् बहुस्याम्) होने की अपनी इच्छा से मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष आदि रूपों में आप उत्पन्न होगये—शास्त्रों के इस कथन को या तो असत्य ठहरायें या फिर कर्मों की प्रधानता को असत्य ठहरायें कि जिसके कारण—"जैसे-जैसे कर्म किये जाते हैं, उनसे प्रेरित होकर वैसे-वैसे जन्म धारण करने पड़ते हैं",—माना जाता है ? ॥३०८॥

कीधा कुण पूगो किसन, वडा सामुहो वाद ।
आद न को तो मो अनत !, आतम करम न आद ।३०९।

हे कृष्ण ! महद् पुरुषों से अथवा महद् पुरुषों के विषय में विवाद करके कौन सफल हो सका है ? अर्थात् कोई नहीं

हो सका। कारण कि हे अनन्तात्म रूप परमात्मा ! न तो आपके आदि-अंत का, और न कर्मो की गहन गति का ही पता लग सकता है ॥३०९॥

क्रमगत पूछां तो कना, गोविंद हों गेमार।
आड वसंती डेडरी, पुणै समंदां पार ।३१०॥

अतः हे गोविद ! कर्मो की गति के विषय में आप से मेरा जो प्रश्न करना है, वह निरा गँवारपन है। और वैसा ही है, जैसा कि पानी के भरे छोटे खड्डे में रहने वाला मेंडक समुद्र के पार की बात कहता हो ।३१०॥

छप्पय

अमर मेर आधार, मेर वसुधा आधारं।
धरा सेस आधार, सेस कोरम साधारं ॥
कोरम जळ आधार, नीर सु अनिल अधारे।
अनिल सक्ति आधार, सक्ति करतार सधारे ॥
करतार सदा निरधार ही, कवि म राच दूजा करम।
आपेज करंतो आप फळ, आपहि विलसै इहि मरम ।३११

देवताओं का निवास मेरु पर्वत है। मेरु पृथ्वी पर टिका हुआ है। पृथ्वी का आधार शेष है। शेष का आधार कूर्म,

कूर्म का आधार जल, जल का आधार वायु, वायु का आधार शक्ति, शक्ति का आधार कर्त्ता (ईश्वर) और कर्त्ता निराधार (अर्थात् कारण रहित सर्वं तत्र-स्वतन्त्र सर्वं शक्तिमान्) है।

इसलिये कवि कहता है कि उस कर्त्ता को छोड़ कर, जो अन्योन्य आधार वाले हैं, उनके निमित्त कर्मों को करके व्यर्थ ही उनकी ओर प्रवर्त्त नहीं होना चाहिये। क्योंकि कर्म का करने वाला और उसका भोक्ता एवम् उसका फल वह स्वयम् है। यह शास्त्रों का गुह्य सिद्धान्त है। यथा—॥३११॥

अहमेवहि यज्ञाना भोक्ता च प्रभुरेवच ॥ गीता अ० ६
उपद्रष्टाऽनुमता च भर्त्ता भोक्ता महेश्वर ॥ गीता अ० १३



॥ ॐ शिव ॥

३. श्री हरि सुमिरण उपदेश

अवध नीर तन अंजळी, टपकत सास-उसास ।
हरी भजन विण जात है, अवसर ईसरदास ।३१२।

ईश्वरदास कहते हैं कि शरीर रूपी अंजली में से आयु रूपी जल स्वाच्छोस्वास की बूंदों के रूप में टपक रहा है। अर्थात् स्वास प्रति स्वास इस शरीर की आयु बीत रही है। मनुष्य शरीर पाने का अमूल्य अवसर हरि के भजन विना यों ही बीता जा रहा है ॥३१२॥

हिया म छंडै हरि भगति, रसण म छंडै रांम ।
अंतरजांमी आंपणों, ठाकर है सह ठांम ।३१३।

अतः सर्वत्र विराजमान आत्मस्वरूप अंतर्यामी प्रभु को हृदय से (हरि) भक्ति को और रसना द्वारा उसके 'राम' नाम को कभी नही छोड़ना चाहिये ॥३१३॥

हरि हरि करतां हरख कर, अरे जीव अणबूझ ।
पारस लाधो ओ प्रगट, तन मांनव में तूझ ।३१४।

हे अबोध प्राणी ! तू आनंद मनाता हुआ श्री हरि का नाम उच्चारण कर, क्योंकि इस मनुष्य शरीर में तुझे इस हरि नाम रूप प्रत्यक्ष पारस की प्राप्ति हुई है ॥३१४॥

नारायण ना विसरिये, नितप्रति लीजै नाम ।
जे लाधो मिनखा जनम, करिये उत्तम काम ।३१५।

हे प्राणी ! भगवान को भूलिये नही । नित्य प्रति उसका नाम लेते रहना चाहिये । मनुष्य जन्म मिल जाय तो फिर ऐसे उत्तम काम को ही करना चाहिये ।।३१५।।

आतम ! आळस पहल तज, ओळग आद विसन्न ।
जेह मनोरथ मन करैं, सो पूरवै क्रिसन्न ।३१६।

इसलिये हे प्राणी ! तू प्रथम आलस्य का त्यागकर श्री आदि विष्णु का सुमिरण कर । तेरे मन की कामनाओ को श्री कृष्ण पूर्ण करेंगे ।।३१६।।

हंस माहळा मूढ रे ! कर हर-सर विसराम ।
मर मर धर पर फर मती, उर धर गिरधर नाम ।३१७।

हे अज्ञानी हंस ! तू बार-बार जन्म लेकर संसार में मत भटक । हृदय में श्री कृष्ण का नाम धारण करते हुए उस परब्रह्म-सरोवर में जाकर विश्राम कर ।।३१७।।

राम भणो भण राम भण, अवरा राम भणाय ।
जिअ मुख राम न उच्चरै, जा मुख लोह जडाय ।३१८।

श्री राम का नाम बार-बार बोलते रहना चाहिये और दूसरो के मुख से भी बुलवाते रहना चाहिये । और जिस मुख

से राम का नाम नहीं निकलता, उसके मुंह में ताला लगवा देना चाहिये ॥३१८॥

जीह भणोभण जीह भण, कंठ भणोभण कंठ ।
मो मन लागो महमहण, हीर पटोळै गंठ ।३१९।

जिह्वा और कंठ द्वारा पुनः पुनः उच्चारण करते रहने से मेरा मन उस महा महार्णव परब्रह्म से इस प्रकार गुँथ गया है कि जिस प्रकार रेशमी वस्त्र में लगी हुई हीरा गांठ ॥३१९॥

जीहां जप जगदीसवर, धर अंतर में ध्यांन ।
क्रम बंधण नह बंधवै, भो-भंजण भगवांन ।३२०।

हे प्राणी ! तू भय भंजन भगवान् जगदीश्वर का अंतर में ध्यान रखता हुआ जिह्वा द्वारा उसका जप कर । तो तू संसार के शुभाशुभ कर्मों के बंधन में नहीं बँध सकेगा ॥३२०॥

नर ! हर वीसरजै नहीं, आतम मूढ अजांण ।
काळ सवळ जग काटवा, कस उभो केवाँण ।३२१।

हे अज्ञानी जीव ! श्री हरि को भूल मत (नित्य सुमिरण कर), क्योंकि मृत्यु ससार का संहार करने के लिये तलवार कसे हुए सदा सिर पर खड़ी है ॥३२१॥

प्रभू भजंतां प्रांणिया, कीजै ढील न काय ।
भर वाथां अथ काढियै, मंदर बळतां मांय ।३२२।

जलते हुए घर मे से जिस प्रकार दौड दौडकर और वार्थ भर-भर कर धन निकाला जाता है, उसी प्रकार हे प्राणी ! इस विनाश होते हुए काया रूपी घर मे से प्रभु का भजन रूपी जितना धन तू सग्रह कर सकता है, उसके लिये किंचित भी विलब मत कर ॥३२२॥

राम जपंता रे रिदा, आळस म कर अजाण ।
जे तू गुण जाणै नही, पूछ तु वेद पुराण ।३२३।

हे अज्ञानी हृदय ! राम का नाम जपने मे तू आलस मत कर। उस नाम की महिमा यदि तू नही जानता है तो वेद और पुराणों को पढ-सुनकर मालूम करले ॥३२३॥

जद जागै नद रांम जप, सूता रांम सभार ।
ऊठत वेठत आतमा, चालता चीतार ।३२४।

हे प्राणी ! जागते, सोते, उठते, वैठते और चलते हुए-किसी भी काम को करते हुए आत्मस्वरूप श्रीराम का तू सुमिरण कर ॥३२४।

रहे विलू वो राम रस, अनरस गणै अलप्प ।
एह महा-ध्रम आतमा, ए तीरथ ए तप्प ।३२५।

सासारिक रसो को तुच्छ समझकर राम नाम रूपी रस को पीते हुए जो उसमे लीन रहता है, उसके लिये यही वडे से वडा धर्म, तीर्थ और तप है ॥३२५॥

रूड़ो करही रांमजी, सह वातां थीरंग ।
भगतां पर भूधर धणी, चाढण नीर सुचंग ।३२६।

हे प्राणी ! भगवान् श्री राम सभी प्रकार आनंद और श्रीवृद्धि के करने वाले हैं। तू विश्वास रख। अपने भक्तों की निर्मल प्रतिष्ठा बढ़ाने में भगवान् भूधर सदा तत्पर रहते हैं ॥३२६॥

भाग वडा तो रांम भज, दिवस वडा तो देय ।
अकल बडी उपगार कर, वेह धन्यां फळ एह ।३२७।

हे प्राणी ! यदि तू भाग्यशाली है तो श्री राम का भजन कर, समय अनुकूल है तो दान कर, और बड़ी बुद्धि वाला है तो दीनों का उपकार कर। मनुष्य शरीर धारण करने का फल इन्हीं बातों में है ॥३२७॥

बोह न भूलूं वापजी, जे सिर छत्र ज होय ।
कर जीहा लोचण करण, किसो सु आपै कोय ?३२८।

हे पिता ! यदि मेरे सिर पर छत्र भी धारण करा दिया जाय (दीन से राजा वना दिया जाय), तो भी मैं आपको नहीं भूलूँगा। संसार में ऐसा कौन है जो हाथ, जिह्वा, नेत्र और कान इत्यादि—कर्म और ज्ञानेन्द्रियों से आत्मस्वरूप को समझने योग्य—शरीर को संपूर्ण भाँति भूषित, आपके सिवा कोई है, जो इन्हें प्राप्त करा सके ? ॥३२८॥

राम नाम रसणा रटो, वासर वेर अवेर।
अटक्या पछी न आवही, राम तणी मुख रेर।३२९।

अत हे मन ! तू सदा ही समय असमय भी श्री राम का नाम अपनी जिह्वा से रटता रह। क्योकि कठ रुक जाने पर श्री राम के नाम की ध्वनि निकल नही सकेगी ॥३२९॥

राम भणता रे रिदा ! कह गुण केता होय ?
मानै ठाकर जग नमै, असण न पीडै कोय।३३०।

हे हृदय ! देख, श्रीराम नाम का उच्चारण करने से कितने लाभ होते हैं ? वह बडा माना जाता है, ससार उसके आगे सिर झुकाता है और शत्रु उसका नाश नही कर सकते ॥३३०॥

राम सजीवण मत्र रट, आमय लगै न अ ग।
जेता दुख है जगत मे, सुजि ओखद श्रीरग।३३१।

श्री राम के सजीवन-मत्र को रटने से शरीर मे कोई रोग नही लगता। ससार मे जितनी प्रकार की आधि-व्याधियाँ हैं उन सब की एक मात्र औषधि भगवान् श्रीरग—श्रीराम का नाम है ॥३३१॥

रसणा रटै तो राम रट, वयणा राम विचार।
स्रवण राम गुण सुण सदा, नयणा राम निहार।३३२।

एरे नर ! परहर अवर, हर हर सुमर हिआह ।
संत सुदामा सारखा, कोटीधज्ज कियाह ।३३९।

हे मनुष्य ! तू सांसारिक आल-जंजाल (व्यर्थ की बातों) को छोड़ कर अपने हृदय में निरंतर श्री हरि का सुमिरण कर । श्री हरि सुमिरण के प्रताप ने सुदामा जैसे दीन संत को क्षण भर में कोटिध्वज बना दिया ॥३३८॥

हित सूँ हरि भज रे हिया ! आळस म कर अजांण ।
जिअ पांणी सूँ पिंड रच्यो, पवन विळूंधो प्रांण ।३४०।

जिसने पानी की बूंद से शरीर की और उसमें पवन को युक्त करके प्राणों की रचना की है, उस हरि को हे अजान ! तू हृदय से भजने में आलस मत कर ॥३४०॥

आळसवांण अजांणवां, दिल खूटल सूँ दूर ।
साहब साचा साधवां, है हाजरा-हजूर ।३४१।

जो आलसी हैं, अज्ञानी हैं और जिनके दिल अंदर से कुटिल हैं—उनसे भगवान् दूर हैं। और जो सच्चे साधु हैं उनके लिये वह सर्वत्र व्यापक एवं अंतर्यामी रूप से सदा हाजिर-नाजिर है ॥३४१॥

पलक निमेख न पांतरौ, दाखौ दीनदयाळ ।
धरणीधर हिरदै धरो, गुण गावो गोपाळ ।३४२।

हे प्राणी ! एक निमिष भी उस दीनदयाल को मत भूल । श्री धरणीधर गोपाल कृष्ण को हृदय मे धारण करके नित्य उसके गुणो को गा ॥३४२॥

आठू पहर अणद सूं, जप जीहा जगदीस ।
केसव क्रिसन कल्याण कहि, अखिलनाथ कह ईस ।३४३।

हे प्राणी ! तू अपनी जिह्वा से आठो पहर आनद के साथ अखिल विश्व के स्वामी श्रीकृष्ण, केशव और जगदीश्वर के कल्याणकारी नामो का उच्चारण किया कर ॥३४३॥

भगतपाळ भगवत भणी, ध्यान सगुण उर धार ।
चित निसदिन हरिहर उचर, सासोसास सभार ।३४४।

भक्तो की रक्षा करने वाले भगवान के प्रति अत्युत्कट सगुणोपासना से ध्यान धारण कर और नित्यप्रति चित्त से श्रीहरि और श्री शिव के नामो का स्वास प्रति स्वास उच्चारण कर ॥३४४॥

आतम हूसी एकलो, छूटत तन सगाथ ।
साथी तिण दी सखधर, सुरग तणै पथ साथ ।३४५।

हे जीवात्मा ! शरीर का साथ छूट कर जिस दिन तू अकेला रह जायगा, उस समय तेरे स्वर्ग पथ के साथी केवल श्री नारायण ही होगे ॥३४५॥

केसव कहि कहि सुमरिये, नव सुइये निरधार ।
रात दिवस रै सुमिरणै, पूगै अवस पुकार ।३४६।

श्री केशव के नाम का सुमिरण बार बार करते रहना चाहिये। निराधार होकर प्रमाद से सो नहीं जाना चाहिये। (ईश्वर के अवलम्बन से रहित होकर समय व्यतीत करने का प्रमाद मत कर)। रात-दिन सुमिरण करते रहने के कारण कभी न कभी तेरी पुकार अवश्य पहुंचेगी ही ॥३४६॥

मन पाखै ही महमहण, चविये जिहां चरित्त ।
आतम पीवां अवस ही, अमर करै अमरत्त ।३४७।

मन नहीं होने पर भी जिह्वा से महा महार्णव (परब्रह्म) का चरित्र गाते रहना चाहिये। क्योंकि अमृत को यदि बिना मन पिया जाय तो भी वह अमर कर देता है ॥३४७॥

नारायण भज रे नरा ! अंतरजामी एक ।
सांई जो सवळो हुवै, अवळा हुवो अनेक ।३४८।

हे मनुष्य ! तू उस एक अंतर्यामी श्री नारायण का भजन कर। वह यदि तेरे अनुकूल है तो अनेक प्रतिकूल होने पर भी तेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते ॥३४८॥

छप्पय

क्रोध नहीं केदार, प्राग जमना नहीं पायो ।
सेतबंध रांमेस, भटकतो भूम न आयो ॥
गया न न्हायो गंग, दांन कुरछेत न दीधौ ।
जुहारयो न जगदीस, करम भवबंधन कीधौ ॥

तन पाय सुभग मानव तणो, प्रेम न अंतर पाईयो ।
ईसरो कहे रे आतमा ! गोविंद गुण नह गाईयो ।३४९।

केदार, प्रयाग, सेतुबंध रामेश्वर, गया, गंगा, कुरुक्षेत्र, जगदीश इत्यादि तीर्थों में जाकर दर्शन, स्नान, दान, प्रणाम और साधुओं का सत्संग नहीं किया और तू सुंदर मनुष्य शरीर पाकर श्री गोविन्द का गुण गाते हुए उसके प्रेम में नहीं पगा तो ईश्वरदास कहते हैं कि संसार में आकर और कर्म बन्धनों में फंसता रहा ।।३४९।।

मात उदर नव मास, रुदत ऊंधे सिर रहियो ।
तद पायो नर तन्न, संकटा पूरण सहियो ।।
पसू जेम रहि पेट, सोण मळ मूत्र सु खायो ।
भज्यो नहीं भगवान, गाढ सुख मूळ गमायो ।।
जगदीस भजन जाण्यो नहीं, धायो घर धंधो धरै ।
धर ध्यान ईसरा संक धर, अजी राम मुख ऊचरै ।।३५०।

पशु की भाँति मल-मूत्र और रक्त को खा पीकर नौमास माता के उदर में औंधे सिर लटकता रहकर रोता रहा। प्रसव के अनेक भाँति संकट सहकर फिर मनुष्य जन्म पाया, परंतु भगवान का भजन फिर भी नहीं किया। परम और सत्य सुख को मूल से खो दिया। जगदीश के भजन को नहीं जानकर भाग-दौड़ करता हुआ घर-धंधे में रत रहता है। ईश्वरदास कहते हैं कि हे प्राणी ! अब तो तू निर्भय होकर श्री राम के नाम का उच्चारण करता हुआ अब भी उसका ध्यान धरे तो अच्छा है ।।३५०।।

॥ ॐ शिव ॥

४. सत्य महिमा

साच पियारो सांईआं, सांई साच सहाय ।
साचां अगन नि साळगै, साचां स्रप न डसाय ।३५१।

सत्यवादी के अस्तित्व को (सच्चे को) त्रिताप रूपा अग्नि जला नहीं सकती। काल रूपी सर्प के डसने से भी सत्यवादो का अस्तित्व मिट नहीं सकता। सत्य परमात्म स्वरूप है अतः वह उसको प्यारा है। परमात्म स्वरूप सत्य सदैव सत्यवादी की शक्ति के रूप में सहायता करता है ॥३५१॥

---

५. श्री मद्भागवत महिमा

दूहो

जाड टळै मन मळ जळै, थावै निरमळ देह ।
भाग हुवै तो भागवत, सांभळिये स्रवणेह ।३५२।

जिसके श्रवण मात्र से मन के विकार और अज्ञानता का नाश होकर, यह देह निर्मल—पाप रहित हो जाता है। जिनके भाग्य में बदा है, वे भाग्यशाली ही श्रीमद्भागवत की कथा को अवश्य सुनते है ॥३५२॥

॥ ॐ शिव ॥

६. श्री हरिरस महिमा

दूहा

हरिरस हरि रस हेक है, अनरस अनरस आण ।
विण हरिरस हरिभक्ति विण, जनम व्रथा कर जाण ।३५३।

रस रूप आनन्दात्मक हरि और यह हरिरस काव्य—इन दोनो मे कोई अन्तर नही, एक ही हैं। ससार के अन्य रसो को रसहीन जानो। अत ऐसे हरिरस और हरि की भक्ति के बिना अपने जन्म को वृथा समझना चाहिये ॥३५३॥

सरव रसायण मे सरस, हरिरस समो न कोय ।
हेक घडी घट मे रहै, सह घट कचन होय ।३५४।

समस्त रसायनो मे हरिरस के समान अन्य कोई श्रेष्ठ रसायन नही है। जो यह रसायन एक घडी ही घट के भीतर रह जाय तो समस्त घट कचन जैसा-आनद रूप हो जाता है ॥३५४॥

सकळ हरीरस सोध सुभ, वाणी अरथ विचार ।
स्रवण करै सुध मन सदा, तो सूझै तत सार ।३५५।

वाणी और अर्थ के विचार रूपी शोधन सहित इस शुभ हरिरस को जो शुद्ध मन से नित्य सुनता है, उसे सार तत्व जो ब्रह्मतत्व है उसका साक्षात्कार हो जाता है ॥३५५॥

हरिरस सूं सुध-बुध हुवै, कस्ट न व्यापै कोय ।
हरिरस सूं सदगत सदा, लहै सकळ नर लोय ।३५६।

हरिरस के सुनने पढ़ने से बुद्धि पवित्र होती है। आधि-भौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक—किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं व्यापता और समस्त स्त्री पुरुष सदगति को प्राप्त होते हैं ॥३५६॥

तनक भनक हरिरस तणी, कंठ-प्रांण सुणि कांन ।
महा पाप सह मोचही, आवै जनम न आंन ।३५७।

कंठ में प्राण आने के समय हरिरस की थोड़ी सी भनक भी सुनाई दे दे तो उसके समस्त महापापों का नाश हो जाता है और फिर वह जन्म में नहीं आता । ३५७॥

हरिरस सूं स्रब सुख हुवै, हरिरस सूं स्रब ग्यांन ।
हरिरस सूं नव निध हुवै, हरिरस रूप निधांन ।३५८।

हरिरस से सर्व सुख (अखंड सुख) की प्राप्ति होती है। हरिरस से सर्वोत्तम-ज्ञान की प्राप्ति होती है। हरिरस से नौ निधियों की प्राप्ति होती है और हरिरस से उस अखंड रूप की प्राप्ति होती है ॥३५८॥

छंद मोतीदाम

हरीरस रो रस लेन हमेस ।
लगै नहि काळ भय लवलेस ॥
जपे कव ईसर बे कर जोड ।
कथता हि पाप टळै दुख क्रोड ।३५९।

जो पुरुष हरिरस के रस का पान करता है उसको काल भय लवलेश भी नही होता । कवि ईश्वरदास दोनो हाथ कर कहते हैं कि हरिरस का ध्यानपूर्वक कथन करने वाले के करोडो पाप और दुख निवृत्त हो जाते हैं ।।३५९।।

दूहा

ओ अवसर नँहि आवसै, आखै ईसर एह ।
पूण रे हरिरस प्राणिया, जनम सफळ कर जेह ।३६०।

कवि ईश्वरदास कहते है कि इस मनुष्य जन्म का अवसर फिर प्राप्त नही होगा । इसलिये हे प्राणी ! तू हरिरस का कथन कर, जिससे तेरा जन्म सफल हो जाय ।।३६०।।

कवि ईसर हरिरस कियो, छंद तीनसौ साठ ।
महा दुस्ट पामै मुगत, पो उठ कीजै पाठ ।३६१।

कवि ईश्वरदास कहते हैं कि मैंने यह तीन सौ साठ छंदों का हरिरस निर्माण किया है जिसका प्रातःकाल उठकर पाठ करने से महा दुष्ट भी मुक्ति को प्राप्त हो जाता है ॥३६१॥

॥ श्री हरिरस संपूर्णम् ॥

सं० १८०७ जेठ सुदी ११ लिखी धांमट देय[गाम] वीठू [जा]मध्ये ......दर......डु......रट लखजी री पोथी........लिखी छै ॥

---

* पचहत्तर प्रतिशत पाठ इस विषय-विभाजित प्रति के आधार पर है। अतः इस प्रति की प्रशस्ति दी गई है।

अनुक्रमिक प्रथम-पँक्ति-सूची

परिशिष्ट १

॥ ॐ शिव ॥

परिशिष्ट १

अनुक्रमिक प्रथम-पंक्ति सूची

अ

उ

ए

ओ

क

च

छ

ज

त

द

घ

न

ब

भ

म

र

ल

व

स

ह

शब्द कोष

परिशिष्ट २

परिशिष्ट २

शब्द कोष

अ

अक (१०६) चिन्ह
अत (३०४) निकृष्ट, अल्प
अतरजामी (३४७) अतर्यामी
अधाधुध (३३४) अधकारमय
अब (२७८) जल
अकरूर (२४७) श्रीकृष्ण के चाचा अक्रूर
अकलंक (१५३) कलक रहित
अकल (२१५, २२२, २६०) अकलनीय
अकलीम (६३) अकलनीय, ईश्वर
अकामिय-अग (१५८) अकामीजनो के अग
अखर (१३७) नाश रहित
अक्खर (१६५, १६६, २३०) अक्षर, वर्ण
अक्रम्म (६०) अक्रिय कर्मों से रहित
अकृम्म (१५७) पाप, अकृत्य
अखनाय (२२४) लेते हो, कहते ही
अखा (२५५) कहूँ
अखे (२४५) कहते हैं
अखेमाळ (६६) अक्षमाला
अखोण (४६) अक्षौहिणी
अगम्म (१३६, १४४, २६०) अगम्य
अगा (२१२) आगे
अगाध (२४) अत्यन्त, अधिक
अगेह (१४४) घर रहित
अग्गि (२४१) आगे
अग्राह (१४) अग्राह्य
अघ मजण (१०५) पाप धाने वाला पापों का नाश करने वाला
अघराण (२३६) सुगन्धि
अचुतानद (७५) अच्युतानन्द
अछेह (७८) अनन्त
अछै (२६८) है
अजपाय (१७) अजपा जाप द्वारा जपने योग्य
अजपाय-जाप (२२३, २६८) अजपा जाप
अजप्पाय जाप (२६७) अजपा जाप
अजस्सिव (१५४) ब्रह्मा और शिव
अजाण (२०५) अनजान में

अजांण (२७४) अप्रत्यक्ष
अजांण (३३७, ३४०) अज्ञानी
अजांण रि (२७५) अज्ञानियों के
अजांणवां (३४१) अज्ञानी लोगों को
अजात (१४१) अजन्मा
अजूं (२२०, २२१) अब भी
अजेव (५९) अजेय
अजोणी (२१५) अयोनि
अजोधिया (३४) अयोध्या
अजौ (३५०) अभी भी
अज्ज (७५) अज, अजन्मा
अटक्यां पछी (३२९) रुकने के बाद
अढार (४६, ६५) अठारह
अणकल (२६०) निष्कल
अणकव (१४४) चिन्ह रहित
अणंद (३४३) आनन्द
(अण) रहित, विना (राजस्थानी भाषा का एक उपसर्ग)
अण-आँमय (९०) १ निरोग २ माया रहित
अणपार (२२२) अपार
अणबूझ (३१४) अबोध
अणाय (३४) ला करके
अणी (२५२) इन
अतुळीबळ (२८७) अतुलित बलशाली
अथ (३२२) धन, अर्थ
अधीस (५९) प्रभु
अधै खिण (२५५) आधे ही क्षण में
अधोखज (१३७) अधोक्षज, विष्णु
अनंख (१४२) इच्छा रहित
अनंगह (२५८) कामदेव, अनंग
अनंत (३७) लक्ष्मण
अन (१३३) अन्न
अन (३२५) दूसरा
अन अन्न (२९६) १ अन्योन्य, अणु-अणु
अनत (१५) अनन्त
अनरस (३५३) १ अन्य रस, २ रसहीन
अनाथ (१४४) जिसका कोई स्वामी न हो
अनीत (६१) अनीति
अनील (१७३) पवन, अनिल
अनीलोय (१४०) श्वेत
अनेस (१४१) १ जिसका कोई स्वामी नहीं, २ जिसका कहीं निवास नहीं
अनेह (१४४) इच्छा रहित
अनै (१९४) और
अनोअन (४८) अन्योन्य, परस्पर
अप (१७३) पानी
अपरम प्रम (१०९) अप्रमेय

अप्रम्म (९३) परम, अप्रमेय
अपाव-नवस्न (२९६) बिना पांवो के चलने वाला
अपीत (१४१) पीला नही
अब्ब (२८०) पानी
अभ्भ (२७२) आकाश
अभग (४८) नाश न होने वाला
अभूत (५१) अद्‌भुत, अभूतपूर्व
अभैमन (५०, २४७) अभिमन्यु
अम (३०७) हमने
अम तणा (३०५) हमारे
अमरत्त (३४७) अमृत
अमरीख (५२) अम्बरीष
अमाण (२४३) अमानी
अमाणिय (१७८) हमारी, मेरी
अमीय (८४, २३९) अमृत
अमीय मय (१८२) अमृतमय
अम्म (१९) हमे, हमको
अम्रित वाव (२३) १ अमृत वर्षा २ अमृत वापि
अलवख (९१) अलख
अर (१३२) और
अरक (१८९) अर्क, सूय
अरवक (२४२, २५५) अर्क, सूर्य
अरज्जुण (२४६) अर्जुन
अरत्त (१४१) लाल नही
अराध (१४८) आराधना करते हैं
अराधवा (१) आराधना करने के लिये
अलवस (१६, २५२, २९५) अलस
अळगो (३०६) अलग, दूर
अलज्ज (३३५) निर्लज्ज
अलप्प (३२५) अल्प, तुच्छ
अलाह (१४१) १ अलभ्य २ लाभ रहित
अलीध (४२) लेने से पहले, विना लिये ही
अळीयळ (२३९) भ्रमर समूह
अळूझ (२६८) उलझा हुआ
अळूझन (२५३) उलझ रहे है
अलेख (१७, १३९) अलख
अलेखत (२९६) देखने वाला
अलोज (१५४) १ आलोचना करते हैं, २ कहते हैं
अवगत्त (७८, ९३) अविगत
अवचळ (२, २२१) अविचल
अवतारत (१८९) उतारते हैं, घुमाते हैं, फिराते हैं
अवध (३१२) अवधि, आयु
अवर (८, ३२७, ३३८, ३३९) और

अवरां (३१८) औरों को
अवळो (३४८) प्रतिकूल
अवस (२९९, ३४६, ३४७) अवश्य
अवसर (१६०) नृत्य
अवार (११८) तुरंत
अवेव (२६०) १ रहस्य २ अवयव
असंखय (५३) असख्य
असंभ (६२) असंभव
अस (२४५) ऐसा
असथांन (२६९) स्थान
असहां (९) १ हमको, मुझको,
२ हमारा
३ असहाय जनों को
असी (२६५) ऐसी
असुरांण (३२) असुर समूह
असेत (१४१) श्वेत नही
अस्तुति (२३७) स्तुति
अहळै (१६५,१६७) १ योंही
२ जैसे भी ३ मुफ्त में
अहळै ही (१६५) १ स्वाभाविक तौरसे
२ जैसे भी हो
अहि-वारण (१०३) नाग को नाथने
वाला
अहीस (१३७) शेषनाग
अहोनिस (२२५) अहर्निश

आ

आंगळ (२३४) १ अंगुल
२ अंगुल परिमाण
आंण (२८४,२८५)१ आकर २ दूस
आंण (३३६) अन्य
आंण (३५३) अन्य प्रकार समझो
आंणिय (३१) ले आये
आंन (२५७) और, दूसरा २ फि
आंपणो (३१३) १ अपना
२ आत्म-स्वरूप
आंमय (९०, ३३१) १ माया
२ रोग
आख (२१५) कथन कर,
उच्चारण कर
आखै (१२६, ३६०) कहता है
आगळ (१०९, २३७, २३८, २७१
आगे, सम्मुख
आगळै (१०७) सम्मुख
आघ्राणं (१०२) सूंघ कर
आठूंपहोर (२०२) अष्ट प्रहर
आड (३१०) पानी से भरा हुआ
छोटा खड्डा
आडो (२७८) बीच में

आणद (१०४,२२४) आनन्द, आनन्द से
आणदघण (२१६) आनद से भरपूर
आण-जाण (१५८) आना और जाना
आतम (२०६) आत्मा
आतमा (२०६) आत्मा
आतमा (३२५) अपने लिये
आद (१६३, १८६) आदि
आद पुरख (५६) आदि पुरुष
आद विसन (३१६) आदि विष्णु
आदित (१५४) सूर्य
आदेश (१२२, १४०, १४१, १४२, १४३, १४४, १४५, १४६, १४७, १४८, १४६, १५०, १५१, १५२, १५३, १८५, १८६, १८७, १८८, २५२) प्रणाम, नमस्कार
आपज (१७६) स्वय
आपण (२१३) अपना
आपहि आण (२८४) अपने आप
आपहि पाहि (२७६) अपने आप
आपही आप (१८५) अपने आप
आपापै (३०६) स्वयम्
आपेज (३११) आपही, स्वय ही
आपेह आपेज (१७४) अपने आप
आपै (३२८) देदे, दे सके
आपोपिय (१६) अपनी ही
आप्यो (४५, ३०२) दिया
आभ (६, ८१, २५५) १ आकाश, अतरिक्ष २ स्वर्ग
आय (१८०) आ कर
आरत (२८, २६) १ आर्त, दुखी, आतुर
आलम (१३२, १५४) १ प्रभु २ ससार
आलसवाण (३४१) आलसी लोगो को
आव (२३) आ कर
आवण-जाण (२२६) आवागमन का
आवद्ध (७०) आयुध
आवसं (३६०) आयेगा
आवही (३०६) आएगी
आविय (३५) आ कर
आविस (१११) आऊँगा
आवै (३५७) आता है
आस (१४२) आशा
आसी (२०६) आयेगा

इ

इछाय (१६) इच्छा, इच्छा से

इंडज्ज (२६९) अण्डज, अंडे से उत्पन्न होने वाले प्राणी
इंद्री (११२) इन्द्रियाँ
इम्र (१०, १८६, २०६) इस
इकै (२५५) एक ही
इको (१२२) एक
इम (१११, ११३, २८५) ऐसे, इस प्रकार
इळ (६६, १८५) इला, पृथ्वी
इळा (२४२) पृथ्वी
इळात्रय (२७२) त्रिभुवन, त्रिलोक
इसा (२५६) ऐसे
इहि (३११) यह

ई

ईसर (१५) ईश्वर

उ

उगार (४२, ४९) बचाकर उद्धार करके
उगारण (५६,६०) बचाने के लिए
उगारिय (४५, ५२) बचा लिया उद्धार किया
उचारत (१४७) उच्चारण करते हैं
उच्चरै (२३३) उच्चारण करता हुआ
उजेस (१५३) प्रकाशित, प्रकाशमान्
उडीयण (२७२) उडुगण
उणांम (७२) उपद्रव
उतारण-ग्रब्ब (२९३) गर्व उता॰ वाला
उतारण-पार (८८) पार उतारने वाला, संकट से मुक्त करने वाला
उतारिय (४१) उतारा
उतारिस (९९) उतारूँगा
उथाप-सथाप (१८३) उत्थापन और स्थापित करने वाला, पदच्युत और प्रतिष्ठित करने वाला
उदक्क (२३५) जल, उदक
उदभिज्ज (२६९) उद्भिज्ज, उ॰ वाला
उद्धरै (२२१) उद्धार होगया
उनमद्द (१८२) उन्माद
उपज्जत (२२४) उत्पन्न होता है
उपज्जहि (२८०) उत्पन्न होता है
उपत्त (२९४) उत्पत्ति
उपन्नाय (१८) उत्पन्न हुए
उपन्नो (१८५) उत्पन्न हुआ
उपन्नोय (१७४) उत्पन्न हुआ
उपाड़ (४०) उठा कर
उपाय कर (३०९) उत्पन्न करके
उपाया (१८६) उत्पन्न किया

उपावण (१८८) उत्पन्न करने वाला
उपांविय (३०) बनाया, उत्पन्न किया
उवार (१६) बचाइये
उवारण (७२) उद्धार करने वाला
उवारिय (५१) उबारा
उभै (१५०, १५३, १७५) १ दो
२ दोनो
उरे (२२०) हृदय में
उळक्खिय (२८५, २६१) पहचान
लिया
उळगत (२३७, २५२)=गाता है
उळावता (२१३) पुकारने से
उळावि‍स (११३) उल्लास पूर्वक
स्मरण करूंगा

ऊ

ऊमेविस (११४) सेकेंगा, घूपूगा
ऊचरै (३५०) उच्चारण करता
हुआ, उच्चारण करो
ऊ (३३४) वह
ऊपजै (१३३) उत्पन्न होती है

ऐ (ए)

ए (३२५) यह
एकलो (२४५) अकेला
ऐकोज (१४८) एक
ऐणि पर (१०६) इस प्रकार
एह (३०७, ३२५, ३३५, यह

औ (ऐ)

औ (६) ये

ओ

ओ (१०, ३०६, ३१३, ३६०) यह
ओसद (३३१) औषधि
ओघ (२२४) समूह
ओभळ (२७४) अप्रगटता
ओड (४०) किनारा
ओघव (२४७) उद्धव
ओळग (३१६) याद कर
ओळग्ग (२३६) १ स्तुति २ गान

क

कठीर (६५) १ सिंह २ नृसिंह
कद्रप (६८) कामदेव
कच्छ (१३, ८२) कच्छपावतार
कज्ज (२२, ३३५) लिये
कथताहि (३५६) कथन करने से हो
कथत (१६२) कथन करते हैं
कथता (२६२) कथन करते हुये
कथा (४, ७) कथन करता हूँ, कहूँ
कथिस (११) कथन करूंगा

कथै (१३३, १५०, २२५) कहते हैं, गाते हैं, कहने से
कदी (१३५, २२३) कब, कभी
कधी (२३०) कभी
कन (१२१) पास
कन्ह (६४) कृष्ण
कपाळ (५२) सिर
कपि (३६) सुग्रीव
कपिल्ल (८३) कपिल
कमठाधर (५७) कच्छपावतार
कम्मळ सद्रस (२५७) कमल के समान
करंत (२५१) करते हैं
करंतिय (३१) करती हुई
करंतो (३११) करने वाला
करण (३२८) कर्ण, कान
करइ (१८६)=करके
करण-संधार (६६) सहार करने वाला
करण्ण (८१) महादानी कर्ण
करतूत (६७) चरित्र
करन्न (३३८) महादानी कर्ण
करमन्न (२४३) कर्मण्य
करम्म (५२, १२१) कर्म
करव हों (१२३) मैं करवाऊँ
करही (३२६) करेंगे

करां (१२०, २८१, २८२) करता हूँ, करूँ
कराड़उ (२७८) करवाइये
करिस (६६, १००, १०१, १० , १०३, १०४, १०५, १०६, १०७, १०८, १०६, ११०, ११२) करूँगा
करूर (६२) क्रूर
करेवाय (२१) करने के लिये
करेसी (१६६) करेगा
करै (५५, ११०) किये, करके
कळंकिय (७१) कल्कि अवतार
कलकी (१२) कल्कि अवतार
कलपंत (७५) कल्पों के अंत में
कळि (५४, ६६)=१ पाप २ कलियुग
कव (३५६) कवि
कवण (१८८) १ किस प्रक २ कौन
कवि (१२३) ब्रह्मा
कव्व (१२४) काव्य
कसा (१२३, ३०५) कौन सा
कसी (८) कैसी, कौनसी
कहंत (१४०) कहते हैं

कहावै (१६२) कहते हैं, गाते हैं
कह्यो (२८८) कहा
कान धरत (२१२) कान देता है, सुनता है
कान्ह (६३) कृष्ण
काय (१३०) कुछ भी
कागभुसड (१४८) काकभुशु डि
काटए (१६४) काटने वाला
काटवा (३२१) काटने के लिये
काम (१७१) इच्छा
काय (३०८) या तो, अथवा तो
कार्तकसाम (२३७) स्वामीकार्तिक
काळ (७३, ३२१) मौत, काल
काळख (६६) पाप
काळजवन्न (४७) कालयवन
कालाय-वालाय (६८) भोली-भाली विनती
कासप (२४५) कश्यप
काह (१४०) कहाँ मे
कि (२११, ३००) क्या, अथवा, या
किकेइ (३७) राजा दशरथ की पत्नी कैकेयी
किए मात (१६२) किस प्रकार
किंत (३०४) कहाँ
किता (२२, २३, २६, २७, २८, २६, ३०) कितने ही
किताइक (२१, २५, ३१, १३६, १७७) कितने ही
कितावर (४५) उपकार
किय (२६५) कौनसी
कियँ (२६६) कहाँ
किधेव (३७) किया
किधौ (३६, ३८, ४०, ४५, ४७, ५२, १७७) किया
किम (१२२) कैसे
कियाह (३३६) कर दिया
कियो (१४०) उत्पन्न किया
किसकध (४०) किष्किधा
किसन (१३) कृष्ण
किसो (३२८) कौन
की (१२३) १ क्या २ कौनसा
कीध (२२, ३१, ३५, ४२, ४५, ४८, १७७, २५४, ३४६) किया
कीधा (३०४, ३०७) किया
कीधा (३०३, ३०६, ३०६) १ करने से २ करके
कीधौ (३४६) किया
कीन (५०) कर दी, कर दिया
कीरत (१६०) कीर्ति
कीरत्ती (१८८) कीर्ति
कुभेए (८०) कुभकर्ण

कुण (१३५, १६१, २८३, ३०६) कौन, किसने
कुण पाखै (३०४) किस लिये
कुवज्जाय (२५४) कुब्जा की
कुमंत्र (३७) खोटी सलाह, अनुचित परामर्श
कुरखेत (४६) कुरुक्षेत्र
कुरछेत (३४९) कुरुक्षेत्र
कुरम्म (८२) कूर्मावतार
कुळ मेरु (१४७) सुमेरु सहित सातों पर्वत
कुवांण (३३५) १ कुकाव्य २ कुवाणी
कूं (१२९) को
कूड़ा (३०८) झूठा
कूबड़ (२५४) कूबर
केक (३०६) किसी को
केण (१४०) किसने
केत (२५८) केतु
केता (३३०) कितने
केतिक (१६, २५) कितनी ही
केम (६, ७) कैसे, किस प्रकार
केर (११०) का संबंधकारक विभक्ति 'केरो' का एक रूप। केर, केरी, केरै आदि। इसके वहु वचन और स्त्री जाति रूप हैं
केवांण (३२१) तलवार
कै (१३४, २०७) अथवा
को (१७, १३४) कोई, कौन
कोज (१५६) कोई
कोट (६८, ६०, २५५) करोड़ों
कोट अलम्म (२८३) करोड़ों जगत
कोटीधज्ज (३३८) कोटिध्वज
कोयलारांणी (२) कोकिलारोहिणी देवी। सौराष्ट्र में द्वारिका के पास कोयल पर्वत पर निर्मित एक प्राचीन मंदिर की हरिसिद्धि (हर्षद) नाम की कोकिलारोहिणी देवी
कोरम (३११) कूर्म
क्रतकाळ (६६) नाश करने वाला, मारने वाला
क्रत्त (२७०) कर्त्ता
क्रपाळ (१२७) कृपालु
क्रम,क्रम्म (४, ११, १५७, १७१, २२५, २६२, ३००, ३०६, ३०८, ३२०) १ कर्म २ शुभाशुभ कर्म,

३ चरित्र, ४ गुण,
५ यश, ६ पुण्य कृत्य
क्रमणा (१११) कर्मणा
क्रिपाळ (१४३) कृपालु
क्रिसन, क्रिसन्न (२६, ४७, २१८,
२५६, २६०, ३१५
३४३) कृष्ण
क्रीत (२, १०३) कीर्ति, गुण

ख

खभु (१०६) बाहु दंड
खग (१५४) सूर्य, चन्द्र आदि ग्रह
खट-साख (२४३) षट् शास्त्र
खत्री (३३) क्षत्रिय
खपत्त (२६४) नाश
खपै (४६, २३२) खपादिये, नाश किये
खय-मान (२३२) मान का क्षय
खरदूस(३८) खर और दूषण नामक दोनों दैत्य
खळ (५५, ८०, १८४) दुष्ट
खाण (७, १८८) खानि, योनि
खाण (१६८) भोजन
खाणिय चार(१५२)चार जीव योनियाँ
खाण-पाण (१५६) खाना और पीना
खिण (२५५) क्षण
खिमावत (१८१) दयालु, क्षमावंत
खीर (१६३) क्षीर
खुधा (२१०) क्षुधा
खेचर (१७४) नभचर
खेत (५५) रणक्षेत्र
खेस (३३) भगाकर
खेगाळ (८०) नाश करने वाला
खोण (२१४, ३०४) क्षोणी, पृथ्वी

ग

गगेव (४६, ५०, ८१) गांगेय, भीष्मपितामह
गध्रव (२४६) गधर्व
गर्ख (३२५) समझकर
गत (१४, ३०३) गति
गत्त (२६०) गति
गम (१६१) ज्ञान
गरभम-जगत्त (१७३) १ जगत का कारण २ जगत-गर्भ
गळ (३२७) गला
गळकासिला (११४) गडकी नदी की शिला, सालिग्राम
गळो गयो (२७७) मिट गया
गळै (२७५) कठ में, कठ मे
गवरि (१६१) गौरी
गहीर (२८६) गम्भीर
गाम-गोठ (१६६) १ प्रवास, २गांव-गोष्ठी, ३ ठाम-ठिकाना

गाढ (३५०) १ सत्य २ घना ३ दृढ़
गायत्रिय (२४८) गायत्री
गावंत (१८६) गाते हैं
गाव हों (१२३) मैं गाऊँ
गावै (१४६) गाते हैं
गिनांन (८३, ६१, १०८, १०६, १७३) ज्ञान
गिनांन-विसभ (६१) ज्ञान का आवार रूप, ज्ञान-विश्रंभ
गिर (४४) गोवर्धन पहाड़
गिर-उद्धर (१०४) गिरिधारी
गिरमेर (१२३) सुमेरु पर्वत
गिरा (१२५) १ आज्ञा २ वचन, वाणी
गुआळां (४६) ग्वालों के
गुज्ज (१६७) गुह्य
गुणव (१२२) गुण
गुणी (१८७) कवि
गुणेह-अतीत (७६) गुणातीत
गूंघट (२६५) १ अज्ञानावरण २घूंघट
गूझ (२६८, २८०) रहस्य, गुह्य
गेमार (३१०) गँवार
गो-करण-ग्रहण (१२४) पृथ्वी को उत्पन्न करने वाला और धारण करने वाला
गोकुळवाळ (१८१) गोकुलवाला
गोचंदण (१०१) गोपीचन्दन, तिलक

करने की एक सफेद और पीली मिट्टी
गोठ (१६६) १ गोष्ठी २ छोटा गाँव
गो भरथार (७४) पृथ्वीपति
गोरक्ख (६१) गोरखनाथ
गोळाकृत-चक्र (१५८) बीज गणित की चक्र के समान गोलाकृति
ग्यांन (६५, १६२, २१५, २२४, २३८, २७४, ३५८) ज्ञान
ग्यांन-गहीर (२८४) ज्ञान-गंभीर
ग्यांन-रुपेत (२८६) ज्ञान स्वरूप
ग्रजै (२८०) गाजता है
ग्रभ (४६) गर्भ
ग्रभवास (१२०) जन्म-मरण, गर्भ वास
ग्रभवास पास (१८४) गर्भ वास की फांसी
ग्रम्भ (१८२) १ गर्भ २ गर्व
ग्रह (२८०) घर
ग्रहावण (४८) प्राप्त कराने के लिये
ग्रहि, ग्रही (५०, ६५) ग्रहण करके
ग्रहो (११८) पकड़िये

घ

घट (२०६) शरीर
घड़ै (१७७) बनाये
घणा-घणा (१८५, १८८) असंख्य
घण दाता (२१६) औढर दानी
घणनामी (११, १०१) असंख्य नामों वाला
घनवान (६६) मेघ वर्ण
घाट (१८५, १८८) १ रूप २ शरीर

च

चंगो (१९८) अच्छा
चउद (२६) चौदह
चक्ख (२५२) १ दृष्टि २ चक्षु
चख (४७) चक्षु
चढ़वै (१८९) चढ़ाती है
चढावहि (२८०) चढ़ाते हैं
चढियो (२१६) सवार हो गया है
चत्र (५३) चार
चत्रभुज (१०६, २०६, २१५) चतुर्भुज
चत्रवेद (१६१) चारो वेद
चम्मर (१६०) चँवर
चरचवि लेप (११०) लेपन करके
चरच्चत (२५१) चर्चा करते हैं
चरीत (१७) चरित्र
चवत (३६) १ बरसाता हुआ, झराता हुआ २ कहता हुआ
चवता (२६२) कथन करने से
चेवा (१९३, १९४) वर्णन करूँ
चविये (३४७) गाइये, कहिये
चवै (१६२) वर्णन करे
चा (११७) के (विभक्ति)
चाढण (३२६) चढ़ाने वाला
चारिय-वाणिय (१५२) चारों वेद
चित्या (२२७) चिन्ता
चिताविय (१७) सचेत किया
चियारं (३०४) चतुर्विध, चारो
चीत (२०६, २२७) याद, चित्त मे
चीतार (३२४) सुमिरण कर
चुरासिय लक्ख (१९) चौरासी लाख जीव योनि
चोपड़ियो (१९८) घी मे चुपड़ा हुआ
चौ (१९६) का (विभक्ति)

छ

छडता (६) छोड़ते समय
छडी (३३६, ३२७) छोड़कर

छतो (२७३) प्रगट
छत्राळ (१४३) छत्रधारी
छीजै (२१०) मिटती है
छुटिस (२६२) छूट जाऊँगा
छुटो थयो (२६५) अलग हुआ
छुटावण (४३) छुड़ाने के लिए
छुड़ावण-वंध (९६) वंधन छुड़ाने वाला
छुड़ावण मंत (१७८) छुड़ाने वाला
छुड़ाविय (४९) छुड़ाया
छेद (४७) छेदन कर

ज

जंग (३३) युद्ध
जंत (१५७, ३०४) जंतु, जीव
जंत्र (१७२) यंत्र
जके (४०) वे
जको (१२५) जो
जग-जाड (१२४) जगत की जड़ता
जग-जीत (४७) विश्वविजयी
जगत-जीवण (२२२) जग-जीवन
जग ताज (८९) जगत का मुकुट
जग-द्रव्व (२९४) जगत के पदार्थ
जग-मूर (२६५) जगत का मूल
जग वंदण (७२) जगद्वन्द्य
जच्छ (१५१) यक्ष
जटाधर (२४) शंकर
जड़्यो (२७४, २९१) मिला, प्राप्त हुआ
जद (३२४) जब
जदि, जदां (३९, ४०) जब
जदूव (२४७) यादव
जनक्क (३५) जनक राजा
जनमारो (२०३) जन्म, जीवन
जनम्म (१५७) जन्म
जनि (२७५) मत
जनि थाय (२९८) नहीं होइये
जनेता (३३) जननी
जन्नक (२४७) जनक
जपां (१) जपता हूँ
जपीजे (१९५) जपिये
जपै (१४८, १५०) जपते हैं
जमजीत (१४४) यम को जीतने वाला
जमडांणी (२०७) यमराज
जमदग्न (३२) यमदग्नि
जमदळ (२१८) यमदूतों से
जमन्न (२४२) जैमिनी ऋषि
जमरांणापुर (१९७) यमलोक
जम्म (२२५) यम यातना
जम्म-प्रहार (१२६) यम यातना

जरा (२६६) जरायुज, पिंडज

जरामय (२२६) बुढापा और रोग

जराभ्रत (२६७) जरा और मृत्यु

जंव्ताय (४६) सतत, जलते हुए

जळांथळ (२६६) जल और स्थल

जळा (४७) ज्वाला

जळाय (२४) जला डाला

जळावण (६२) जलाने वाला

जळै (३५२) जलता है

जव-तिल (२१४) यव और तिल, सूक्ष्मातिसूक्ष्म

जस (१५१) यश

जसा (२४७, २४६) जैसे

जहडो-तहडो (१६८) जैसा तैसा

जाण (१६४, १६७) पहचान, प्रगट

जाण (३५३) समझना चाहिये

जाणत (१३६, १३७, १३८, १३६, १४०) जानते हैं

जांणव (६७, १२०, १२२) जाना जानता है, जान सकता है, जानता हूँ

जाणीता (२७४) ज्ञानी, जाननेवाला

जाणै (३२३) जानता है

जांण्यो (२८८) पहचाना

जांमण (१२६) जन्म

जामण-पास (१२६) जन्म पाश, जन्म बंधन

जांमण-मरण (१२४, २१०) जन्म और मृत्यु

जांमण-भ्रत (१२१) जन्म मरण

जांमदगन्न (६३, २४४) परशुराम

जा (३१८) उस

जाग (३४, ३५) यज्ञ

जाग (२६४) जगह

जागविया (२०३) उत्पन्न किये

जागै (३२४) जग जाय

जाड (३५२) जडता, अज्ञानता

जात (१६, १८) जाति, प्रकार

जातिय-पातिह (२६४) १ जाति और पंक्ति, जाति-पांति

जातिय रेस (२२) १ जाती हुई, २ रसातल को जा रही

जाया (३०४) उत्पन्न किया

जायो (१३५) उत्पन्न किया

जाळनळ (२१४) ज्वालानल, अग्निकण

जाळिय (४७) जला डाला

जिग्र (१०.११५,१७६,१८०, १८६; १६५,२०३,२६४,२६५,३१८, ३३४,३४०) जिस,जिसने,जिसके

जिअ दी (३३४) जिस दिन
जिकरण रो (२०३) जिसका
जिकाँह (१८०) जिनके
जिकाँ (२२६) उन्हें
जिके (२३१, २३२) जो
जिको (१२५, २२६) जो
जिथाँ (२७१) जहां
जिपै (३३) जीते
जिभ्या (१६६) जीभ
जिय (२, २८१, २६६) जिस प्रकार
जिम (१७६, १८०) जिसके
जिवाड़िय (५०) जिला दिया
जिहां (३४७) जिह्वा से
जिहि (२८२) जो
जीत (८७) जीतने वाला
जीत्यो (४४) जीत लिया
जीवरण-जद्द (७२) यादवों के जीवन
जीह (२२६, ३१६) जीभ
जीहाँ (१६५, ३२०, ३४२) जिह्वा से, जिह्वा द्वारा
जीहा (३२८) जीभ
जुओ (२८५) अलग
जुगोजुग (४८) युग-युग
जुजट्ठळ (२४६) युधिष्ठिर
जुड़ै (२४२) जोड़ते हैं
जुवा (२७३) जुदा, अलग
जुवो (२६८) अलग
जुहार (१७२) प्रणाम
जुहारत (२४६) प्रणाम करते हैं
जुहारचो (३४६) १ प्रणाम किया, २ दर्शन किया ३ तीर्थयात्रा की
जे (३०४) जिस
जेरा (३, १७५) जिनकी, जिसकी
जेता (३३१) जितने
जेथ (२७५) जहां
जेना (१३१) जिसके
जेम (२८०, ३५०) जैसे
जेह (३१६, ३६०) जिससे, जो
जोग-निवास (६०) ध्यानावस्थित
जोगाणंद (१८२) योगानन्द
जोगिय (८३) योगियों के लिए
जोगेस (१४४, १४८) योगेश्वर
जोड़िय पाँरा (१२७) हाथ जोड़ कर
जोड़ै (१०७) जोड़कर
जोत अखड (६०) अखंड ज्योति वाला
जोतां (३००) देखते, देखते हुए
जोती (१६०) ज्योति
जोनी (१८६) जन्म, योनि
जोय (१६६) १ उसीका, २ देख
जोयो (२७७) देखा

जोवन (१८२) १ युवा २ यौवन
न्या (२१३, २२४) १ जिन
२ जिनको
ज्यु (१२५) जैसे

झ

झल्लणहार (६) धारण करने वाली

ट

टळै (१८०, २२४, २२५, ३५२)
टलता है
टाळण (७१) मिटाने वाला,
टालने वाला
टाळिजै (१२६) टालिये
टरत (१४७) रटते हैं

ठ

ठगारा (२७६) ठगने वाला
ठयो (२६५) १ होगया २ प्राप्त हुआ
ठाय (२६८) स्थान
ठाविय ठोड (२६५) निश्चित स्थान
ठावो (२६५) प्रगट, प्रसिद्ध
ठावो हो कीघ (२६८) १ मैंने
पा लिया, २ मैंने पता
लगा लिया

ड

डरघा (३६) डर गये
डाळ (१७१) शाखा
डाळाय-साखा (२७४) शाखा प्रशाखा
डेडरी (३१०) मेढकी

ढ

ढकियण (१८८) ढकने वाला
ढील (३२२) विलंब

त

तंत (१७२, १६६) तत्त्व
ततर (१२५) तत्र
तत्र (१७२) जादू-टोना
तउ (५, २६४, २६०, २६१) तो,
तोभी
तक्ख (२४०) १ तक्षक नाग
२ शेषनाग
तज्यो (३६) छोड दिया
तठै (१५६) वहाँ
तणा,तणा (४, १४, २१, ३२, ५३,
८०, ६६, ११२, १२०,
१२५, २२३) के, का
(विभक्ति)
तणी (५०, ६७, २११, २२८,
३२६, ३५७) १ से,
२ की (विभक्ति)
तणी-परि (२७८) के समान
तणै (३४, ३५, ३४५) के (विभक्ति)

तणो (५, ४५, १७५, २२३, ३००, ३४६) संबंधकारक विभक्ति (का) का एक रूप

तण, तणां, तणा, तणी, तणै— इसके बहुवचन और नारी-जाति आदि रूप हैं।

तत (१९५) तत्त्व

ततसार (३५५) सार तत्त्व

ततह (२५८) उस

तद्द (३२४, ३५०) तव

तदी (३८) तव

तनां (२७७, २८१, २८६) तुझे

तम (३०७) तुमने

तम्म (२२५, २३६) तुम्हारा

तर (३३७) तरु, वृक्ष

तरण-तन (२५८) गनि

तरै (१७६, २२०) तिर जाते हैं।

तळ (१८६, २३८) १ तले, तल में, २ पाताल

तळांसत (२३६) १ तरसती है २ पगचंपी करती है

तवण (६) स्तवन करने के लिये, कहने के लिये

तविजै (१५) कहे जाते हैं. गाये जाते हैं

तवै (२२५) कहता है

तांणां-वांणां (२६३) ताने वाने में

ताड़ीका (३५) ताड़का राक्षसी

तात-अनंग (६७) प्रद्युम्न के पिता श्रीकृष्ण

ताप (१४६) अग्नि तप

तापी (११७) त्रिताप

ताय (२२६) उसे

तारण-तिरण (१८८, १९३, २३३) उद्धार करने वाला

तारण-दध-भव (१०४) संसार रूपी समुद्र से तारने वाला

तारिया (३३८) तार दिये

ताव (२२७) ताप, पीड़ा

तास (२५७) उन

तासूं (२२०) उससे

ताहरि, ताहरी (१८६, ३०५) तेरी

ताहरो (११६, २८३) तेरा

तिग्र (१०, ३४५) उस

तिग्र दी (३४५) उस दिन

तिकां, तिकांह (१७६, १८०, २२६, २२७) उनके

तित (३०५) १ तब, २ वहाँ, वहाँ
तिथ (२७१) वहाँ
तेरलोक (३६) तीन लोक
तेलो भर (२२९) तिल भर भी, किंचित भी
तेहा (२२४) १ जिनको २ उनको
तेहारो (२७३) तुम्हारा
तेहि (१६, ४१, २५६) १ उस, २ उसे ३ जिनकी
तु (१९) तेरे
तुचा (११०) त्वचा, चमडी
तुझ मझ (२८०) तेरे मे
तुमर, तुम्मर (१२३, १८६, १६०) १ देवता २ गधर्व, तुम्वर
तुव (२७३) तुझे
तुव पाही (१२५) तेरे पास
तुहा थिय (२८०) तेरे मे
तुहारा (११, १५) तेरे
तुहारिय (१२१) तुम्हारी
तुहारोय (२६५) तुम्हारा
तुहाळ, तुहाळा, तुहाळो (४, ११, २५७, २६८, २७५, २६१) तेरा, तुम्हारा
तूझ (१३२) तेरे
तूझ तणाह (२५५) आपका, तेरा
तूझ थी (३००) तेरे से
तूझ विसै (११६, २८२) तेरे में
तेज (१७३) अग्नि
तेज अबार (११६) तेज पुंज
तेम (२७६) जैसा ही, उसी प्रकार
तै (१२१) तैने
तो (८, ११७, १२२, १८७, १८६, ३०८, ३३४) १ तेरे, तुम्हारे २ तुझे ३ तुम्हारी
तो (६,) फिर, तब, उस दशा में (एक अव्यय)
तो कना (३०८) तेरे से, तेरे पास
तोर (५१, १७६, १८०, १६२, २२७, २८६) तेरी, तुम्हारी
तोरा (५, १८५, १६१, २८७) तेरा, तेरे
तोराय (१२६, १८३) १ तेरे सम्मुख, २ तेरा
तोरिय गत्त (१२०) तेरी गति
तो विण (१११) तेरे विना
त्या (२२७, २२८, २३०, २३१, २३२) उसको, उनको, उनके
त्यार (३६) तय्यार
त्यु (१२५) तैसे
त्रणै गुण (१३७) तीनों गुण—सत्त्व, रज, तम

त्रपत (१३३) तृप्ति
त्रय-रूप (५९) त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु और शिव)
त्रासै (११५) डर कर भाग जाते हैं।
त्रिकाळ (१४२) १. तीनों काल— भूत, वर्तमान और भविष्य २. तीनों समय— प्रातः मध्याह्न और सायं
त्रिकाळ-नरेस (१४२) तीनों कालों का स्वामी
त्रिखा (२१०, २८२) १. तृषा २. तृष्णा
त्रिजग्ग (१८१) १. त्रिविध जगत २. त्रैलोक्य— स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल
त्रिणो (२७८) तृण
त्रिभंगिय (२७८) १. ध्याता, ध्यान और ध्येय, त्रिपुटी २. श्रीकृष्ण, ३. त्रिभंगी मुद्रा में खड़े वंशी बजाते हुए श्रीकृष्ण
त्रिभुवन्न (५८) तीन लोक— स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल
त्रिभूवण-वंद (८७) त्रिभुवन वंद्य
त्रिविस्टप (३१) स्वर्ग, त्रिविष्टप
त्रीकम (१०७, २१६) त्रिविक्रम, वामन
त्रीगुण-ईस (२९६) त्रिगुणात्मक सृष्टि का ईश्वर

थ

थंभ (९१) स्तंभ
थंभावण (९१) स्थिर रखने वाला
थइ (२७३) होकर
थकी (५२) से
थप्यो (२८) स्थापित किया
थळेचर (१७४) थलचर
थांन (२८) स्थान
थांभा विण थंभण (१२४) आधार के बिना ठहराने वाला
थापण (१६०) १. स्थापना, २. स्थापना करके
थाय (२७५, २८२) हो सकता, हो जाय
थारा (६, १९१) तेरे, तेरा, तुम्हारा
थारी (३०३) तुम्हारी, तेरी
थावर (२२२) स्थावर
थावै (३५२) हो जाती है
था सूं (१३१) तेरे से, आपसे
थियै (१९८) हो जाता है
थीय (२७६) हुए
थीर (१६०) स्थिर
थूळ (१७४, २२२) स्थूल

द

दडवत (११०) साष्टाग प्रणाम
दइता-दम (१०६) दैत्यो का दमन करने वाला
दइता-दव (११०) दैत्यो का दमन करने वाला
दईत (२४, २७) दैत्य
दईत (४२) रावण
दईता (२१) दैत्यो से
दईव (३०१) देव
दढा (२२) १ दातो से २ दृढता से
दतदेव (८८) दत्तात्रेय
दतात्रय (५६) दत्तात्रेय
दतार (१४४) दानी
दध (४१, ४३) उदधि, समुद्र
दधी (२८३) उदधि
दधी घण (१५३) ससार रूपी महा समुद्र
दमै (१०६) दमन करके
दमोदर (१२,) दामोदर, श्रीकृष्ण
दम्म (१५७) १ प्राण २ नाश
दम्मं (१६१) दमन करते हैं
दरवेस (२५२) साधु
दळे (४३) मार दिये
दळ्या (२७) नाश किया
दसग (१०४) दात
दसै दिगपाळ (१३६) दशो दिक्पाल, दस दिशाश्रो के रक्षक दस देवता
दहै (२१४) जला देता है
दाण (३०, १६७) दान
दाणव (१८, २०,३०) दानव
दाख (२६४) दिखाश्रो
दाखव (१७, २७१, २७५, २८३) देखकर, दिखाकर, देखू, दिखाते हैं।
दाखवै (२०८)१कहता है,२ कह कर, ३ कहता हुआ
दाखं (१२६, २००) कहता है
दाखौ (३४२) कहा
दागियो (३३८) दाग दिया
दाव्यो (३०) दबाया
दारु (२६६) काष्ठ
दाळद्र (२२२) दारिद्रय
दिगमूढ (१७) दिङ्मूढ, जिसे दिग्भ्रम हो गया हो
दिखाडिय (२६०) दिखा सकते हैं
दिखावउ (१२७) दिखाइये
दिठो (२६४, २८३) देख लिया
दिधा (१७६) दिया
दिधी (४२, २५४) दी

दिनेस (३७) सूर्य, दिनेश
दिपव्व (२३४) प्रकाशमय
दियण (२) देने वाली
दियां (८) देऊं, दूं
दियै (२५१) करते हैं, देते हैं
दिल-खूटल (३४१) दिल के कुटिल
दिवाड़ (१०६) लगवा कर
दिस्ट (६२) दृष्टि
दी (१०, ३०४, ३३४, ३४५) दिन
दीठउ (२६४, २७७) देखा
दीठौ (२७१) देखा
दीठोय (१६२) दर्शन किये
दीध (२६, ३१, ३०५) दिया
दीधउ (२७) दिया
दीधस (२५४) दिया
दीधा (३०१) दिया
दीधौ (२७, ३४६) दिया
दीरघ (८१) दीर्घ
दीह (११६) दिन
दुग्राळ (२८५) जगड्वाल
दुई (१७५, ३०२) दो
दु करोड़ (४०) दो करोड़
दुख भंजण (१४, १०५) दुःखों का नाश करने वाला
दुज (३६, १६१) द्विज
दुज पंख (७६) गरुड़
दुजरांम (८१) परशुराम
दुज्जरांम (१३) परशुराम
दुड़िंद (२५१) दिनंद, सूर्य
दुवादस (२३४) द्वादश
दुसटां-दळ (६४) दुष्टों का दलन करने वाला
दुस्ट-खंगाळ (८१) दुष्टों का नाश करने वाला
दूजा (३११) दूसरे
दूजो (८) दूसरा
दूणागिर (२२१) द्रोणागिरि
देवण-मोख (८८) मोक्ष देने वाला
देवण-रेस (८५) नाश करने वाला
देवत (२६६) देवताओं में
दैत (४३, ५४, १६८) दैत्य
दोख (८८) १. दोष २. त्रिताप
द्यौ (२) दीजिये
द्रजीत (४२) इंद्रजीत
द्रजोण (४६) दुर्योधन
द्रढ (१०६) दृढ़
द्रढै (२३०) दृढ़ता से

ध

धंख (१४२) ईर्ष्या
धखती (२७८) जलती हुई
धज्ज (७६) ध्वज
धणी (१३०, १३१) प्रभु

घनतर (१२, ५७) धन्वन्तरि
धनूस (३५) धनुष्य
धनेस (३७) कुवेर
धमळ (१८६) १ धवल, उज्वल
२ धवल रागिनी
धर (५,६,१५६,१८८,१८६)१ पृथ्वी
२ ससार
धरणीधर (६३, १०१, ३४२)
धरणीधर भगवान्
धरत (१८६) धरते हैं
धरिया (१४) धारण किया
धरी (४१) वनाई
धरेस (१४६) धरते हैं
धरै (३४, ४४, ४८, १४६, १६०, १७६, २३५) धारण करते हैं
धरया (३२७) धारण करने का
धरयो (३६) धारण किया
धात (१८५) धातु
धायै (३७) आये
धार (४१) रखकर
धारण-धीर (६२) धीरज धारण करने वाला
धारै (१०१) धारण करके
धारै तो (१३०) यदि चाहे तो, यदि धार ले तो
धियावत (१५१,२३५)ध्यान धरते हैं
धीणू (२१३) धेनु
धीस (१४२) अधीश्वर
धुताइय (२७१) धूर्तता
धुप्प (१६६) धूप
धुर (३०७) आदि मे
धुरू (२२१) ध्रुव
धूत (२७१) धूर्त
ध्यावै (१८५) ध्यान धरते हैं
ध्रम (५८, ३२५) धर्म
ध्रम्म (१७१, २३५) १ धर्म
२ धर्मराज

न

नकळक (२२१) निष्कलक
न को (३०६) नही, न तो
न कोय (१३१) कोई नही
नछत्री (६३) क्षत्रियो मे रहित
नजीक (२८१) निकट
न पातरो (३४२) भूल मत
न पार पडोय (१३६) पार न पा सके
न पीडै (३३०) कष्ट नही पहुँचाये, नाश नही करे
न वूझव (२६०) समझ में नहीं आता

न भूलव (२६६) मत भुलाइये
नमां (१०) नमन करता हूँ
न मेलुंह (२५७) नहीं छोड़ूं
नमै (१०६) नमस्कार करके
नयणां (३३२) नेत्रों से
नर (६६) अर्जुन
नर तन्न (३५०) मनुष्य शरीर
नर-नारण (६०) नर-नारायण
नर लोय (३५६) १ नर लोक
२ स्त्री-पुरुष
नर-संदण-हांकणहार(६६) श्रीकृष्ण
नरसिंघ (८२) नृसिंह अवतार
न लाधै (१३२) नहीं मिल सकता
नव (२२०, २८८) नहीं
नव सुइये (३४६) मत सोइये
नवै (१६१) नौ ही
नवौ निध (२३१) नौ निधि
न व्यापै (३५६) नहीं होता
नसंक (१४२) भय रहित
न संभरै (३३४) स्मरण न कर सके
नह (३२०, ३३७) नहीं
नह गाईयो (३४६) नहीं गाया
नह वंधवै (३२०) नहीं वंधे
नहीं को तोलै (११८) कोई तुलना करने वाला नहीं है
नहीं सहवाय (२७५) सहा नहीं जाता

नां (१८६, २०८) का, की (कर्म और सम्प्रदान की विभक्ति)
नांख परो (२७६) दूर कर दीजिये
नांमै (२०८) नाम से, नाम का जप करने से
नांय (१६१) नहीं
नागां (२६६) नागों में
नाची (१०६) नाच करके, नृत्य करके
नाथ-अनाथांह(२५६)अनाथों के नाथ
नाद (२६२) नाद सृष्टि
नामै (१८४) नमन करते हैं
नारसिंघ (१३) नृसिंह
नारीयण (१८८) नारायण
नास (१६६) नासिका
नासही (२०६) १ नाश हो जाता है, २ नाश हो जायगा
नासारंध (१०२) नासा छिद्र
नासै (२०६) नाश हो जाता है
नाह (१६६) १ पुरुष २ नाथ
निकंद (५४) नाश करके
निकंदन (६४) संहार करने वाला
निकळंक (८५, २३३) १ कल्कि अवतार २ निष्कलंक
निकळंकिय (६६) कल्कि अवतार
निकाळ (१४२) काल रहित

निकुल (२४६) नकुल
निवात (८४, ८६) स्थान, खानि
निगम (६, ७, १२५, १६१, २११) १ वेद, २. परमात्मा
निगम्म (५५, ६५, ७८, ८६, १३६, २८६) वेद
निगेम (७४) स्रोत, निर्गम
निद्ध (२०१) निधि
निपाप (१००, १०१, १०२, ११०) निष्पाप
निपाय (२५५) उत्पन्न करते हैं
निपाविय (१५६, १७५) उत्पन्न किया
निमूळ (१४५) मूल रहित
निमेख (३४२) निमिष
नियारो (२३०) अलग
निरकार (६४) निराकार
निरला (२७१) देखू
निरगात (३४२) निराधार
निरग्गुण (६४) निर्गुण
निरणाह (२०३) खाये पिये विना, निरान्न
निरधार (६१, ६९, ३४६) निश्चय, अन्य आधार से रहित, निराधार
निरभ्मय (७०) निर्भय
निरमै (१२५) निर्माण कर
निरम्मळ (७४) निर्मल
निरळ ग (६७) कारण रहित
निरलेप (१८४) निस्पृह
निरसक (८५) निश्शक
निराळ (१४२) निराले
निरोहर (२०) समुद्र
निवाण-जग (१७५) ससार समुद्र
निवारण (५७) निवारण करनेवाला
निसक (३४) निर्भय
निस-प्रहर (१८६) अहर्निश
निस-अहो (१६०) अहर्निश
निसाख (१४४) शाखा रहित
निसाळगै (३५०) नहीं जला सकती
नीगमण (१२४) निगम, वेद
नीभावण (१२४) नाश करने वाला
नीरावण (१२४) उत्पन्न करने वाला
नीर (३०६) प्रतिष्ठा
नील (१४०) श्याम
नूर (८४, २६५) प्रकाश, तेज, अस्तित्व
नेत (७) नेति, अंत नहीं
नेस (२७५) स्थान
नेंडो (२३०) समीप
नृकासुर (५०) नरकासुर
न्रग (२५७) नरक
न्हायो (३४६) स्नान किया

प

पंच व्रन्न (७०) पांच रंग
पंचाळिय (५१) द्रौपदी की
पखाळ (३८) धो करके
पखाळत (२३६) प्रक्षालन करते हैं
परवाळां (१२३) प्रक्षालन करूं
परवाळ (१६०) प्रक्षालन करती है।
पखै (२६६) विना
पग (२३७, २३८, २३६, २४० २४१, २४२, २४३, २४४, २४६, २४७, २४६, २५०, २५१, २५२, २५३, २५६) पांव, चरण
पगरस्स (२३६) चरणामृत
पगरेग (२४६) चरण रज
पग-वास (२५७) चरण-शरण
पगां (५८, २३४,२४८) १. पैरों से २. चरण-युगल
पग्ग (२३६, २५७) पाँव
पटंतर (३०७) १ रहस्य २ भेद
पटोळै (३१६) रेशमी वस्त्र में
पड़द्दो (२६८, २७६) पर्दा
पडद्दोय (२७१) पर्दा
पड्यो (४१, ४४) पड़ा
पढ़ै (१४८) पढ़ता है
पतंग (२६६) सूर्य
पत-मत (३३६) १ पति में बुद्धि २ पति भक्ति
पताक (२३४) ध्वजा, पताका
पतीत-उधारण (८२) पतितोद्धारक
पत्त (५०) १ प्रतिष्ठा २ प्रतिज्ञा
पदम्म (४१, ७०, २३४) १ गणित मे सोलहवें स्थान की संख्या, १०० नील, २ पद्म नामक चिह्न जो भाग्यशाली के पांव में होता है, ३ पद्म, कमल
पनंगह (२५८) पन्नग, सर्प
पन्न (२७४) पत्र
पमाड़ (११६) प्राप्त कराइये
पमै (३६) १ प्राप्त किया २ प्राप्त करवाया
पयपत (१२७, १५०) कहते हैं, गाते हैं
पयंपै (२८२) कहता हैं
पयाळ (२२) पाताल
परट्ठिया (३००) वनाया, रचना का
परपंच (३०५) १ प्रपंच, २ विस्तार
परब्ब (२६३) प्रभु
परम्भ (२७२) प्रभु
परम्म (१६, ७०, ८२, ८६) परम
परम्म-निवास(२ २३) मोक्ष स्वरूप

परम्म-प्रवीत (२४८) परम पवित्र
परहर (३३७, ३३८,३३९) छोड़कर
परा (४) निकटस्थ निश्चय-सूचक 'श्ररो' प्रथवा 'उरो' प्रव्ययों के विरुद्ध प्रयोग में आने वाला दूरस्थ निश्चय-सूचक 'परो' अव्यय। 'परी' इसका स्त्रीलिंग और 'परा' इसका बहुवचन, रूप है। उदा०— उरो आ =आजा। परो जा=चला जा।
परि (२२२) समान
परिधान (५१) वस्त्र
परीखत (४६) परीक्षित
पवन्न (२७२) पवन
पसाय (३) प्रसाद, कृपा
पहु (६५) प्रभु
पहिलोय (१५५) १ पहला २ आदि में
पाण (१२७, २४३, २६६) हाथ
पाण (१५४) १ भी, भाँति-भाँति
पाणिय (२७२) पानी
पाणिया (२१०) पानी से
पामत (१२२, १३८) पाता है
पामीजै (२०१) प्राप्त होती है, प्राप्त की जा सकती है
पामै (१३५, ३६१) पाता है, पा सकता है
पाईयो (३४६) पाया, प्राप्त किया।
पाखै (३४७) बिना, रहित
पाज (४१, ७६) १ पुल २ किनारा
पाटली (५) पाटी, तख्ती
पाथर (२२०) पत्थर
पाथर चे (३८७) पत्थर से
पाप करतो (११७) पाप करने वाला
पाय (३, ४१) पैर
पार (१००)अन्त, पार
पारिजात (१२३) कल्पवृक्ष
पाळ (१७१) पाल, वृक्षों आदि की रक्षा का साधन
पालै (२१४) रोकता है
पाळ्या (२८) पालन किया
पावत (१३६) पाते हैं
पाहि (२७४) पास
पाही (१६२) पाते हैं
पिंड (३०, १६४, ३४०) देह, शरीर
पियारो (३५१) प्यारा
पियाळ (१५०, २४१, २७२)पाताल
पियाळ-पुरेस (१५०) पाताल निवासी
पीठ धरण (५) धरणी की पीठ, पृथ्वी तल

पीड़वा (३०२) दुःख देने के लिए
पीवां (३४७) पीने से
पीय (२७६) प्रीतम
पुजावत (२७६) पूजा करवा रहा है
पुजे (२३५) पूजती है
पुणंगां (२७२) बूंदे
पुणत (१२२) कहते हुए
पुण (३६०) कथन कर
पुणां (२) कहूँ, वर्णन करूं
पुणै (३२, २५८, ३१०) कहता है
पुन (६१) और, पुनि
पुन्न (१६५) पुण्य
पुरंदर (८१, १३८) इन्द्र
पुरक्ख (१७०) पुरुष
पुरक्ख पुरांण (२६२) पुराण पुरुष
पुरक्ख-रतन्न (७३) पुरुष-रत्न
पुरै (५१) पूर्त्ति की
पुहप (१८३, १८६, २६६) पुष्प
पूगै (३४६) पहुँचेगी
पूगो (३०६) पहुँचा, सफल हुआ
पूछां (३१०) पूछता हूँ
पूर (६१) पूर्ण करने वाला
पूरख-प्रांण (२८४) प्राण पुरुष
पूरवै (३१६) पूरा करता है
पेख (१०२) देखकर
पेखण (११६) देखने के लिये

पेखां (२७५, २७८) देखूं
पेस (३३, ३३७) १ दे दी, २ अर्प॰
पैठ (२२) प्रवेश करके
पैठो (१५६) प्रवेश किया
पो (३६१) प्रभात
पोकार (२१२) पुकार
पोय (२०७) पिरोंदे
पोहकर नभ (१०६) पुष्कर नभ
प्रकर्त्त (२६४) प्रकृति, माया
प्रकर्त्त-राजान (२६७) मायापति
प्रकासण (२६३) प्रकाश करने वा॰
प्रकासत (१६१) कहते हैं
प्रकासै (१०३) प्राकर. प्रकाशित कर
प्रगट्टत (२२४) प्रगट हो जाता है
प्रगट्टिय (२८४) प्रगट होगया
प्रजाळहु (१७८) मिटाइये, जलाइ
प्रत (२८) हरेक
प्रतक्ख (८६, २७६, २६५) प्रत्यक्ष
प्रतखेत (७) १ क्षेत्र के प्रति, २ प्रति क्षेत्र
प्रतपाळ (६४, ६५) प्रतिपालन करने वाला
प्रथव्विय (३३, २६४) पृथ्वी
प्रथी (१७३) पृथ्वी
प्रथू, प्रिथू (१२, ८६) पृथु, विष्णु

प्रद्मन (८४) प्रद्युम्न
प्रद्मन-तात (८४) श्रीकृष्ण
प्रपोटाय (२७८) बुदबुदे
प्रभ (२६४) प्रभु
प्रभ्भ (१८७, २६३, २६४) प्रभु
प्रम (६४, ७४) परम
प्रमेस (१६६) परमेश्वर
प्रमेसर (१६) परमेश्वर
प्रमोदघण (२३३) आनन्दघन
प्रम्म (५६, २२४, २३५, २७८ २८७) परम
प्रलोक (१५६) परलोक
प्रवीत (३८) पवित्र
प्रसण (३३०) शत्रु
प्रसनीग्रभ (१२) पृश्निगर्भ, श्रीकृष्ण
प्रसन्नियग्रभ्भ (८३) पृश्निगर्भ
प्राणियां (३६०) प्राणी
प्राक्रत (१६७) साधारण
प्राक्रम (१८४) पराक्रम
प्राग (१६१, ३४६) प्रयाग
प्राण-पुरक्ख (१७३) प्राण-पुरुष
प्रित्थु (६१) पृथु राजा

फ

फर मती (३१७) भटक मत
फरसूधर (२३३) परशुराम
फरस्सउ (३७) परशु
फेरा (४४) बार, मतबा

ब

बग (६८) १ ढग २ रहस्य
बघ (४३) बधन
बधाड (४०) बाधा
बंध्यो (४३) बाधा
बगस (१२८) क्षमा कीजिये
बभीखण (६३, २००) विभीषण
बळता (३२७) जलते हुए
बळवड (३६) शक्तिशाली
बळवुद्ध (७०) महाबली
बळि (३३) बलवान
बळि उद्धार (११७) बलि का उद्धार करने वाला
बळि-बधण (१४) १ बलि को बांधने वाला २ जल बँधाने वाला
बळोभद्र (७७) बलभद्र, बलराम
बहनामिय (७१) बहु नाम वाला
बहो (६६, १६०) बहुत
बहोडिय (४७) वापस ले आये, लौटा लाये
बहोनामी (१३४) बहुनामी
बाधण (५८) बांधने के लिये
बाध्यो (३०) बांधा

बाथ (२०) बाहुपाश
बाधा (११२) जोड़ दिया, बाँध दिया
बापजी (१२८) पिताजी
बाळ (१६४) बालक
बाळापरण (२०५) बचपन
बाळा (२) १ बालस्वरूप, २ प्रणव स्वरूप ३ देवी
बावन्न (५८) वामनावतार
बाहुव-जुद्ध (२०) बाहु युद्ध
बिड़द (१८४) विरुद
बियां, बिया (२६०, १६७) दूसरा, अतिरिक्त
बिहांसूं (२०) दोनों से
बिहुं (२०) दोनों
बिहुं-राह (२४८) १ निवृत्ति और प्रवृत्ति मार्ग २ भक्ति और ज्ञान ३ आर्य और अनार्य ४ हिंदु और मुसलमान
बोजमंत्र (२) १ गायत्री २ चित्शक्ति
बुंद (२६२) विन्दु सृष्टि
बुझव्व (१३४) १ बतलाइये, २ पूछता हूँ
बुझां (२६१) पूछता हूँ
बुझै (६८) जान सकते, समझ सकते
बुध (३५६) बुद्धि
बुध-बाहरा (२०४) बुद्धि हीन
बुधी (२४०) १ बुद्धि, २ सरस्वती
बूझत (१३८) जानते हैं
बूड़ेला (२०४) डूबेंगे
बे (१०७, ११४, ३५८) १ दो, २ दोनों
बेहु (२४०) दोनों
बैसीय (२८०) बैठकर
बोध (६४) बुद्धावतार
बोह (६८, ३२८) १ फिर भी, तो भी २ अनेक, बहुत
बोह वार (४४) बहुत बार
ब्रवै (३६) कहते हैं
ब्रहमंड (६०, २८८) ब्रह्माण्ड
ब्रहम्म (५२, ५३, २६१) ब्रह्मा
ब्रहमांणी (२) १ सरस्वती, ब्रह्माणी २ दुर्गा
ब्रहम्मगिनांन (२६२) ब्रह्मज्ञान
ब्रहम्मसपूत (२३६) ब्रह्मा के पुत्र, सनकादिक
ब्रहम्माय (१६, १७, १७७, १८३) ब्रह्मा

भ

भंग्यो (३५) तोड़ा
भंजन-भीर (६२) दुखों का नाश करने वाला

भजै (२५५) नाश करके
भक्त परायण (१०२) भक्तों को आश्रय देने वाला, विष्णु भगवान
भक्ख (२७) भक्ष्य
भगताकज (१८४) भक्तो के लिए
भगता वस (७४) भक्ताधीन
भगत्त (१७८, २६१) भक्त
भगे (२२३) भग जाते हैं
भजना (३२४) भजने मे, भजतेहुए
भजे (१८) भाग गये
भणता (२०१, ३३०) वोलने से, जपने से
भणाँ (१२०) गाकर, कहकर
भणाय (३१८) उच्चारण करवाकर, बोलने को प्रेरित कर
भणि (२४१) निमित्त, लिये, की
भणो (३४४) को, प्रति (विभक्ति)
भणे (१०४, १२४, १७६, २६६) १ वर्णन करके, २ कहता है, कथन करता है
भणे भण (२१८, ३१६) वारवार बोल कर, वारम्वार उच्चारण कर
भमतो (२५८) भटकते हुए
भयो (३१) हुआ

भर वाथा (३२२) वाहुपाश में आवे जितना, वाथ भर करके
भरम्म (२८६) भ्रम
भल (१९७) भला
भळावै (३०५) सुपुर्द करता है
भव (६५) ससार
भव-तारण (६२) ससार रूपी समुद्र से पार लगाने वाला
भसम्म (८७) १ भस्म, २ नाश
भाग्योह (२५४) तोड़ा
भाज घडं (१८३) नाश करके पुन बनाने वाला
भाजण (८१, ८४, १७८, २५५) मिटाने वाला, काटने वाला, तोडने वाला २ नाश करने के लिये
भाजण-घडण (१८५) नाश और रचना करने वाला
भाज परा (४) १ मिटाकर २ दूर कर दीजिये
भाण (१६२, २५३) भानु, सूर्य
भाख (२६४) कहा
भाजै (३००) भागता है, दूर होता है
भार-अड्ढार (१८६) अठारह भार वनस्पति

भारदुआज (२४४) भारद्वाज मुनि
भास (१६५) १ दृश्य २ प्रत्यक्ष
भिखंग (८१, २६६) भिखारी, विचारा
भिदै (४८) नाश किया
भिन्न (१६५) १ अलग २ अदृश्य
भीख (८१) भय
भुआळ (२६६) भूपति
भुगोळ (३१) पृथ्वी, संसार
भुजाळ-विसाळ (१४३) विशाल भुजाओं वाला
भुतेस (३५) महादेव, भूतेश
भुलोक (१५६) यह लोक, भूलोक
भुवण (१५६) भुवन, चौदह भुवन
भुवन्न-चऊद (२५३) चौदह भुवन
भुवन्न त्रणै (१८३) तीनों भुवन
भूंडा ही (१६८) दुष्टों के लिए भी, खल मनुष्यों के लिये भी
भेख (३१) रूप
भेव (१६८, २४५) भेद, रूप
भोगवण (१२४) भोगने वाला
भोम (२७२) पृथ्वी
भौ-भंजण (३२०) भय भंजन
भ्रखै (१०५) १ ग्रास कर २ भक्षण कर
भ्रखैं नहिं (२२८) डसता नहीं काटता नहीं
भ्रमाय (५७) भ्रमण करवा कर
भ्रम्म (४, २२१, २२५, २७७) भ्रम

म

मँझार (४६) में
मंडांण (५४) रचना
मँडियो (१६६) रचना की
मंदर (३२२) घर
मँदराचळ (५७) मेरु पर्वत
म (१५४, २५६, २७१, २७३, ३११, ३१३, ३२३, ३४०) अभाव, अस्वीकृति या निषेध सूचित करने वाला एक शब्द। नहीं, मत
मकराकृत कुंडळ (६६) मकर की आकृति वाला कुंडल
मगन्न (२४४) मग्न
मच्छ (१३) मत्स्यावतार
म छडै (३१३) मत छोड़ना
मछ (८२) मत्स्यावतार
मझ्झ (२२) मध्य में
मझ्झ (१७६) में
म ठेल-म ठेल (२५५) दूर मत कर
मणां (२६८) मनों वंद

मथ्यौ (२५, ८६) मथन किया
मदन्न (६८) कामदेव
मद्द (७२, ७३) मद, नशा
मध (२८६) मध्य
मधु (२६८) मधुर
मधु कीट (२०) मधु और कैटभ
मधु कीटभ (८७) मधु कैटभ
मधु मारण (१०३) मधु दैत्य को मारने वाला
मनछा (११५) वासना, इच्छा
मनसा (६१) इच्छा, वासना
मनाविय (४३) मनाया
मनिछा (१३४) मन की इच्छा
मन्न (१८०) मन
मन्न (२१०) मान ले, समझ ले
मम्मत (२२४) ममता
मयक (८५) चन्द्र
मरजाद (७८) मर्यादा
मरद्द (२७०) पीरुष
मरद्दण (७३) मदन करने वाला
मरद्द-महेन्द्रिय (२७०) नर नारियों में
म राख (२७१) मत रखिये
म राच (३०१) मत कर, प्रवर्त्त न हो
मस्ती (२८८) मिसी
म सनाय (२८३) मत छिपिये
मह्णमथ (११३) समुद्र का मथन करने वाला
महत (२१२) बडेरा, प्रधान
महमहण (१८६, २६६, ३१६, २४७, १ महार्णव २. महामहनीय, परब्रह्म
महम्मण (१३) १ महार्णव, महा समुद्र २ परब्रह्म
महम्माया (३६) महामाया, सीता
महण्णण (२५ २६) महार्णव, समुद्र
महा गिड (२२, महा वाराह
महा जक्ष (२१, २२) अथाह समुद्र
महा जोध (३६) बड़ा योद्धा
महा तत (८४, १४०) महातत्त्व
महा दत (१६०) महा दान
महा नग (४१) बड़ा पर्वत
महारउ (२७८) मेरा
महारिस (३५) महाऋषि, महर्षि
महारिय (१२०) मेरा
मही (१६५) मे
मही-माह (४४) पृथ्वी को धारण करने वाला
महोरत (१३०) मुहूर्त
मा (२७८) मे

मांगां (१२१) मांगता हूँ
मांग्यो (१६२) मांगा
मांझ (४४, २५५, २६५) में, अन्दर
मांझल (११६) में
मांडै (११३, ११४) प्रतिष्ठित करके
स्थापित करके
मांण (१६७) मान
मांणसां (६,) मनुष्यों का,
मांणस्सां (२६६) मनुष्यों में
मांनै (३३०) माना जाता है
मांहळा (३१७) मेरा
माधा (११२) माधव
माय (४६) माता देवकी
मार उपावै (१३०) नष्ट करके
उत्पन्न करदे
मार-जिवाड़ (१२५) मारने और
जिलाने वाला
मारण (५६, ६३) मारने वाला
२. मारने को
माव (३६) बहुत
माह (१८०) महान्
माहर (१३२) मेरा
माहरा (११) मेरा
माहरै (११५) मेरे
माहरो (२७६) मेरा
माहव (२६५) माधव

मिटइ (१५६) मिटने पर
मिळाविय (५८)मिला दिया
मिळै (३८) मिल गये
मिळै (२३१) मिलती है
मुकन (२१७) मुकुन्द
मुखंत (३८) मुख से
मुखां (१४७) मुख से
मुखांमुख (२७८) प्रत्यक्ष
मुगट्ट (६६) मुकुट
मुगत (३६१) मुक्ति
मुगत्त (२६०) मुक्ति
मुगत्ति (२६१) मुक्ति
मुणां (१२०,२६५) वर्णन करता हूँ,
कहता हूँ
मुणाळ (२६६) ब्रह्मा
मुताहळ-माळ (२४१) मोतियों की
माला, मुक्ता माल
मुनेस (१४३) मुनियों के इन्द्र
मुरत्त (२६३) मूर्ति
मुर लोक (१५६) तीनों लोक
मुळकै (१०३) मुस्कान करके, मंद
मुस्कान द्वारा
मूक परो (२७१) छोड़दे
मूझ तणा (४) मेरे
मेट (६१) मिटाने वाला
मेटण (३६) मिटाने वाला

मेटण व्याध (८७) व्याधियों को मिटाने वाला
मेटवा (४, ११,) मिटाने के लिये
मेर (३११) मेरु पर्वत
मेलहु (२२३) छोड़ूंगा
मेल्हा (१२३) घर
मेल्हे (२४१) रखते हैं
मा (४, ११७, २६६, ३०६) १ मुझे २ मेरा
मोचही (३५७) नाश हो जाता है
मोरो (१०७) मेरा
म्रगकासव (५६) हिरण्यकशिपु
[म्र]गला (११५) मृग समूह
[म]म्म (५६, २३६, २८३) मर्म
[म्र]णाल (१४३) पद्मनाभ
[म्]हारा (१२८) मेरे
[म्]होटा (१६४) बडे

य

[य]ासा (२०, २४१) जैसे, ऐसे, २ समान

र

[र]ंग (३३) इज्जत, प्रतिष्ठा
[र]ंचै (१४६) किंचित्
[र]ै (२७) और
रक्स (२४०) ऋषि
रखावण (३३) रखने के लिये
रखाविस (१११, ११३) १ रखूंगा, २ रखवाऊंगा
रखी (४६) रक्षा की
रखे (२१६, २८२) १ कहीं २ कहीं ऐसा न हो
रच्यो (४६) स्थापित किया
रजा (१२५) आज्ञा
रज्जियो (१६६) स्वामी
रटता (२७१) रटते-रटते
रटता थका (२००) रटते हुए
रत (१८८) लीन
रतन्न (२६) रत्न
रता (२२६) रत, अनुरक्त
रथी-अरण (२५७) सूर्य
रमाड म (२७०) मत भुलाइये
रम्मणहार (१७६) रमने वाला
रम्यो (१५३) रमता रहा
रव्वियो (११६) इधर उधर भटका
रव (३६) शब्द
रसण (२२१, ३१३) १ रसना २ रसना द्वारा
रसणा (३३२) जीभ से
रसणाह (१२२) जीभ से
रस्स (६३) रस

रहंसिय (४०) मार डाला
रहमांण (२२६) ईश्वर, रहमान
रहस (१६२) रहस्य
रहस्स (५१) रहस्य
रहत (२९९) रहता है
रहै (३५४) रह जाय
रांमण (६३) रावण
रांमेस (३४९) रामेश्वर
रा (१२५, २०४, २०५, २०६, २०७, २०८, २४३) का, के (विभक्ति)
राउर (२५३) आपके
राख (११६) रक्षा कर
राखस (८०, २२२) राक्षस
राखिय (५०) रख लिया
राखिस (१११) रखूंगा
राख्यो (२९) रक्षा की
राय-विकुंठ (१२) वैकुण्ठपति, विष्णु
रावण-रिप (२१९) राम
राह (२५८) राहु
रिक्खभ (१२) ऋषभावतार
रिखभ (६२) ऋषभावतार
रिख (३४, ३६, ६२, ६३, १५१, २३७) ऋषि
रिखम्भ (८३) ऋषभावतार
रिझवै (१८९) रिझाये, प्रसन्न करे
रिणायर (२६, ७७) रत्नाकर, समुद्र

रिदा (२८१, ३२३, ३०३) हृदय
रिदै (११३) हृदय में
रिदो (१०८ हृदय
रिय (२३५) की (विभक्ति)
रिव (८०, १४६, १५३) रवि
रीझ (२२८) प्रेम
रीझवां (१२३) प्रसन्न करूं
रीय (२४) ('री' विभक्ति) की
रीस (१४६) क्रोध
रुचै (२३१) रुचता है, रुचि रखता है
रुदत (३५०) रोता हुआ
रुदाह (११५) हृदय
रुद्र (५२, ५३) महादेव
रूप-अतीत (९०) रूप से रहित
रेण (२३५) रेणु, धूलि
रेर (३२९) ध्वनि
रेस (८५,) १. नाश, २ हानि
रेस (२२) १. रसातल, २. नाश होती हुई, ३. हुई को ४. रही को
रै (३४६) के (विभक्ति)
रो (१९६, १९८, २०३, २१२, २२०; ३२८, ३५९) को (विभक्ति)
रोर (२२६) रौरव
रोळ'र (२६) मथ कर
रोळण (७२) नाश करने वाला

ल

लई (२६) लेकर
लिंग (६८) लिग, चिन्ह
लखमन-अग्रज्ज (७६) श्रीराम
लखमीवर (१३४) लक्ष्मीपति
लखम्मण-वीर (२३०) लक्ष्मण के भाई श्रीराम
लखम्मिय (१३६, २४०) लक्ष्मी
लखम्मिय-कत (४७) लक्ष्मीपति
लखम्मिय-नाह (८२) लक्ष्मीपति
लग्गो (२७६, २६०) पहिचान लिया लग लिया
लगाड (२७५) लगाइये
लगाडिय (२७७) लगाकर
गाय (४१) लगा लिया
द्धोहि (२६३) प्राप्त हुए हैं
ग्गो (६८) पाया
लभै, लम्भै (५) मिलता है
कै (३) झुका कर
वलेस (१५२) किंचित्
हन (२५२) १. पाते हैं २ करते हैं
हा (२२, २६०) पाऊँ
हि (१५) प्राप्त कर
है (५३ ६७, १३८ १५२) पाते हैं
लाखाग्रह (५७) लाक्षागृह
लगा (२, ३) लगता है

लागै (१२३) स्पर्श करती है, लगती है
लाधो (२८१, ३१४, ३१५) मिला, प्राप्त हुआ
लार (३०२) पीछे
लावण्य (६८) लावण्य
लिगार (१७६) किंचित, थोडा
लिधा (२६, ४३) लिया
लियो (४१) लिया
लियत (१६७) लेते रहते हैं
लियता (२११) लेने से
लिरीजै (२१६) लिया जाय
लिवरावो (२१६) लेने दें, लेने की शक्ति दें
लिवै (२३६) लेते हैं
लीध (१७७, २००) लिया, धारण किया
लीधा (३०२) लिये, लगा दिये
लीधो (३०, २०३) लिया
लील-विलास (६८) लीला विलास करने वाला
लेख (१३६) लेश, चिह्न
लेखा नही (१३४) दिखाई नहीं देता, देखता नही
लोकालोक महा ब्रहमड (१५४) छोटे बडे अनन्त ब्रह्माड, लोकालोक और महा ब्रह्माण्ड

लोचण (३२८) लोचन
लोपत (२२९) १ उल्लंघन करता है
२ बिगाड करता है
लोह जड़ाय (३१८) ताला लगवा दे

व

वँचाणा (२६३) पढने मे आता है
वंछे (२५७) चाहते हैं
वंद (१००) नमस्कार करके
वंस (४४) बाँसुरी, वंशी
वडराट (१७७) विराट
वखांण (६५, १५६, २४३)
व्याख्यान, कीर्त्ति, स्तुति
वगोविय (३०) नाश किया
वछोड़िय (३८, ५२) मार डाले
वजाड़ि (४४) वजाया
वड़ (१३१) वड़ा
वड़-पान (१८) वट वृक्ष के पत्र पर,
वटपत्र
वडम्म (१२६) वड़े
वड वात (८६) गुण, कीर्ति,
महान् यश
वडाळ (२७, १४३) वड़े
वडोहि (२६७) वड़ा
वणाय (२४) वना कर
वणाविय (१६, १७७, २६७)
वना दिया
वणियो (२०६) बना हुआ है
वतसळ भगतां (३०७) भगतवत्सल
वदन्न (६९) मुख
वदे (८६, १४९, १५१, १५२,
१६१, २३०, २४३, २६८)
कहते है, गाते हैं, वर्णन करते
हैं, उच्चारण करते हैं
वधारिवा (१७५) बढ़ाने के लिये
वन्न (३८) १ वर्ण, स्वरूप २ वर्णन
वन्न (१६५) १ वन २ वर्ण
वप (८१, ९०, २६५) शरीर
वपू (६९) शरीर
वप्प (१६३) शरीर
वयं (१८२) १ वय २ अवस्था
वयण (२, ७) वचन, वाणी
वयण (१८८) विनती, पुकार
वयणां (३३२) वचनों मे
वरखा (७५) वर्षा
वरताविय (६६) प्रवर्त करने वाला
वर-लाछ (८६, ९५) लक्ष्मीपति
वर-सीत (८७) सीतापति
वरियांम (८०, २४१) श्रेष्ठ
वलमीक (२७४) वाल्मीकि

वळै (२२८) ग्रौर, फिर
वसती (३१०) रहने वाली
वसत (२९९) रहती है
वसत्र (६६) वस्त्र
वसाविय (२३) १ बसादिया
२ उत्पन्न किया ३ रक्षा की
वसियो (२९९) जमा हुग्रा
वसीकर (२७४) वश मे करने वाला
वसै (७, ११५, १७९) वसता है
वहवार (१६) व्यवहार,
व्यापार, कारबार
वहेलो (२७५) शीघ्र
वाचै (३३६) पढते हैं
वाण (१९८) मुँह मे, वाणी द्वारा
वामण, वामन (८१) वामन ग्रवतार
वाचण (२११) पढने से
वार (१६, १६, २५, २६, २७, २८
२६, ३०, ३१, ३२, ३३, ५१)
समय, ग्रवसर, वार
वालखिला (२४५) वालखिल्य ऋषि
वास (२.६) सुगन्धि
वासिठ (२४४) वसिष्ठ ऋषि
वधै (.६) बीध डाला
विख (७२) विष
विखमी वार (२१२) विषम वेला
विखम्मिय (५१) विषम

विखै (११२, २३२) विषय
विखै तो (११२) तेरे साथ, तेरे में
विखो (४४) सङ्कट
विगनान (६१) विज्ञान
विचार (१३५) भ्रम
विचार (१६२) समझ कर
विचारत (१३६) विचार करते हैं
विछूटा (६) विछुडे हुए
विछुटो (२१२) छूट गया
विटवतो (३०८) भटकाया जारहा है
भटकता हुग्रा
विडारण (८८) नाश करने वाला
विण (६१,१३३,१८५,२१०,२९६,
३०८, ३५३) बिना, रहित
वित्त (१७०) १ धन २ गाय बैल
ग्रादि पशु
वियार (२६५) विस्तार
विध (५७) विधान, विधि-विधान
विध (५६) ब्रह्मा
विध-लाधण (८७) विधियों से
प्राप्त होने वाला
विधूसण (५६, ७३, ८०) १ विध्वंश
करने वाला, नाश करने वाला,
२ नाश करने के लिये
विधो-विध (२७१) विधिपूर्वक

विनांण (२६१) चरित्र
विबुद्ध (२५०) देवता
विमासिय (२७७) विचार किया
विमेक (२४५) विवेक
विमोहिय (२४) मोहित किया
विम्मल (२३६) विमल
वियापक (२३४, २६४) व्यापक
विरंच (१६१) ब्रह्मा
विरंचिय (१२८) ब्रह्मा
विरक्ख (८६) वृक्ष
विराजत (२६६) रहता है, बैठता है
विलूंबो (३२५) लीन
विलसे (३११) भोगता है
विलूधी (३३६) आसक्त होगई
विलूंधो (३४०) १ आश्रित, २ विलुब्ध
विवरजित (२६३) विवर्जित
विसंभ (६१) १ विश्रंभ, दृढ विश्वास २ आधार
विसंभर (१२, ५८, ८२) विश्वंभर
विसतरण (१२४) विस्तार करने वाला
विसतरै (१६०) विस्तार करते हैं
विसतारण (१८७) विस्तार करने वाला
विसन (१८५) विष्णु
विसनूव (२४७) वैष्णव
विसन्न (१६, ७४, ६७, १४३, २२३, २६१, २६७) विष्णु
विसरांम (२२३) विश्राम
विसव्व (१६) विश्व
विसव्व-विरक्ख (२६५) विश्ववृक्ष
विसारइ (३३५) भूल कर
विसामित (३४) विश्वामित्र ऋषि
विसार नै (३३६) भूल कर
विसारी (३३४) भूल कर
विसे (२३, २५, २८८) से, में
विस्वामित (२४५) विश्वामित्र
विहड-कंस (१२४) कंस का नाश करने वाला
विहडण (८५) नाश करने वाला
विहद्द (२४४) १ वेहद २ विशद
वीजण (१८६) पंखा
वीख (८१) चरण
वीज (२२८) विद्युत, वज्र
वीर (५३) भाई
वीसंभर (१०१) विश्वंभर
वीसरजै नहीं (३२१) भूल मत जाना
विसारिस (११२) भुला दूंगा

वुग्रो (३७) हुग्रा
वुछाव (३७) उत्सव
वेरिण (१००) शिखा, चोटी
वेर-ग्रवेर (३२६) समय-कुसमय
वेळा (२६६) तरग, लहर
वेस (२७५) वेप, रूप
वेह (३२७) वेप, मानव-शरीर
वैद (२११) वैद्य
वैस (१६१, १६८) वैश्य
व्यापत (२२५) व्याप्त होता है
व्ररख (१७५) वृक्ष
व्रख (१२३) वृक्ष
व्रजभ (१२) १ वृषभ २ ऋषभ
व्रखा (१३२) वर्षा
व्रखे (५३) वर्षा की
व्रज्ज (७४) व्रज
व्रथा (३५३) वृथा
व्रद्ध (१६४, १८२) वृद्ध
व्रिदावन (७४) वृदावन
व्हाण (१७०) वाहन रथ, गाडी ग्रादि
व्हार (२५) १ रक्षार्थ धावन २ पीछा करते हुए चोर ग्रादि को पकडने की दौड धूप ग्रनुधावन ३ रक्षा, सम्हाल, बाहर
व्हे (१२८) हो जाता है

स

सक (४३, २२०, २२१, २३३, ३५०) धाक, भय, डर
सकट-मेटणहार (८८) सकट को मिटाने वाला
सकटा (३५०) सकट
सगराम (२३) सग्राम
सगाथ (३४५) साथ
सघार (२४, ३२, ३५, १८८) सहार, नाश
सग्रारिय (४२, ४३) नाश करके
सच (१०८) सचय करके
सतत (१८७) निरन्तर
सदण-हाकणहार (६६) रथ हांकने वाला श्रीकृष्ण
सभरै (२३३) सुमिरण करले
सभार (३२४, ३३७, ३४४) सुमिरण कर, याद कर
सभारता (२०१) सुमिरण करने से
सभारिस (११, ६६, ११२) याद करू गा
ससार-दवग्र (१८०) ससार रूपी दावाग्नि
स (२६३, २७५) १ सो, २ वह
स (२५) पदापूरक ग्रव्यय

सक्त्त (६८,१४६) शक्ति, माया
सकत्ति (२५८) शक्ति
सकां (६) सकता हूँ
सक्क (२४२, २५५) इन्द्र
सक्र (२७) इन्द्र
सकाज (८६) सहेतुक
सकाय (४०) काम के लिये
सकाय (५७) १ दीर्घकाय
२ दृढ शरीर
सकै न वियाप (२३२) व्याप नहीं सकता।
सगळी (१२६) सब कुछ, सब
सग्र (६२) सगर राजा
सजीवरण-मंत्र (३३१) संजीवन-मंत्र
सज्ज (१६) तैयार
सत (३६) सात
सत (२३७) सौ
सतरूघरण (७८) शत्रुघ्न
सत्त-अणंद-सचेत (२८६) सच्चिदानंद
सत्रूपा (१६२) शतरूपा
सथापरण (२६३) स्थापन
सथीरण (२८६) स्थिर
सदगत (१५, २५६) सद्गति
सदबुध (१) सद्बुद्धि
सदामद (७४१) निरन्तर

सन्नक (२४७) मनक
सपत्त-पियाळ (१५५) सातों पाताल, सात अधोलोक
सपन्नो (सुपन्नो)(१८५) उत्पन्न हुआ
सबद (२६६) शब्द
सबद्द (१३७, २७०, २८७) शब्द
सबै (६६, १४७, २८०) सर्व, सब
समंद (८५) समुद्र
समंदां (३१०) समुद्र
समंध (१७२) संबन्ध
समराथ (६, ६४) समर्थ
समवड (१३४) सरीखा
समांणउ (२८२ २८४, २८६) १ समा गया २ मिल गया
समांणोय (७७६) समा गया
समाध-समंद (१८) प्रलय की समाधि, प्रलय काल की समुद्र समाधि
समापरण (४५, १६०) समर्पण
समाय (१२६) १ समा देते हैं. २ समा जाता है
समी (३५४) सरीखी
समोवड़ (२०६) समान
सम्राथ (१४५, २५५) समर्थ
सयंभुव (१६२) स्वायंभुव मनु, स्वयंभुव
सयांण (२४८) सयाना, ज्ञानी

सरगुण (६४) सगुण
सरजण (१४५, २५५) बनाने के लिये
सरज्जिय (२७६) बनाया
सरज्या (८) रचना की
सरणा-असरण (१८८) असरण शरण
सरब (३५४) सर्व
सरब्ब-निवास (२६१) सर्व भूतो मे निवास करने वाला
सरब्बस (२६७) सारे, सर्वस्व
सरसति (१) सरस्वती
सराप-उतारण (८७) शाप को मिटाने वाला
सरीस (५०) सदृश
सरोज (१५७) ब्रह्मा
सलभ्भो (१६६) सुलभ
सल्ल (७३) शल्य
सवळो (३४८) अनुकूल
सस (६५, १६०, १६२) शशि
ससिहर (१८६) १ चन्द्र, २ महादेव
सह (४, ६, ८, ५४, १७७, १६१, २८४, ३०१, ३१३, ३२६, ३५४, ३५७) समस्त
सह कोय (८, १३३) सभी कोई
सह ठाम (३१३) सर्वत्र
सहण (२६६) क्षमा
सहस्सरवाहव (३०) सहस्रबाहु
सहाय (३५१) सहायक
सहियो (३५०) सहन किया
सहेत (५५) सहित
साई (१२६, १३१) प्रभु, स्वामी
सापरत (३३५) १ साप्रति २ प्रत्यक्ष ३ निश्चय ही
साभळ (१६, ५१, १२४, १८८) १ सुनिये, २ सुनकर
साभळिये (३५२) सुनिये
सामिय-जग्ग (२३४) जगत का स्वामी
सामी (११) स्वामी, प्रभु
सामुहा (३०६) सम्मुख
सावट (१८) समेट कर
सासो (२२६) सशय
सायुज्य (२६०) सायुज्य, मुक्ति का एक भेद
साख (१७२) साक्षी
साचा (३५१) सच्चे को
साचे (२१०) सत्य
सातु-रिख (२४१) सप्त ऋषि
साद (२८, २१३) १ शब्द २ पुकार
सादविया (२१३) पुकारा
साध (७१, ८५) सत
साधव (१८१) सज्जन

साधवां (३४१) साधुओं से
सामीप (२६०) सामीप्य, मुक्ति का एक भेद
सारंग (७०) धनुष
सार (११८) सुधि
सारखा (३३६) सरीखे
सारण (४६) सिद्ध करने के लिये
सालोक (२६०) सालोक्य, मुक्ति का एक प्रकार
सावत्रिय (२४७) सावित्री
सावेव (२५६) सारूप्य, मुक्ति का एक भेद
सास (१४२) श्वास
सास-उसास (३१८) श्वास प्रति श्वास २ स्वाच्छोस्वास
सासत्र (१३३, ३०८) शास्त्र
सासोसास (११, ३४४) स्वाच्छोस्वास
साहत्र-वत्रिभद्र (२३३) श्रीकृष्ण
सिगाळ (६५, १४३) श्रेष्ठ,
सिघासण (१८६) सिंहासन
सिंधुव (२८१) समुद्र
सिता (२८८) मिसरी
सितासित (७०) श्वेत और कृष्ण रंग, सित और असित

सिदज्ज (२६६) स्वेदज, पसीने से उत्पन्न होने वाले जीव
सिद्ध (५५) पूर्ण
सिद्ध (२३१) सिद्धि
सिध (४५) पूरा, सिद्धि
सिध जोगिय (७५) सिद्ध योगी
सिंधि (२४०) सिद्धि
सिवेव (३७) गये
सिर ऊपरै (१२५) शिरोधार्य
सिरि (८४, १२५) १ श्री, २आप
सिरि रंग (२२८) श्री रंग
सिरीजी (१२३) श्रीजी, लक्ष्मीजी
सिसपाळ (८५) शिशुपाल
सीत (४२, २४८) १ सीता २ लक्ष्मी
सीव (६८) शिव
सुं (२२७) से
सुंय (२५६) से
सुक्ख (१७६) सुख
सुक्रियथ (११३) सुकृतार्थ
सुच्छम (१७४) सूक्ष्म
सुछम (२२२) सूक्ष्म
सुजि (३३१) उनकी
सुणावण (५६) सुनने के लिये
सुणि (३५७) सुन कर
सुणै (१०१) सुनकर

सुनो (१८) सो गया
सुत्रा (२६३) धागे
सुध (३५६) पवित्र, शुद्ध
सुधारण (६०) सुधारने के लिए
सुन्न (१६६,१७३) शून्य, शून्याकाश
सुरणेखाय (३८) सूर्पणखा
सुपायण (१४) १ निमित्त, २ प्राप्त कराने वाला
सुपीत (६६) पीला
सुभग (३४६) सुंदर
सुमिरणँ (३४६) सुमिरण करने से
सुरभ (२३६) सुगंधि
सुरभत (२५०) सुरभित
सुरग (३४५) स्वर्ग
सुरत्त (७०) रक्तवर्ण
सुरसत्ता (१६०) सरस्वती
सुरा (२६) देवताओं को
सुरीस (६३) देवताओं के ईश
सुवँ (३३५) सो जाता है
सुहि (२८१) वही
सुहै (२४१) शोभा पा रहे हैं
सू (२०४, ३४०, ३४१, ३५८) से (अपादान और करण कारक)
सूझै (३५४) दिखाई देता है
सूता (३२९) सोते हुए
सूर (१४५) देवता
सूळ (८४) १ त्रिशूल २ पाशुपत्य
सेवक्क (२४६) सेवक
सेवग्ग (२८२) सेवक
सेवता (१८६) सेवा करने से
सेविस (११४) सेवा करूँगा
सेस (६७, १४६, ३११) शेष भग शेषनाग
सेस-प्रधार (८६) शेष के आधार
सोज (१४५) वही
सोण (३५०) शोणित
सोध (३५५) शोधन करके
सोळ कळा (१६०) चन्द्रमा की सोलह कला
सोळ भात (६६) पूजन के षोडशोपचार
सोहै (२६६) शोभा पाता है
सोहो (२६७, २६४, २६६) मद
स्नेहे (१) स्नेहपूर्वक
स्याम (५३) श्याम
स्रंग (५४) सींग
स्रप (३५१) सर्प
स्रब (१८, ५७, ६३, २०५, २५७, २६८, २६६, २८६, ३५८) सब



हरिरस की कतिपय प्रतियो के विशिष्ट पाठातर
श्रीर कुछ प्रक्षिप्त-पाठ

परिशिष्ट २

परिशिष्ट-परिचय

जो काव्य अधिक जन-प्रिय हो जाता है, उस पर लोक का अपना अधिकार हो जाता है। उसमें सहज ही लोक-मनोवृत्ति के अनुसार परिवर्तन होने लग जाता है। मीरा, चन्द्रसखी, मनसखी और दयासखी आदि भक्तजनों के काव्यों में भी ऐसा होता रहा है। प्रतिलिपियों की असावधानी और अज्ञानता भी इस परिवर्तन का प्रवर्तक-कारण कहा जा सकता है। हरिरस में भी ऐसा ही हुआ है। उत्तर-गुजरात, सौराष्ट्र, थाट (थरपारकर-सिंध) और राजस्थान के मारवाड और बीकानेर इत्यादि प्रदेशों में इसकी शताधिक हस्त-लिखित प्रतियों को देखने का सुअवसर मिला। उन सभी प्रतियों में छंद-संख्या, छंद-क्रम और छंद-रूप एक समान नहीं। मुद्रित प्रतियों के संस्करणों का भी यही हाल। उल्लिखित तीनों बातें मुद्रित प्रतियों में भी हस्तलिखित प्रतियों के समान ही पाई जाती हैं। पाठ साम्य, पाठ-क्रम और छंदों की संख्या किसी में भी एक समान नहीं। मुद्रित प्रतियों का यह अनेक प्रकार अन्तर यही प्रगट करता है कि शुद्ध प्रतियों की खोज कर मूल पाठ के निकट आने का किसी ने प्रयत्न नहीं किया। कवि की जन्म-भूमि मारवाड का मालानी प्रान्त और प्रवास-भूमि सौराष्ट्र प्रान्त एवं उत्तर-गुजरात से प्राप्त प्रतियों से पाठ-चयन करके हम यह विषय-विभाजित अद्वितीय संस्करण पाठकों को भेंट कर रहे हैं। तथापि अनेक प्रतियों में प्राप्त कुछ आवश्यक पाठान्तर (१) और प्रक्षिप्त छंद (२) पाठकों और भक्तजनों की सेवा

में इस परिशिष्ट में प्रस्तुत कर रहे हैं; जिससे काव्य में निरंतर होते रहने वाले विविध परिवर्तन-परिवर्द्धनों के कारण उसकी लोक-प्रियता और उसके महत्व का समुचित अनुमान लगाया जा सके।

पाठान्तरों के छंदों के आगे लिखी गई संख्याये प्रस्तुत हरिरस के छंदो की है।

प्रक्षिप्त छंद अनेक प्रतियो के हैं। उनका क्रम भी तितर-वितर और विषय वार नही होने से विषय युक्त नही किये जा सके हैं और इसीलिये उनके आगे छदो की क्रम-संख्या नही दी जा सकी है।

पाठान्तर और प्रक्षिप्त-पाठ में मूल प्रतियों के अनुसार 'ख' के स्थान सर्वत्र 'प' ही लिखा गया है।

—सम्पादक

॥ ॐ शिव ॥

परिशिष्ट ३

१ पाटान्तर

लागा हू पहलो लळी, पीतांबर गुरु पाद
वेद पदारथ भागवत, पायो जेण प्रसाद (३)
लागू हू पहलां लुळें, (३)
लागू म्हू पहला लळं (३)

पूठि धरणि सिर सावनो हरि तू चितवणि हार
तुझ ही तुज्झ करतडा, परम न लाभै पार (५)
पीठ धरणि घर पट्टडी, हरितिय चितरण हार
तोइ तोरा चरिता तणो, परम न लाभै पार (५)
पीठ धरण कर पोटडी, हर थिय लेपणहार
तोई तारा चिरता तणो, परम न लाभो पार (५)

तोरा हू पूरा तवै, सकू केम सरमाय
पन्नभुज सहु थारा चरित, निगम न जाणू नाथ (६)

पच्छा आण तुहाळो पूठ, उवार विसन कहै सुर ऊठ (१७)
पईठा आवि तुहारी पूठि, उवारि वृसन्न कहै सुर ऊठि (१७)

जटाधर अघ दइत्त जळाय, विमोहे रूप अनूप वणाय (२४)

एकलमल्ल । एकणमल (२५)
महणारभ । महराणव (२५)

पड़ै पपवाय किता पहिराज, कीवड तैं सेवक तारण काज (२८)

पहळाज । पहिलाज (२८)

किता तै फेरा जीतो कानिंग, जुगोजुग कीरण केना जंग (४४-४८)

नमो परब्रह्म परम्म पवीत, गुमांग गुशील सुनज सुनीत (७०)

उद्दांम । उदांम (७२)

नमो प्रभ हप सरोवर मग्ग, निकेवळ गोकळनाथ सुनग्ग

भक्तां चो भूषण गोप अनार, नमो वनमाळी नीन्द विहार (७४)

नमो प्रभ हंस सरव्द प्रमेग, निकेवळ गोकळनाथ नगेन (७४)

नमो व्रज बाळ नमो नटवेस, नमो सत नांम सवै कुळ सेस (७५)

नमो पुरुषोतम तीकम प्रम्म, नमो नंद गोप अगम निगम्म (७८)

नमो चद गोप अगम निगम (७८)

नमो जळ पाथर बांधण पाज, नमो व्रतपाळण तारण राज (७६)

नमो हैग्रीव निगम निधात, व्रजा कवि छंद ब्रह्म विधात (८६)

नमो अवतार पैं काज अधीस, नमो दुजराज नमो जगदीस

नमो निरलेप नमो निरकार, नमो निरदोप नमो निरधार (८६)

नमो निरलेप नमो निरपार, शिव गुण रूप नमो साकार (६४)

नमो निरलेप नमो निराकार, नमो निरदोप नमो निराधार (६४)

निरजण नांम नमो नाकार (६४)

नभ कंठ पवित्र करिस हूं नरहर (१०५)

मुणी म्हैं सार श्रमागै मति, गोविंद लहइ कुण तोरी गति (१२०)

श्रादै इम ईसर ब्रह्म श्रपार, श्ररी भव तारण नाह पियार (१२६)

करणीगर एहा करै, करता विलम न बाध (१३०)

केम हुश्रो ईसर गहै, के जायो जिरतार
श्रहमा रुद्र विचार श्रम, नह जाणें निरकार (१३५)

श्रमेसर तोरा पार प्रलोय (१३६)

'विरचिय' के स्थान 'विचित्री' (१३८)

चडा तत तोर लहै न विचार (१३८)

द्रगपाळ । द्रिगपाळ (१३९)

श्रलोलो लील करत श्रादेस (१४०)

श्रलाह श्रगाह श्रयाह श्रजीत (१४१)

क्रपाळ विसाळ मिंघोळ किमस, वडाळ मुजाळ उजाळ विसत
मुणाळ भुजाळ छनाळ महेस, श्रादेस श्रादेस श्रादेस श्रादेस (१४३)

रहै रत ध्यान इळासी रिप, लहै नही पार विरची ज लिप (१५१)

६
नही तो श्रम नही तो सास, नहीं तो भ्रम्म नही तो भास (१६५-१६६)

ससार समद तिसाया सुप (१७९)

सदा उदमादि जोगाणंद मिद्ध, चपू निन वेम जुग्रान न व्रद्ध (१८२)

गोपाळ मुगत्त निवाग्ण ग्रभ, परम्म अमृत पदम्मा ग्रभ

नमो सरसत्ति जोगाणद नत्त, व्याध निपूटण रावण ग्रत्त (१८२)

आदि नाथ आदेस, अमर नर नाग उपावण

संत जत सम धरण, च्यारि पांणी नानारण

घर अवर ढकियण, वेद ब्रह्मा विगनारण

घट घाट रूप भाजण घड़ण, वापारिणन वयणा वयण

ईसर कहै अपरम परम, नमो नाथ तो नारीयण (१८८)

सघण नीर सीतळ, हुवै मुनि मंजण हेकंनर

अदभुन ·· ··· , ·· ·· जळ रचै विव्रह पर

पटह इंद्र वाइंत, करै सकर कीरत्ती

अकळ कमळ ऊपरै अंक निमहर आरत्ती

घन करै अमर मगळ घवळ, पीतांबर गाइन गुण

कर जोड एम ईसर कहै, करै श्रेव रजै कवण (१८९)

आलेणं हरि नामं, मांनिष अवतार नमरिये नामं

सासत वेद पुराणं, सत्रये तत अक्खिर सारं (१९५)

आलीणो हर नांम, जांण अजांण जपीजै जीहां (१९५)

आळोणो नारायण, जे नर नांव लियंत

ते जम डंडो परहरै, केसव सरण रहंत (१९७)

से जमडंडा परहरै, राघव सरण रहत (१९७)

वां जमवारो वोड़ियो, ज्युं जंगळ हिरणांह (२०३)

प्रवट थायै ग्रातमा, चत्रभुज आवै चीत (२०६)

क्षुधा न भाजै पीर सूँ, त्रिपा न भाजट अग्नि
मुगति न लाभइ राम विण, मानो माचो मन्नि (२१०)

न दै साद काइ नारीयण माद दिया ज्या सत (२१३)

पेलै पाप प्रचड (२१४)

जीहा तो ऐहा लागा ज्याह मिलोइ नही भो लोका स्याह (२२६)

सोह हम भूत विधापत मम्भ, दुवादम थागुळ गाठ दुलम्भ
जादव दुलम्भ दु प्रामी जग्ग, पदम्म पनाक ग्रलखित पग्ग (२३४)

पगा विदियर सह जोडै पाग, वळै पग तो पट माय वपाग (२४३)

नवै पग दिम गौतम नारद, वदै पग कपिल करग्ग विहद (२४३)

'सनक' के स्थान 'छनक' (२४७)
जादव, जादव्व, जादम, जादुव (२४७)

आवै पग छाह अनेक अनाज, लियै पग छाह तणा फळ लाज
श्रोळगै पग परम्म अलेप्य, रहै पग छाह रमै गोरप्प (२५१-२५२)

अधिक प्रदे नप कोटि अरवक, सम्रत्थ सिरज्जण एक सरवक (२५५)
अधक पाये नप कोटि अरवक, समाथ सिरज्जण भाजण सवक (२५५)
एकै विण माह भाजै घर ग्राम, निपावै अधिका केवळ नाम (२५५)

दातार मुगत दुन्है जैदेव (२६०)

पदारथ तूं हिज तूं हिज प्रव्व, छुटा हित्र ताणा वेजा छव्व
पुरांणी प्रभम वचाणी प्रीत, जुगत्त भुगत्त सर्वे ही जगीत (२६३)

छती थी माया घूघट छोडि, कियो म्है ठावो ठांमै कोडि
अपां चित लागो बंव अहीर, नही किण मांहि तुहारो नीर (२६५)
आपै चित जागवि वेह आहीर, नही ज्यां माहि तुहारो नीर (२६५)

ओछारि म आपो मम्म अळूझ (२६८)
ओछारत आपो मस आ'ळूझ (२६८)

काइ तो काणि काड तो कांम
हिवै पग लाधी हे हर गांम (२७०)

लगावि गळै हवि अंतर लाइ, वाह्या नन जाहि तिके मत वाहि
वेसगर स्रव्व तुहारो वेस, नही तो जेथ स दापत्रि निवेस (२७५)

ठगारा ठाकुर हेको थाय, पडद्दा उठाहि प्रहो हिव प्रीय (२७६)

गळै जंजीर विछोडै गठ, कगावो वात लगाड़ो कंठ (२७७)
गळा गंभीर विछोडवि गंठि, कगोवो वात लगावो कठि (२७७)

कहो जो स्याम करूं सो काम, गिदै धरि वैठो अंतर रांम (२८१)

सुप्रेह जु स्यांम महा जु सरीर, गोविंद गदाधर ग्यांन गहीर (२८४)

सर्वे गुण देव अतीत संसार, विभू अत गूझ परम्म विचार (२८७)

आपां हरि हूं तूं आपो आप, बीहां हो बीहां तूं भइ बाप (२९१)
असां हूंतां आपो आप, बीहां हो बीहां तो भै बाप (२९१)
अद्धां हरि हूंतोइ हूंतोइ आप, बीहां तोइ बीहां तू भयि बाप (२९१)

राज विलोचन सुद्ध ना घरे रग, श्रीरग अनत कृसेन की सेव
भगत्ति दयाळ दईता सेव, सथापण सर्ग प्रकासण सव्व (२६३)

मुनेम महेम कोइल्या मज्झ
प्रसिद्ध महा बळ तेज प्रयज्झ (२९६)
मनेस महेम कोमतळ मभि
प्रसिद्धि महा वळ तेज पयभि (२८६)

तिनह तेन पुहप हि फुनेल ऊमळत सायर
अगनि पाठ जोवन्न घट भगवह त कायर
ईव ग्स पोमति कस श्ररथ सासत्रि ढर ठाहै
पान चग माजीठ रग उछरग विमाहै
पग नीर धीर घर अतरै, मद सरीर कुंजर मयण
मन वर्म जेम तन मझली ज्यौं मो मन वसियो महमहण (२९९)

आद तूझ थी ऊपना, जगजीवण सहु जीव
ऊच नीच घर अवतरण, दां के दोस दईव (३०१)
आदु तुझ थी ऊपन्या, जग जीवन सब जीव
ऊच नीच घर अवतरण, दै तूं वस दईव (३०१)

आपोपै हुता अनत, आप्यो तैं अवतार
पाप धरम चा पाहरू, लाया जीवा लार (३०२)

दीह घणा माझल दुनी, रळियौ देखै रूप
माधव हर्मै प्रकास मुहि, सिव ताहरो सरूप (३०३)

ताहरी ठेल्या दोष तैं, जइयां आद जनम
तइयां हूंता अम्ह तणा, केसव किसा करम (३०५)
थारी इल्ला दोय थै, जेहां आदु जनम्म
तेहां अम्ह हूंता तणा, केसव केहा कम्म (३०५)

अम्हां पटंतर राखियै, वच्छळ भगतां ब्रह्म (३०७)
अपां पटंतर आखियो, भगत वछळ मो भ्रम्म
दीधा अमर केता किया, धुर हरि पाप धरम्म (३०७)

विण अपराध विटंबनो, राखो त्रिभुवण राय
पर कूड़ा सारत्र क्रिसन, कर क्रम कूडा काय (३०८)

नाद वगंती टेडरी (३१०)
नाद वसंता डेडरा (३१०)

करम बंध निकरम करण, भवभंजण भगवांन (३२०)

रांम सरोवर रांम वर, रांम पिता सुख कंद
जिण दिन रांम न संचरै, सो दिन अंधाधंध (३३४)

हर हर करै न पातरै, हर रो नांम रतन्न
पांचूं पांडव तारिया, करतां गयो करन्न (३३८)

जगत गुरु भगवंत भज, धूपत रसणा धार
सिव हर हर निस दिन उचर, यह तव नांम संभार (३४४)

रहूम निगलब ग्रेकलो, तज काया मझ वास
सायी तिण दिन सखधर, सुरग तणै पथ साम (३८५)

ग्रातम पिया ग्रजाण ही (३४७)

उण रस म सब रम कियो, हरिरस समो न कोय
रति इक तन म सचरै, सब तन हरि मय होय (३५४)
सरज रमायण मे रसी, हरिरस समो न काय
टुक इक घट मे मचरै, सोह घट कचन थाय (३५४)

इण ग्रवसर मत ग्राळसै, ईसर ग्रासै ग्रेम
प्राणी हरिरस प्रामिया जनम सफळ थिय जेम (३६०)

कवि ईसर हरिरस कियो, दिहा तीन सो साठ
महा दुस्ट पामै मुगत, जो कीजै नित पाठ (३६१)
उठ नित करिया पाठ (३६१)
नित उठ कीजै पाठ (३६१)
नित प्रत करिजै पाठ (३६१)
पहला कीधा पाठ (३६१)

२ प्रक्षिप्त-पाठ

केसवा क्लेस नासाय, दुष नासायते माधवा
हरहरे पाप नासाय, गोविंदो सुष दायका ।

केशवा क्लेश नाशाय, दुष नाशायते माधवा
श्रीहरी पाप नाशाय, मोक्ष दाता जनार्दन ।

उचरेत रांम नांमेण, रांम नाम उचरेत जीहा
गया पापं षसेण, श्रीराम नांम जुगे जुगे ।

रांम नांम सदा वाणी, राम नांम सदा कथा
रांम नांम सदा सबदं, ते सबदा सुक्यारथा ।

राम नांम विना वाणी, राम नाम विना कथा
रांम नांम विना सब्रदं, ते सबदा अक्यारथा ।

गो क्रोड दानं ग्रहणे तु काशी
मकरे प्रयागे निज कल्पवासी
सुमेर तुल्य दे हेम दानं
नहि तुल्य नहि तुल्य गोविंद नामं ।

रांम न रती रे मती, पर रत्ती दुरमत्ति
तेणी त्रिपती नांहि तू, फिरति भमत्ति भमत्ति ।

रांम भरोसै ऊकळै, आधण ईसरदास
ऊकळतां में ओरदै. बंदा रष विसवास ।

वारयो फेरयो नांव पर, किया जु राई लूण
सोह चलावै पंथ सिर, तेह भुलावै कूण ।

नारायण न निंदरै, निंदै तो दुरमत्ति
जे नारायण सिर हणै, तोइ नारायण गत्ति ।

नारायण नैडो वसै, देव म जाणै दूरि
जिण दिन ओ जग छडिजै, आवै परवत चूरि ।

चदा सो चलणा गया, सूरिज मडळ सोय
जीव ! हरीरस वाच रे, हरि सूं नातो होय ।

वाय चलण लागै करण, सूरिज ससि प लग्ग
हंस जिका सूं वाहरो, जनि को जाणै मग्ग ।

राम तणै पालवणै मन पप्पी [पपी] तन रप्प
कालं कमण न गजियो, को अजरामर अप्प ।

नारायण भजियो नही, भजिया अवर अजन्न
ज्या तजिया मानव जनम, आया तन अन-मन्न ।

नारायण भजियो नही, भजिया अवर अजन्न
ज्या तजिया मानव जनम, सभिया तन्न असन्न ।

दीवाण तू दईवाण तू, मभाण तूं सुरताण
सुभियाण थारो नाम मन्नथ, सोह विध मप्रमाण ।
रहमाण तू वायाण राजे, गयण तू फुरमाण गाजै
प्राण पुरुष पुराण, प्रिथिवी जाण तू परमाण ।

विश्व थारो थू विसभर, धणी थू थारी सहो घर
पुड परट्टण थू हि पेलै, कळ न सकियो कोय
कई जिवाडै केई मारै, केई वोडै केई तारै
ठालवै गरिया भरै ठाला, थू करै त्यु होय ।

भगता सुणतां सील विनास
पामै नर मोक्ष तणा आवास ।
अचळ अमळ जळि थळि अनंत, सत रूप ज मगळि
मदन कमळ सुप ममळ, पवित्र जळ गंग पळाहळि
अबळ उधारण अचळ, वसै रोम रोम ब्रह्ममंडळ
तारण गिर जळ अथळि नाम थारो जन मंगळि
चित हूंत चपळि जुगति करि नर नारायण तूझ निरमळ
आदेस विसन अवगत अलप, वहै जुग जायै अेक पळ ।
पर्मं तैं वेता पाफर पान, जिको जगनाथ रचायो ज्यांन
जिता तैं आलम साह अलाह, वन थळ माहिं किया वीमाह ।
नमो जप जाप विता जोगिंद, राजा श्रीरांम नमो राजिंद
नमो सब व्यापक अंग अनंग, नमो निसिवासर रेण निहंग ।
नमो परब्रह्म नमो पर पत्ति, नमो पर देव नमो परसत्ति
नमो परमेस नमो परध्यान, नमो परजोति नमो परध्यान ।
नमो निरनांम नमो वहो नाम, नमो अवधूत नमो श्रीराम
नमो जग-लोप नमो जग-थाप, नमो जग बंध नमो जग बाप ।
नमो निरपेत नमो निरकाम, नमो निरजोत नमो निरियांम
नमो निरभूप नमो निरभेष, नमो निररूप नमो निररेप ।
नमो निरग्रत्त नमो निरदेह, नमो निरदत्त नमो निरनेह
नमो अणदेह अनेह अनंत, नमो अणदेही व्यापक अंत ।
नमो निरनाम नमो निरदेह, नमो निरगांम नमो निरगेह
नमो निरपथ्य नमो निरप्रेह नमो निरदप्प नमो निरदेह ।

नमो निरधम्म नमो निरधार नमो निरक्रम्म नमो निरकार
नमो परब्रह्म नमो परभाव नमो परक्रम्म नमो परकार।
नमो प्रम पवग नमो प्रम पांण, नमो प्रम अंक नमो प्रम आंण
नमो प्रम अम्म नमो प्रम धांम, नमो प्रम क्राम नमो प्रम कांम
नमो सब सागर अंग सुरंग, नमो निग चा नर रेण निहंग
नमो बंभ संभ विमल विसुद्ध, विहुंग त्रिजोग त्रिलोक त्रिविद्ध
नमो नर-नार निपावण नाथ, नमो नत नाजण देव समाथ
ब्रहम्मा वेद कतेब विचार, पढ़ै गुण शेश लहै नह पार
मुनीसर ध्यांन धरंत महन्त, अनै जुग हेकौ हि नांम अनंत।
कहै सनकादिक चारूं क्रीत, पढै नित नारद धारै प्रीत
रहै नित सेव रमाय सुरेस, आदेस आदेस आदेस आदेस।
अगाम अछेह उदास अनोप, अथाह अथम्म अलेप अलोप
वैराग न राग न वप्प न वेस, आदेस आदेस आदेस आदेस [1]।
अनीत अदीत अरीत अगाह, अनीन अभीत अगीत अगाह
अमीत अतीत अजीत अजेस, आदेस आदेस आदेस आदेस।
अरांम अजांम अयांम अपण्ण, अठांम अगांम अधांम अलप्प
अनांम अकांम अवास अवेस, आदेस आदेस आदेस आदेस।
अमंग अपंग असंग असंत, अरंग अजंग अनंग अनंत
अभंग अलंग अढंग अदेस, आदेस आदेस आदेस आदेस

१- अगम्म अवेह उदास अनोप, अथह उपरांम अलप्प अलोप
वैराग न राग न पवन न वेश, आदेश आदेश आदेश आदेश।

अचाळ अवद्द अचाळ अकम्म, अपाळ अलद्द अभाळ अभ्रम्म
अचाळ अरद्द अनाळ अनेस, आदेस आदेस आदेस आदेस ।

अमात अतात अजात अजेव, अदोह अरात अभ्रत्त अभेव
अगात अगास अवात अवेस, आदेस आदेस आदेस आदेस ।

अनेह अदेह अनेह अनाम, अरेह अछेह अग्रेह अगाम
अक्रेह अग्रेह अगेह अपेर, आदेस आदेस आदेस आदेस[२] ।

अगम्म अथाह अनत अनूप, सदस मदस वदस सरूप
निमाळ निकाळ निताळ निवेस, आदेस आदेस आदेस आदेस ।

अनग अथाह अभेव अरूप, छत्रोह वदस मदस सरूप
सुपा नह मेरहै मेस महेस आदस आदेस आदेस आदेस ।

सुजळ गिनान भजन तन मारिस
ध्रम क्रम जप तप नेम वधारिस ।

राव तणी इछा रघुराया
अखिल चराचर जीव उपाया
राज आग्न्या म्हारै सिर राखिस
भूधर तूझ तणा गुण भाखिस ।

परमो तै साहि विना कप पेथ
वगाग्यि देवा माद्र वेथ ।

दुनी पा पाळ सुजाळ दईत
जिके दळ गाझ ढर्भे ग्रह जीत ।

---

२. अदेत अग्रेन अनेत अपेत, आदेत आदेत आदेत आदेत

आगै पग राज षळक्क उदद्ध
गरज्ज पगां रज म्होटा गिद्ध ।
पगां नित पूजै पांडव पच
सेवै पग क्रन्न देखै सुख संच ।
पगां तुझ पूज करै प्रहळाद
नमै पग छांह वडा नर नाद
इसा पग तेज तणा अंबार
तिके पग सेवै ईसर तार ।

छोटा हरिरस

परिशिष्ट ४

परिचय

सप्त श्लोकी भागवत और गीता की भाँति भक्तवर ईसरदासजी ने भी भक्तजनों के हितार्थ इस सप्तपदी हरिरस को बनाया है इसे 'छोटा हरिरस' कहते हैं। इस छोटे हरिरस के नित्य-पाठ और श्रवण-मनन का महात्म्य भी बडे हरिरस के समान ही माना जाता है।

हमें इसके कई पाठ देखने को मिले हैं, उनमे से दो यहां दे रहे हैं।

—सम्पादक

॥ ॐ शिव ॥

अथ छोटा हरिरस

(१)

हरि गुण गाय हरि गुण गाय
हरि गुण गाय वहो गुण थाय
प्रगट हुई गंगा हरि पाय
ध्रुवजी अटळ हुआ हरि ध्याय

(२)

ध्रुव हरि मेरु तणें सिर धरिया
हरि पांडव पाचूं ऊधरिया
वीसारै हरि ते वीसरिया
हरि रै नाम घणा नर तरिया

(३)

पाच क्रोड हूता प्रहळाद
सात क्रोड हरचंद परसाद
नव जुजिठळ बारह बळिराज
अमरापुरा तेडीजै आज

(४)

हरि उद्धार कियो अमरीन्द
राख्यो रुकमांगद अग्नीन्द
तोय जनम हुइ तरिया तीन्द
सिवै कृष्ण मन आई सीन्द

(५)

हरिजी अहल्या दीधो अंग
सरीर कुवज्जा कीध सुचंग
भणतां पातक थायै भंग
गुण तत गहै लहै पद अंग

(६)

हरि तूठां हि टळै ग्रभवास
हरि तूठां अमरापुर वास
अवर छांड नर बीजी आस
बारठ एह वडो विसवास

(७)

हरि हरि कहतां जपियै जाप
हरि हरि कहतां तपियै ताप
हरि हरि कहतां मिटै संताप
ईसर भणै अलख धन आप

एक ग्रन्थ प्रति मे छोटे हरिरस का इस प्रकार पाठ-भेद पाया गया है। इसमे केवल ६ छंद है-

(१)

हरि गुण गाय घणो गुण थाय
प्रीत कर गग तणों जळ पाय
हरि सुमिरै तो वैकुंठ जाय
धूजी अटळ हुम्रो हरि ध्याय

(२)

प्रभु सुमरचो जन पाडव पाँच
या भव-सिधु न लागी ग्रांच
तरचो प्रह्ळाद कोटि पंच ताज
तरचो हरिचद कोटि सत काज

(३)

तरचा नव कोटि जूजीठळ राय
बारह कोटि तरचा वळिराय
हरि जन तार लियो गजराज
ग्रमरापुर रासीजै ग्राज

(४)

हरि अविनास कियो अमरीख
रह्यो रुकमांगद जे अंत रीख
भीष्म प्रतिज्ञा कीधी न भंग
हरि अहेल्या दीधो अंग

५)

सरीर कुबज्जा कीध सुचंग
सदा वभीखण राख्यो संग
हरि गुरु संत करो सतसंग
हिरदै धार विसेख उमंग

(६)

धरो न कदी हिरदै मझ धेस
करो नह मानव देह कळेस
अलवा धणी री कीजिय आस
वदै कवि ईसर एक विसास



हरिरस

कथा-कोश

[अतर्कथाए और परिभाषाए]

परिशिष्ट ५

॥ ॐशिव ॥

परिशिष्ट-परिचय

हरिरस में जिन अनेक भक्तों और तीर्थों आदि के नाम तथा राजस्थान और राजस्थानी-भाषा के विशिष्ट प्रादेशिक व पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग हुआ है, उनके सम्बन्ध में यथा-प्रयत्न और प्रसंगानुसार संक्षिप्त वर्णन इस परिशिष्ट में दिया गया है, जिससे भक्तजनों और पाठकों को हरिरस का पाठ करते समय उनके सम्बन्ध में यथावश्यक कुछ जानकारी मिल सके।

नामों के आगे की संख्याएं प्रस्तुत हरिरस के छन्दों की संख्याएं हैं और कोष्ठकों में अंकित उनके शास्त्रीय नाम हैं।

विशिष्ट महापुरुषों के आप्त-वाक्य भी यथा-संभव यथा-प्रसंग देने का प्रयत्न किया गया है।

—संपादक

अकरूर [अक्रूर] २४७

अक्रूर श्रीकृष्ण के चचा और वसुदेव के भाई थे। कंस की राज सभा में अपमानित होकर रहने वालों में ये भी एक थे। कंस ने श्रीकृष्ण और बलराम को मारने के लिए एक यज्ञ करने का ढोंग रचकर अक्रूर को इन्हें बुलाने के लिए भेजा था। अक्रूर कंस के अत्याचारों से दुखी था अतः उसने इस षड्यन्त्र की सूचना श्रीकृष्ण को करदी। श्रीकृष्ण और बलराम इनके साथ मथुरा आए और वहाँ उन्होंने कंस और उसके कई साथी-योगों को मार दिया। स्यमंतक मणि भी अक्रूर के पास थी, जिसके प्रभाव से द्वारिका में, अनावृष्टि और प्रजा में धनाभाव नहीं होने पाता था। ये श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे।

भक्त-वाणी

ममाद्यामङ्गलं नष्टं फलवांश्चैव मे भवः।
यन्नमस्ये भगवतो योगिध्येयाङ्घ्रि पङ्कजम्॥

(भक्त अक्रूर। श्रीमद्भागवत)

आज मेरे समस्त अमंगल नष्ट होगये। मेरा जन्म आज सफल हुआ। आज मैं भगवान् श्रीकृष्ण के उन चरण-कमलों में प्रत्यक्ष नमस्कार करूंगा, जो बड़े-बड़े योगियों के लिये भी मात्र ध्यान करने की ही वस्तु है।

अजामेळ [अजामिल] २१२

अजामिल एक अनाचारी ब्राह्मण था। उसने अपने माता-पिता और स्त्री को त्याग कर एक शूद्रा से प्रेम कर लिया था, जिससे उसको दस पुत्र हुए थे। इनमें से एक का नाम नारायण था, जिसके ऊपर इसका सबसे अधिक प्रेम था। बार बार नारायण कहते-कहते अजामिल की वृत्तियों में अंतर पड़ने लगा और उसे ज्ञान होने लगा। उसने सोचा, अन्य अभिप्राय से उसका नाम लेने का यह फल है तो भक्ति पूर्वक नारायण की सेवा करने का कितना फल होगा। यह सोच कर वह हरिद्वार चला गया और वहां गंगा के किनारे बैठ कर अनन्य चित्त से भगवद्भजन में अपनी शेष आयु को बिताया, जिससे अजामिल को वैकुण्ठ की प्राप्ति हुई।

अठासी हजार रिख [अठासी हजार ऋषि] १५१

अठासी सहस्र ऋषियों का समूह जो नैमिषारण्य तीर्थ में निवास करता था। सूत मुनि ने यहीं इन ऋषियों को महाभारत की कथा सुनाई थी। ऋग्वेद प्रातिशाख्य के रचयिता शौनक ऋषि इस पुण्याश्रम के कुलपति थे।

अठार पुरांण [अष्टादश पुराण] ६५

वेदव्यास प्रणीत अठारह पुराण ये हैं- (१) विष्णु (२) पद्म, (३) ब्रह्म, (४) शिव, (५) भागवत (६) नारद, (७) मार्कण्डेय, (८) अग्नि, (९) ब्रह्मवैवर्त (१०) लिंग, (११) वराह, (१२) स्कन्द (१३) वामन, (१४) कूर्म, (१५) मत्स्य, (१६) गरुड़, (१७) ., और (१८) भविष्य।

अत्रि २४४

अत्रि महर्षि ब्रह्मा के मानस पुत्रों और सप्तर्षियों में से एक हैं। कर्दम प्रजापति की कन्या अनसूया इनकी पत्नी थी। महर्षि दुर्वासा और चन्द्रमा इनके पुत्र थे। दत्तात्रय भी इन्हीं के पुत्र थे। ये अनेक वैदिक ऋचाओं के कर्ता और धर्मशास्त्र प्रवर्तक हैं। इनका बनाया हुआ धर्मशास्त्र ग्रंथ 'अत्रि संहिता' के नाम से प्रसिद्ध है।

आर्ष-वाणी

आनृशंस्यं क्षमा सत्यमहिंसा दानमार्जवम्।
प्रीतिः प्रसादो माधुर्यं मार्दवं च यमा दश॥
शौचमिज्या तपो दानं स्वाध्यायोपस्थनिग्रहः।
व्रतमौनोपवासं च स्नानं च नियमा दश॥

(अत्रिस्मृति ४८, ४९)

दया, क्षमा, सत्य, अहिंसा, दान, नम्रता, प्रीति, कृपा, मधुर वाणी और कोमलता— ये दस यम कहलाते हैं।

पवित्रता, यज्ञ, तप, दान, स्वाध्याय, जननेन्द्रिय का निग्रह, व्रत, मौन, उपवास और स्नान— ये दस नियम कहलाते हैं।

अमरीख [अम्बरीष] ५२

गंगा के प्रवर्तक महाराज भगीरथ के प्रपौत्र अंबरीष बड़े पराक्रमी और उच्च कोटि के विष्णु भक्त थे। राज्य का सारा भार अपने सेवकों को सौंपकर ये अपना अधिकांश समय हरि भजन में ही व्यतीत करते थे।

व्रत का पारण द्वादशी समाप्त होने के पूर्व कर लेने के कारण, विशेष आह्निक कृत्य में लगे हुए आमंत्रित महर्षि दुर्वासा ने क्रोधित होकर अंबरीष को मारने के लिये अपनी जटा में से कृत्या नाम की राक्षसी को उत्पन्न किया। अंबरीष को मार देने के पूर्व ही भगवान के सुदर्शनचक्र ने राक्षसी को मार दिया। अकारण अपने भक्त को सताने के कारण वह चक्र महर्षि के पीछे पड़ा। महर्षि भाग कर भगवान् विष्णु की शरण में गये। महर्षि का उग्र क्रोध सदैव के लिये शांत कर देने की इच्छा से भगवान् ने इन्हें अंबरीष से ही क्षमा याचना करके इस आपत्ति से निवृत्ति पाने का एक मात्र उपाय बतलाया। भयभीत ऋषि तब अंबरीष की शरण आये। भक्तराज ने भगवान् और चक्र से निवेदन करके महर्षि को संकट-मुक्त किया।

भक्त-वाणी

विप्रस्य चास्मत्कुलदैवहेतये।
विधेहि भद्रं तदनुग्रहो हि नः॥

(अम्बरीष : श्रीमद्‌भागवत)

प्रभो! हमारे कुल के हित के लिये ही आप महर्षि दुर्वासाजी का कल्याण करने की कृपा कर दीजिये। हमारे ऊपर आपका यह महान् अनुग्रह होगा।

भक्त-महिमा

अहो अनन्त दासान महत्व दृष्टमद्य मे।
कृतागसोऽपि यद्राजन् मङ्गलानि समीहते॥
(महर्षि दुर्वासा श्री मद्भागवत।)

महर्षि दुर्वासा भक्त अम्बरीष के प्रति कह रहे हैं—

आज मैं धन्य हू। भगवान् के प्रेमी भक्तों के महत्त्व को आज मैंने देखा। राजन्! मैंने आपका अपराध किया, फिर भी आप मेरे लिये मगल-कामना ही कर रहे हैं। राजन्! तुम धन्य हो।

अरज्जुरा [अर्जुन] २४६ दे॰ पाडव

धर्म-वीर की वाणी

यज्जीवित चाचिराशुसमान क्षणभगुरम्।
तच्चेद्धर्मकृते याति यातु दोषोऽस्ति को ननु॥
जीवित च धन दारा पुत्रा क्षेत्र गृहाणि च।
याति येषा धर्मकृते त एव भुवि मानवा॥

अर्जुन कहते हैं—

जीवन बिजली के प्रकाश के समान क्षण भगुर है। वह यदि धर्म-पालन के लिये नष्ट हो जाता है, तो हो जाय, इसमें क्या दोष है? जिनके जीवन, धन, स्त्री, पुत्र, खेत और घर धर्म के काम में चले जाते हैं, वे ही इस पृथ्वी पर मनुष्य कहलाने के अधिकारी हैं।

अवतार ८६,८७

जिसका शरीर अपने अदृष्ट से बंधा हुआ नहीं होता है; और व वह पंच भूतों से ही बना हुआ होता है; तथापि वह साधुजनों के लिये सुख का हेतु और असाधुजनों के लिये दुख का हेतु होता है; इस प्रकार का शरीर धारण करना अवतार कहा जाता है।

स्वादृष्टारचितत्वे सत्य भौतिक शरीरत्वे
सति साध्वसाधु सुख दुःख हेतुत्वम्।

अस्टावक्र [अष्टावक्र] २४५

महर्षि उद्दालक ने अपने शिष्य कहोड़ को अपनी कन्या सुजाता व्याही थी। सुजाता जब गर्भवती थी तो गर्भस्थ बालक ने समस्त वेद और शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। एक दिन पिता जब वेद-पाठ कर रहा था तब गर्भस्थ बालक ने कहा कि मैंने आपकी कृपा से गर्भ मे ही चारों वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया है और प्राप्त ज्ञान के आधार से मैं देखता हूं कि आप वेद-पाठ अशुद्ध कर रहे हैं। महर्षि कहोड को अपने शिष्यो के सामने इस प्रकार अपमानित होने की बात सुनकर क्रोध आगया और गर्भस्थ शिशु को शाप दे दिया कि तुमने मेरा अपमान किया है इसलिये तुम्हारा शरीर टेढ़ा-मेढ़ा हो जायेगा। बालक का जब जन्म हुआ तो वह आठ जगह से टेढा था। अतः उसका नाम अष्टावक्र रखा गया।

अष्टावक्र बहुत तीक्ष्ण-बुद्धि, ज्ञानी और पण्डित थे। बाल्यावस्था में ही इन्होंने जनक की सभा के राजपंडित को शास्त्रार्थ में

हराकर अपने पिता का जीवनोद्धार किया था, जो उक्त पंडित से शास्त्रार्थ में पराजित होजाने के कारण जल में डुबा दिये गये थे। अपार सम्पत्ति के साथ जब अष्टावक्र अपने पिता को लेकर घर आ रहे थे तो मार्ग में उन्होंने अपने पिता की आज्ञा से समगा नदी में ज्यों ही स्नान किया तो उनके शरीर की वक्रता मिट गई।

'अष्टावक्र संहिता' में इसी शास्त्रार्थ के प्रश्नोत्तर संगृहीत हैं।

आर्ष-वाणी

मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत्त्यजे।
क्षमार्जवदयाशौच सत्य पीयूषवत् पिबे॥

(अष्टावक्र गीता)

मनुष्य ! यदि तुझे मुक्ति की इच्छा है तो विषयों को विष के समान त्याग दे और क्षमा, सरलता, दया, पवित्रता और सत्य को अमृत के समान ग्रहण कर।

अहल्या २५४

अहल्या ब्रह्मा की मानस पुत्री और गौतम ऋषि की पत्नी थी। पंच महासतियों में ये सर्वोच्च महासती मानी जाती है। ब्रह्मा ने अहल्या की सृष्टि त्रिलोक की सुन्दरतम वस्तुओं का सार लेकर की थी। देवराज इन्द्र ने इस पर आसक्त होकर चन्द्रमा की सहायता से गौतम के कपट वेश से इनके साथ संभोग किया। महर्षि गौतम को जब यह भेद मालूम हुआ तो उन्होंने दोनों को शाप दिया जिससे इन्द्र का शरीर नपुंसक और सहस्र-योनि होगया और अहल्या

पाषाणमयी होगई। इसीलिये इनका एक नाम पाषाणी भी प्रसिद्ध है। देवताओ के अनुनय से इन्द्र के शाप का निराकरण हुआ जिससे इन्द्र की सहस्र योनियां सहस्र नेत्रों में परिवर्त्तित होगई और मेष का पुंसत्व प्राप्त हुआ। तभी से इन्द्र को सहस्राक्ष और मेषवृषण भी कहा जाता है। अहल्या के वहुत पश्चाताप करने पर ऋषि ने यह निराकरण किया कि त्रेता मे भगवान राम के चरणों का स्पर्श होने पर उसका उद्धार होगा। समय आने पर जब राम विश्वामित्र के साथ जनकपुर जा रहे थे, उन्होने अपनी चरणरज के स्पर्श से अहल्या का उद्धार किया। अहल्या अपना पूर्व रूप पाकर पतिलोक को चली गई।

पश्चात्ताप-वाणी

मुनि शाप जो दीन्हा, अति भल कीन्हा,
परम अनुग्रह मैं माना।
देखउं भरि लोचन हरि भव मोचन,
इहइ लाभ शंकर जाना॥
(रामचरित मानस)

अहि-वारण १०३

गरुड के भय से रमणद्वीप से आकर यमुना के एक द्रह में रहने वाला भयंकर विषधर। इसके विष से आसपास का वातावरण और यमुना का जल विषमय होगया था जिसके कारण कोई प्राणी उधर जा नहीं सकता था। एक वार एक ग्वाला और उसकी गायें भूल से उधर चली गई और वहां पानी पीलिया जिससे वे तत्काल ही

मर गईं। भगवान् श्रीकृष्ण उस समय अपने ग्वाल-सखाओ के साथ गेंद खेल रहे थे। गेंद जमुना में पड गई। गायों के प्राण रक्षार्थ गेंद के मिस से भगवान् श्रीकृष्ण उस विषमय जल मे कूद पडे और उस द्रह मे इतने गहरे नीचे उतर गये जहा कालिय-नाग छिप रहा था। अपनी अद्भुत शक्ति से उसको पकड कर उसे चारों ओर घुमाकर खूब हैरान किया। तब इसकी स्त्रियो ने आकर नाग के जीवनदान की प्रार्थना की। भगवान् ने दया करके इस शर्त पर उसे जीवित रखना स्वीकार किया कि (१) मृत गायो और ग्वालो को अपना विष हरण करके जीवित करदे, (२) यमुना का जल शुद्ध करदे और (३) यहा से पुन रमण द्वीप को चला जाय। कालिय के यह सब मान लेने पर श्रीकृष्ण ने उसे अपने स्थान जीवित जाने दिया।

राजस्थानी साहित्य में भी 'नाग दमण' बहुत उच्च कोटि की रचना साया झूला द्वारा निर्मित है।[1]

अहीस [अहीश] १३७

कश्यप ऋषि की स्त्री कद्रू के पेट से उत्पन्न शेषनाग। शेषनाग के सहस्र फण हैं और निरतर पाताल मे रहकर अपने फणो पर पृथ्वी को थामे हुए हैं। ये ज्ञान के अधिष्ठाता हैं और गर्ग ऋषि को ज्योतिष विद्या की शिक्षा दी थी। इनकी एक कला और एक रूप क्षीर-सागर मे स्थित है। जिस पर विष्णु भगवान एक कला रूप अवतार से सदा शयन किये रहते हैं।

लक्ष्मण और बलराम दोनों शेष के अवतार हैं।

---

१. इस ग्रथ का सम्पादन भी मेरे सम्पादनाधीन है और शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है।

आतमरांम, आतम, आतमा [आत्माराम, आत्मा] २७९, २८१, ३२४, ३२५

वह जो नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव और ब्रह्म का रूप है। सत्य है, चेतन है और आनन्द स्वरूप है एवं अहं (मैं) से सबंधित ज्ञान का विषय है।

सर्व देहेषु पूर्ण आत्मा।
अह प्रत्यय विषय आत्मा।

आलम, अलम्म [आलम] १३२, १५४, २८३

'आलम' शब्द का अर्थ साधारणतया 'संसार' वा 'जनसमूह' होता है। पर हरिरम मे यह शब्द 'ईश्वर' और 'ससार' दोनों अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। 'ईश्वर' का 'आलम' पर्याय राजस्थानी (डिंगल) पद्य-साहित्य की एक विशेष बात है- और इस अर्थ में प्रायः रूढ होगया है। ईसरदासजी के अतिरिक्त राजस्थान के अनेक भक्त-कवियों ने अपने ग्रंथो में इस शब्द को ईश्वर अर्थ में प्रयुक्त किया है। पीरदान लालस द्वारा रचित 'परमेसर-पुराण, गुण अलख-आराध, गुण ग्यांन-चरित और गुण पानिग-पहार' आदि अनेक डिंगल पद्य-साहित्य के भक्ति-परक ग्रंथो में इस शब्द का 'ईश्वर' के अर्थ में यत्र-तत्र व्यवहार हुआ है[१]।

१- डिंगल-साहित्य मे आलम शब्द का अर्थ— बादशाह या नवाब भी होता है। पदमणी-चौपई आदि कई राजस्थानी ग्रंथों में इस अर्थ में भी इसका प्रयोग हुआ है।

'आलम' वा 'आलमजी' मारवाड के मालानी प्रान्त के एक प्रसिद्ध लोक देवता हैं। इनके सबंध में कई प्रकार की दन्त-कथाएँ प्रचलित हैं। मालानी प्रान्त के धोरीमना[२] गाँव के पास 'आलमजी रो भाखर' गुडा (गुढा=राडधरा) गाँव के पास 'आलमजी रो धोरो', नामक टीबा और 'आलमपुरा' गांव आलमजी के नाम पर इस प्रान्त मे प्रसिद्ध हैं। इन स्थानो पर आलमजी के मंदिर, मढ़ी (मठ) और थान बने हुए हैं। आलमजी जैतमालोत राठोड़ राजपूत कहे जाते हैं। ये अलख परब्रह्म की निर्गुण उपासना करने वाले बडे शूर-वीर और भक्त राजपूत थे। प्रति भादों शु० २ और माघ शु० २ को उक्त स्थानो पर इनके नाम से बडे मेले लगते हैं। आलमजी के बाद भी इन स्थानो पर कई सिद्ध-महात्मा होगये हैं। आलमजी के समय में यहा दूर-दूर के भक्त और साधुजन इनके दर्शनार्थ आया करते थे। कहा जाता है कि रावळ मल्लीनाथजी और उनकी रानी रूपादेजी भी यहा आया करते थे[३]। रूपादेजी के दांतुनो से धोरे पर

२- धोरीमना गुडा से २४ मील और गुडा, बालोतरा से ३६ मील दूर है। आलमपुरा गुडा से डेढ मील और आलमजी रो धोरो एक मील आलमपुरा के मार्ग में पडता है।

३- रावल मल्लीनाथ और उनकी रानी रूपादे दोनो बडे सिद्ध पुरुष हुए हैं। मल्लीनाथ के नाम से ही मारवाड के इस प्रांत का नाम 'मालानी' प्रसिद्ध हुआ। बालोतरा से १० मील पश्चिम में लूनी नदी पर तिलवाडा गाव के सामने के तट पर थान गाव के पास मल्लीनाथ का बडा समाधि मंदिर बना हुआ है। थोडी दूर मालाजाल गाव मे रूपादे का समाधि-मंदिर भी बना हुआ है। प्रति चैत्र कृ० ११ से चैत्र शु० ११ तक मल्लीनाथजी के नाम पर 'चैत्री रो मेळो' नामक बहुत प्रसिद्ध व्यापारी मेला लगता है। भक्तवर ईसरदासजी का भादरेस गाव भी इसी मालानी प्रान्त मे है।

उगे हुए दो जाल-वृक्ष यहां खूब प्रसिद्ध हैं और उन्हें पवित्र माना जाकर उनकी पूजा की जाती है। आलमजी के परिचय-प्रभाव से इन स्थानों के कुंओं का पानी मीठा बना रहता है, जब कि आस-पास का पानी मीठा नहीं है। घोड़ों की नसल-सुधार के लिये यह 'ढांगी' नामक धोरा तो जगत्-प्रसिद्ध है और इसीके कारण मालानी के घोडे प्रसिद्ध हैं। ऐसी मान्यता है कि इस धोरे पर पैदा हुए घोड़े बढ़िया नसल के होते हैं। घोड़ी के ठाण देने के समय[४] उसे उस धोरे पर ले जाते हैं और बछड़ा पैदा होने पर उसके तमाम शरीर में धोरे की रेती मल दी जाती है। घोडी को धोरे पर ले जाना संभव नहीं होने पर, वहां की रेती लाकर घुडशाला मे बिछा दी जाती है। इस पर से घोड़ों की इस नसल का नाम भी 'ढागी नसल रो घोडो' कहा जाता है। आलमजी और इस धोरे के महात्म्य के सम्बन्ध मे यह दोहा प्रसिद्ध है—

घर ढांगी आलम धणी, परघळ लूणी पास
लिखियो ज्यांनै लाभसी, राडधरो रहवास

(जहां की धरा पर ढांगी नामक धोरा स्थित है, आलमजी जहां के स्वामी है और जिसके पास में होकर प्रगाढ लूनो नदी वेग से बह रही हैं; ऐसा राड़धरा प्रदेश जिनके भाग्य मे लिखा होता है, उन्ही भाग्यशालियों का वहां निवास होता है।)

यहां भक्तवर ईसरदासजी के संबंध में भी एक लोक-कथा प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि एक समय वहां ईसरदासजी भी आये

४- 'ठांण देणो' राजस्थानी का एक मुहावरा है, जिसका अर्थ- 'घोड़ी द्वारा बछेड़े को जन्म देना' होता है।

थे। वहां पथिकों को पीने के लिये पानी का बहुत कष्ट था। उन्होंने भगवान से इस कष्ट के निवारणार्थ प्रार्थना की। भगवान ने उन्हें स्वप्न मे कहा कि तुम उस स्थान पर एक कुंआ खुदवा दो, और तुम ही वहा रहकर पथिकों को पानी पिलाने की सेवा करना स्वीकार करो तो उसमें मीठा पानी निकल आयेगा। वहा आलमजी की सत्सग भी तुम्हे मिलती रहेगी। ईसरदासजी ने ऐसा ही किया। वहां एक झोपडी मे भगवान् का सुमिरण करते हुए रहने लगे और उसीसे सलग्न एक प्याऊ लगवा दी और राहगीरो को पानी पिलाने की निर्लोभ सेवा करने लगे। पानी के साथ थकान दूर करने के लिये आश्रय और भगवान के प्रसाद के रूप में एक खोपरा (सूखे नारियल का गोला) प्रत्येक पथिक को देने की ईसरदासजी सेवा करने लगे। इस प्रकार ईसरदासजी वहा कई वर्ष तक पथिक सेवा करते रहे। एक दिन वहा के राजपूतो आदि ने निर्लोभ सेवा करने की बात को निरा ढोंग समझ कर रात के समय जब ईसरदासजी सो रहे थे, इनकी झोपडी में घुसकर खोपरो के थेलो को उठाकर ले आने की घृणित चेष्टा की। अदर जाकर वे खोपरों के बोरो को उठा लाये। प्रात काल होते ही उन्होने थेलो को खोला तो सभी में खोपरो की जगह उन्हें कडे मिले। उन्हे बडा आश्चय हुआ और भक्त के साथ दुव्यवहार करने के कारण पश्चाताप हुआ। इधर प्रात काल होते ही रात को विश्राम किये हुए पथिकगण जब जाने लगे तो ईसरदासजी उन्हें खोपरे बाँटने के लिये बोरों मे से खोपरे लेने गये, तो वहा बोरे ही नदारद। ईसरदासजी को उस समय बडा क्रोध आया और वे यह कहकर—

राजा गोला परजा गोली, सह गोलां रो साथ
नजरे मत देखाड़जे, राड़धरो थूं नाथ

वहां से रुष्ट होकर रवाना होगये। पथिकों ने झोपड़ी सूनी देखकर अपने हाथों से ही पानी खींच कर निकाला, परन्तु अब तो वह पानी इतना खारा होगया था कि प्राणी-मात्र के पीने योग्य नहीं रह गया था। अब सर्वत्र खलबली मच गई। अपराधी और अन्य बहुत से लोग इकट्ठे होकर भक्तराज का पता लगाकर उनके पास पहुँचे और अपनी भूल के लिये क्षमादान चाहते हुए वापिस लौटने की प्रार्थना की। भक्तराज ने कहा कि यहां मैं अब स्थाई तौर से तो नहीं रह सकूंगा। कुंएं के आस पास का अमुक क्षेत्र सदा के लिये गोचर-भूमि के लिये छोड़ दो। उसमें किसी का स्वामीत्व न रहे। उसमें से लकड़ी घास न काटा जाय और न उसमें खेती की जाय। इतना कर देने पर कुंएं का पानी मीठा हो जायेगा और उस पर प्याऊ का प्रबंध तुम्हें करना होगा। इस शर्त पर ईसरदासजी वापिस लौट आये और कुछ समय वहां रहकर अपने स्थान को चले गये[५]।

५- आलमजी और भक्तवर ईसरदासजी के संबंध में उपरोक्त सूचनाएँ श्री रामकरण गुप्त बी. कॉम., एल-एल. बी. एडवोकेट बालोतरा, श्री धीगड़मल रामचन्द्रजी जसोल (मालानी) और हमारे अनुज श्री जयनारायण साकरिया जोधपुर से हमें प्राप्त हुई है। अतः हम इनके बड़े आभारी हैं।

—सम्पादक

इंडज्ज [अंडज़] २६९

जीवों की उत्पत्ति के (अण्डज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज) चार भेदो मे से एक। पक्षी, साँप, मछली, छिपकली, गोह, गिरगट और बिसखपरा आदि जीव अण्डे से उत्पन्न होते हैं अत ये अण्डज कहलाते हैं।

उग्रसेन ४५

उग्रसेन यदुवशी राजा आहुक के पुत्र और कस के पिता थे। इनके नौ पुत्र तथा पाच कन्याएँ थी। सबसे ज्येष्ठ पुत्र कस ने अपने श्वसुर जरासध की सहायता से उग्रसेन को राज-च्युत कर कारागार मे डाल दिया और स्वय राजा बन बैठा। श्रीकृष्ण ने कस को मार कर उग्रसेन को पुन राजा बना दिया था।

उत्तरा ४६

यह राजा विराट की पुत्री और महारथी अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु की पत्नी थी। महाभारत के युद्ध में अभिमन्यु की मृत्यु के समय उत्तरा गर्भवती थी। युद्ध के अत मे अर्जुन ने अश्वत्थामा के सिर की मणि काट ली थी। अश्वत्थामा ने क्रुद्ध होकर अर्जुन का वश-लोप करने के लिये उत्तरा के गर्भ पर इषिकास्त्र का प्रयोग किया जिससे गर्भस्थ बालक परीक्षित मृतावस्था में उत्पन्न हुआ। श्रीकृष्ण ने सजीवनी मत्र के प्रभाव से परीक्षित को जीवित कर दिया। महाभारत के बाद परीक्षित चक्रवर्ती सम्राट् हुए।

अज्ञातवास के समय मत्स्य देशाधिपति विराट् के यहां बृहन्नला (बृहन्नटा) स्त्री के वेश में अर्जुन ने उत्तरा को गान और नृत्य सिखाया था । पांडव जब प्रकट हो गये तो विराट् ने उत्तरा को अर्जुन से ब्याह देने की इच्छा प्रकट की । किन्तु अर्जुन ने इसे स्वीकार नहीं किया और कहा कि मैंने इसे शिक्षा दी है, मेरे लिये तो यह पुत्री के समान है । तब विराट ने उसे अभिमन्यु के साथ ब्याह दी ।

उदभिज्ज [उद्भिज्ज] २६६

जीवों की उत्पत्ति के (अण्डज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज) चार भेदों में से एक । भूमि को भेदन कर निकलने वाले वृक्ष, लता, पौधे आदि उद्भिज्ज कहलाते हैं ।

ओंकार ८६, १८७

प्रार्थना, वैदिक-मंत्र, धार्मिक क्रिया तथा ग्रन्थ के प्रारम्भ में उच्चारण करने तथा लिखा जाने वाला 'अ', 'उ' और 'म्' इन तीनों अक्षरों से बना हुआ 'ॐ' शब्द । ये तीनों अक्षर ऋक, यजु और साम इन तीनों वेदों के सूचक हैं । उपनिषदों में इसे अध्यात्म शक्तिवान्, सर्व-श्रेष्ठ और मनन करने योग्य बताया है । 'ॐ' का 'अ' विष्णु, 'उ' शिव और 'म्' ब्रह्मा— इस प्रकार इन तीनों देवों की त्रिपुटी इस प्रणव-मंत्र में समावेश है ।

ओधव [उद्धव] २४७

उद्धव श्रीकृष्ण के सखा, परामर्शदाता और परम भक्त थे। ये सदैव श्रीकृष्ण के समागम मे ही रहते, अत दोनो मे अत्यन्त प्रेम था। श्रीकृष्ण गोकुल से मथुरा आगये तो नद यशोदा इनके वियोग से बहुत दुखी रहने लगे, उनको सान्त्वना देने और ज्ञान द्वारा वियोग कष्ट का समाधान करने के लिये उद्धव को भेजा था। वियोग से दुखी गोपियो को भी अपने स्वरुप का बोध कराने के लिये उन्हे ज्ञानोपदेश करने का भगवान् ने उद्धवजी को आदेश दिया था। परन्तु गोपियो की अनन्य भक्ति के कारण उनसे परास्त होकर, परमात्म-स्वरूप मे लीन रहने वाले उद्धवजी साकार ब्रह्म श्रीकृष्ण की भक्ति मे रग जाते हैं और उनकी अतुल प्रेमाभक्ति के शिष्य बन जाते हैं।

भगवान अब शीघ्र ही निजधाम पधारने वाले हैं, ऐसा सुनकर उद्धवजी ने श्रीकृष्ण से प्रार्थना की कि मुझे आप अपने साथ लेते पधारें। श्रीकृष्ण ने उद्धव मे अनन्य भक्ति और ज्ञानाधिकार देखकर आत्मतत्व और ब्रह्मज्ञान का उपदेश देकर इन्हे शान्ति दी और बदरिकाश्रम मे जाकर रहने का आदेश दिया।

भक्त-वाणी

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणा पादरेणुमभीक्ष्णश ।
यासा हरिकथोद्गीत पुनाति भुवनत्रयम् ॥

(श्रीमद्भागवत)

भक्तराज उद्धव कह रहे हैं—

नन्द बाबा के व्रज में रहने वाली गोपाङ्गनाओं की चरण-रज

को मैं वार-वार प्रणाम करता हूं, उसे सिर पर चढ़ाता हूं। अहा ! इन गोपियो ने भगवान् श्रीकृष्ण की लीला-कथा के संबंध मे जो कुछ गान किया है, वह तीनो लोकों को पवित्र कर रहा है और सर्वदा करता रहेगा।

कंस ६४

यह मथुरा के राजा उग्रसेन का क्षेत्रज तथा दानवराज दुर्मिल का वीर्यज पुत्र था। बडे होकर कंस ने मगधराज जरासंध की अस्ति तथा प्राप्ति नाम की दो कन्याओ से विवाह किया था। अपने पितृव्य की पुत्री देवकी का विवाह इन्होंने वसुदेव के साथ किया था। जब वसुदेव, देवकी से विवाह कर अपने घर जारहे थे तो आकाश-वाणी हुई कि देवकी के गर्भ से उत्पन्न होने वाला आठवां पुत्र तुम्हारा वध करेगा। कंस ने यह सुनकर वसुदेव-देवकी को कारागार में बंद कर दिया। इसके बाद देवकी की जितनी संतानें हुईं उन सभी को उसने मार डाला। आठवें गर्भ से भगवान् कृष्ण प्रकट हुए किन्तु वसुदेव उन्हें भगवान की माया से गोकुल में गोपराज नन्द के यहां रख आये। आगे बड़े होकर भगवान श्रीकृष्ण ने ही इसका वध किया।

कच्छ १२

भगवान् विष्णु का दूसरा अवतार। देवासुर संग्राम में जो वस्तुएं खो गई थी उनकी प्राप्ति के लिए समुद्र-मंथन का आयोजन हुआ तो मथनी बनाये गये मंदराचल पर्वत को क्षीर सागर मे धारण करने के लिए भगवान् विष्णु ने कच्छप का रूप धारण किया[1]।

१- सामुद्रिक शोध-विज्ञान का आविष्कार सर्व प्रथम भारत के आर्यों ने किया और उसका अनेक रूपकों से अलंकृत वर्णन भी भारतीय आर्ष-ग्रन्थो में पाया जाना माना जाता है।

कणाद २४३

षट्-दर्शन के अन्तर्गत वैशेषिक दर्शन के निर्माता कणाद एक प्रसिद्ध और प्राचीन ऋषियो में से हैं। दर्शन मे परमाणुवाद का प्रचार सर्व प्रथम इन्होने ही किया है।

कन्ह, कान्ह, किसन, क्रिसन, क्रिसन्न [कृष्ण] १३, २६, ४७, ६३, २१८, २५९, २६१, ३१६, ३४३

विश्व-धर्म के रूप मे कर्म और ज्ञान की महान् गूढ गुत्थियो को सुलझाकर एक मात्र ग्रन्थ श्रीमद्भगवद्गीता के रूप मे अपूर्व, अद्वितीय और सर्वोपरि ज्ञान को ससार के सम्मुख सर्व प्रथम प्रस्तुत करने वाले और अनेक अद्भुत लीलाओं के लीलावतार वसुदेव और देवकी के आठवें पुत्र भगवान् श्रीकृष्ण।

कौरव पाण्डवो के महाभारत युद्ध मे श्रीकृष्ण महारथी अर्जुन के सारथी बने और भीष्म, द्रोण और कर्ण आदि महारथियों के सम्मुख पाण्डवो की विजय के रूप मे अपूर्व राजनीति और कुशलता के साथ युद्ध का सम्पादन किया। प्रजा को अनेक-विध कष्ट पहुँचाने वाले अनेक राजाओं और दुष्टों का नाश करके ससार मे शान्ति स्थापित की। श्रीकृष्ण के ऐसे अनेक सुकृत्य और अद्भुत और अलौकिक कृत्य हैं जिनका भागवत आदि पुराण ग्रथों में विस्तार से वर्णन किया हुआ है।

राजस्थानी साहित्य मे भी भक्त-कवियो द्वारा रचे हुए 'नागदमण, गजमोख, किसनजी री वेल और क्रिसन रुकमणी री वेलि एव गीता की राजस्थानी टीकाएँ आदि अनेक उच्च कोटि के ग्रन्थ श्रीकृष्ण के सम्बन्ध मे प्राप्त हैं।

कपिल, कपिल्ल, कपिलेसर [कपिल, कपिलेश्वर]
१२, ६२, २४३

सांख्य-दर्शन का प्रवर्तक विष्णु का पांचवा अवतार। भगवान् विष्णु ने कर्दम मुनि की पत्नी देवहूती की तपस्या से प्रसन्न होकर उसकी इच्छानुसार स्वयं उसके गर्भ मे आकर अवतार लिया था।

आर्ष-वाणी

सर्वेद्यदि खलस्य श्रीः सैव लोक विनाशिनी।
यथा सखाग्नेः पवनः पन्नगस्य पयो यथा॥

(भगवान् कपिलदेव)

दुष्ट के पास लक्ष्मी हो तो वह लोक का नाश करने वाली ही होती है। जैसे वायु अग्नि की ज्वाला को बढाने मे सहायक होता है और दूध सांप के विष को बढ़ाने में कारण होता है, वैसे ही दुष्ट की लक्ष्मी उसकी दुष्टता को बढ़ा देती है।

करण्ण, करन्न [कर्ण] ८१, ३३८

यह कुन्ती के गर्भ से उत्पन्न सूर्य के पुत्र हैं। कुन्ती जब कंवारी थी, तब उसने ऋषि दुर्वासा द्वारा बताये गये मंत्र द्वारा सूर्य का आह्वान किया। फल स्वरूप धनुष, बाण, कुण्डल और कवच सहित कर्ण का जन्म हुआ। कुन्ती ने लोक-लाज के भय से इन्हें अश्व नदी में बहा दिया। धृतराष्ट्र के सूत अधिरथ ने उठाकर अपनी स्त्री राधा को पालन-पोषणार्थ सौंप दिया। इसीसे वह सूतपुत्र तथा राधेय कहलाये। कर्ण को शस्त्र-विद्या की शिक्षा द्रोणाचार्य ने दी थी,

किन्तु इनकी उत्पत्ति के विषय में सन्देह होने के कारण उन्होंने इन्हें ब्रह्मास्त्र का प्रयोग नहीं सिखाया था। तब ये भगवान् परशुराम के पास गये और अपने को ब्राह्मण बतलाकर शस्त्र-विद्या सीखने लगे। परन्तु परशुराम को ज्ञात होगया कि यह ब्राह्मण नहीं है तो उन्होंने शाप दे दिया कि "जिस समय तुम्हें इस विद्या की विशेष आवश्यकता होगी उसी समय तुम इसे भूल जाओगे।" इनकी दुर्योधन से बचपन ही मे विशेष मित्रता होगई थी। दुर्योधन ने इन्हें अंग देश का अधिपति बना दिया था। मत्स्य-वेध कर देने पर भी द्रौपदी ने सूतपुत्र होने के कारण इनके साथ व्याह करना अस्वीकार कर दिया। सूतपुत्र होने ही के कारण अर्जुन इन्हें हेय दृष्टि से देखते थे। भीष्म भी इसी कारण इन्हें सूत ही समझते थे।

कुन्ती के द्वारा अपने जन्म का वृतान्त जानकर तथा पाण्डव पक्ष मे आजाने की उसकी प्रार्थना को इन्होंने अस्वीकार कर दिया। इतना वचन दे दिया कि तुम्हारे पाचो पुत्र कायम रहेंगे। मेरा वैर अर्जुन से है अत हम दोनो मे से कोई जीवित रह सकेगा। भीष्म तथा द्रोण के अनन्तर कर्ण ही महाभारत युद्ध के सेनापति बने थे। तीन दिन युद्ध का सचालन करने के बाद अर्जुन के हाथो इनका वध हुआ। कर्ण दानियो मे सर्वाग्रणी कहे जाते हैं। कोई भी याचक उनसे जो कुछ भी मागता था, कर्ण उसे दे देता था। इन्द्र के याचना करने पर अपने शरीर से लगे कवच और कुण्डल तोड कर उन्हें दान में दे दिया था। तभी से इनका नाम कर्ण पडा। पहले इनका नाम वसुषेण था। एक बार भगवान् कृष्ण ने ब्राह्मण वेश में

कर्ण के पुत्र के मांस की याचना की। कर्ण ने प्रसन्नता से उनकी इच्छा पूर्ण की; परन्तु श्रीकृष्ण ने संजीवनी-मंत्र द्वारा उसे जीवित कर दिया। कर्ण महा-दानी था। नित्य प्रातःकाल एक प्रहर तक किसी भी याचक को मनवांछित दान देते रहने की अपनी प्रतिज्ञा अनेक कष्टों को सहते हुए भी दृढ़ता से निभाते रहने के कारण उस प्रातःकाल की एक पहर का नाम 'कर्ण की वेला' के नाम से प्रसिद्ध है। भगवान् श्रीकृष्ण कर्ण की दानशीलता और भक्ति से अत्यन्त प्रसन्न थे। इसीलिये इनका दाह-संस्कार भगवान् श्रीकृष्ण ने इन्हें अपने हाथों में रख कर किया था। प्रगाढ़ भक्ति और अद्वितीय दानशीलता के कारण पांचों पाडवों से भी अधिक भगवान् की कृपा और स्नेह को भक्त ईसरदासजी ने 'कर दागियो करण (३३८)' अपने उक्त छंद की एक अद्ध में प्रकट किया है।

करम, करम्म, क्रम, क्रम्म [कर्म] ४, ११, ५२, १२१, १५७, १७१, २२५, २६२, ३००, ३०३, ३०५, ३०६, ३०८, ३०९, ३११, ३२०

१- शुभ अथवा अशुभ क्रिया से उत्पन्न अदृष्ट। शुभाशुभ सूचक कर्म-जन्य अदृष्ट।

पूर्व जन्मों के कर्मों द्वारा संचित पुण्य-पाप जो इस जन्म के सुख-दुख के कारण माने जाते हैं। संचित-कर्म।

२- शुभ अथवा अशुभ अदृष्ट को उत्पन्न करने वाला व्यापार। यह व्यापार— नित्य, नैमित्तिक, काम्य, प्रायश्चित और निषिद्ध पांच प्रकार का होता है और इसी कारण कर्म के भी ये ही पांच प्रकार कहे गये है।

कर्म प्रधान विश्व करि राखा,
जो जस करहि सो तस फल चाखा।
(गो० तुलसीदासजी)

कलकी, कळंकी [कल्कि] १३, ७१

कलियुग और उसके अत्याचारियों को नाश करके सतयुग का पुन आरम्भ करने के लिये भविष्य मे होने वाला भगवान् विष्णु का चौबीसवा अवतार ।

कल्प १३३

वेद के प्रधान छ अगो में से एक जिसमें यज्ञो, सस्कारो आदि धार्मिक कर्तव्यो की विधिया बताई गई हैं । यज्ञ मे काम आनेवाले पात्रो को बनाने की विधियो का भी इसमे विधान है । श्रौत, आश्व लायन कात्यायन, आपस्तब और गृह्यसूत्र आदि इसीके अन्तर्गत हैं । यह यजुर्वेद का श्राद्धकल्पात्मक परिशिष्ट भाग है ।

कागभुसड [काकभुशुंडि] १४८

भगवान् राम के बालरूप के एक अनन्य भक्त जो कौवे के रूप में रहते हैं । ये अमर हैं । पूर्व जन्म के ये ब्राह्मण थे, परन्तु लोमश ऋषि के शाप से कौवे की योनि प्राप्त हुई । ये प्रकाण्ड ज्ञानी हैं ।

भक्त-वाणी

पर उपकार बचन मन काया सत सुभाउ सहज खगराया ।
सत सहहिं दुख परहित लागी, परदुख हेतु असत अभागी ।
संत उदय सतत सुखकारी, विस्व सुखद जिमि इदु तमारी ।
परम धर्म श्रुति विदित अहिंसा, परनिंदा सम अघ न गरीसा ,
(काकभुशुण्डि • रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड)

कार्तिकसांम [कार्त्तिकस्वामि] २३८

स्वामिकार्तिक महादेव के एक पुत्र है। छः कृतिकाओं से उत्पन्न होने के कारण इनका नाम कार्तिकेय प्रसिद्ध हुआ। इनके छ मुख और बारह हाथ होने के कारण इन्हें षण्मुख और षडानन भी कहते हैं। स्कन्द, गांगेय और अग्निभू भी इनके नाम है। ये देव-सेनापति है। इन्होंने तारकासुर का वध किया था।

काळजवन्न [कालयवन] ४७

यह महर्षि गार्ग्य का पुत्र था। बाल्यावस्था में अपुत्रक यवन-राज ने इसका पालन किया था। उसके मरने पर यही उसका अधिकारी हुआ था। यह बहुत ही शीघ्र पराक्रमी राजाओं में गिना जाने लगा। जरासंध के साथ मिलकर इसने मथुरा पर चढाई की। इससे यादव घबरा गये और श्रीकृष्ण की सलाह से मथुरा छोड़कर द्वारका चले गये। श्रीकृष्ण और कालयवन से युद्ध होने लगा। श्रीकृष्ण युद्ध क्षेत्र से भागकर हिमालय की गुहा में जहां मान्धाता का पुत्र मुचुकुन्द सोया हुआ था, चले गये और चुपचाप उसके ऊपर अपना पीतांबर डालकर उसकी खाट के नीचे छिप गये। कालयवन भी उनके पीछे २ वहां पहुँचा। उसने निद्रित मुचुकुन्द को श्रीकृष्ण समझा और पैर से ठोकर मारकर उठाने लगा। मुचुकुन्द उठा और ज्योंही उसने कालयवन की ओर दृष्टि की त्योंही वह भस्म हो गया।

कासप [कश्यप] ३४५

विख्यात प्रजापति महर्षि कश्यप ब्रह्मा के पौत्र और मरीचि के मानस पुत्र थे। ये सप्तर्षियों में से एक हैं।

आर्ष-वाणी

पुण्यस्य लोको मधुमान्घृतार्चि-
हिरण्यज्योतिरमृतस्य नाभिः ।
तत्र प्रेत्य मोदते ब्रह्मचारी
न तत्र मृत्युर्न जरा नोत दुःखम् ॥

(महाभारत, शान्तिपर्व अ० ७३)

पुण्यात्माओं को प्राप्त होने वाला लोक मधुर सुख की खान और अमृत (मोक्ष) का केन्द्र होता है। वहां नित्य घृत के दीपक प्रकाश कर रहे हैं। उसमें सुवर्ण के समान प्रकाश फैला रहता है। वहां न तो वृद्धावस्था का प्रवेश है और न मृत्यु का। वहां किसी को किसी प्रकार का दुःख नहीं होता। ब्रह्मचारी लोग मृत्यु के पश्चात् ऐसे ही लोकों में जाकर आनन्द को प्राप्त होते हैं।

किकेई [कैकेयी] ३७

कैकेयी महाराज कैकय की पुत्री तथा महाराज दशरथ की तृतीय रानी थी। यह अपने समय की अद्वितीय सुन्दरी थी। इन्हीं के गर्भ से भरत की उत्पत्ति हुई थी। एक बार देवासुर संग्राम में आहत हुए महाराज दशरथ की इन्होंने बड़ी सेवा-सुश्रूषा की थी, जिससे प्रसन्न होकर महाराज ने इन्हें दो वरदान देने का वचन दिया था। राम का

राज्याभिषेक का अवसर निकट आने पर इन्होंने अपनी मंथरा नामक दासी के बहकावे मे आकर राम के लिए चौदह वर्ष का वनवास और भरत के लिए अयोध्या का राज्य, ये दोनों वरदान रूप में मांग-लिये। पिता के वचनों का पालन करने के लिये राम वन को चले गये। दशरथ ने उनके वियोग मे प्राण त्याग दिये। भरत ने राज्य अंगीकार नहीं किया। कैकेयी को सभी प्रकार कुफल मिला।

कीट कीटभ [कैटभ] २०, ८७

मधु नामक दैत्य का भाई कैटभ। भगवान् विष्णु ने जब इन्हें मारा तो इनके शरीर के मेद से संपूर्ण पृथ्वी भर गई। तभी से पृथ्वी का नाम मेदिनी पड़ा।

कुंभ, कुंभेरा [कुम्भकर्ण] ४२,८०

विशालकाय कुंभकर्ण रावण का छोटा भाई था। उत्पन्न होते ही यह हजारों लोगों को खा गया। लोगों का हाहाकार सुनकर इन्द्र ने इस पर वज्र चलाया, किन्तु इसने घोर गर्जना करके ऐरावत का ही दांत उखाड़ दिया और उसको इन्द्र के ऊपर दे मारा। देवता और लोगो की प्रार्थना पर ब्रह्माजी ने शाप दे दिया कि यह सदा सोता ही रहे किन्तु रावण के प्रार्थना करने पर ब्रह्माजी ने यह कृपा की कि छः महीनो में एक दिन के लिये नीद उड़ जायगी। राम-रावण युद्ध के समय इसको जगाने के लिये इसके गले में बंधी रस्सी को एक हजार हाथियो से खिचवाना पड़ा था एवं कर्णरंध्र और नासारंध्रों में पानी के नाले बहाये गये थे। जगने पर जब इसे मालूम हुआ कि रावण

ने सीता का हरण किया है तो इसे बडा क्षोभ हुआ और रावण को फटकारा तथा सीता को वापिस लौटा देने का आग्रह किया। किन्तु रावण की दलीलो ने इसे युद्ध के लिये उत्तेजित कर दिया। इसने बडा भयकर युद्ध किया। अत मे श्रीराम के हाथो से इसका वध हुआ।

कुंभज २४३

अगस्त्य ऋषि का ही दूसरा नाम कुंभज है। ये ऋग्वेद की कई ऋचाओ के रचियता हैं। जन्म के समय अगूठे के बराबर लम्बे थे। देवासुर सग्राम के समय जब दानव सागर मे जाकर छिप गये, तो ये सागर को ही पी गये। वनवास के समय राम अगस्त्य आश्रम मे गये थे। मुनिने राम को धनुष बाण आदि शस्त्र दिये थे।

आर्ष-वाणी

सत्य तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रह ।
सर्वभूत दया तीर्थं तीर्थमार्जवमेव च ॥
दान तीर्थं दमस्तीर्थं सतोषस्तीर्थमुच्यते।
ब्रह्मचर्यं पर तीर्थं तीर्थं च प्रियवादिता ॥
ज्ञान तीर्थं धृतिस्तीर्थं तपस्तीर्थमुदाहृतम् ।
तीर्थानामपि तत्तीर्थं विशुद्धिर्मनस परा ॥

— (महर्षि अगस्त्य : स्कन्दपुराण)

कुबज्जा [कुब्जा] २५४

कस की माल्यानुलेपन-वाहिनी एक दासी। श्री कृष्ण और बलराम अक्रूर के साथ कस के यहाँ यज्ञ में आमन्त्रित होकर मथुरा आये, जब

कुब्जा को इन्होंने मार्ग में देखा जो कंस के यहां सुगन्ध-अनुलेपन ले जा रही थी। श्रीकृष्ण ने कुब्जा से अनुलेपन मांगा। कुब्जा ने बड़ी प्रसन्नता से उन्हें अनुलेपन दिया। श्री कृष्ण ने प्रसन्न होकर उसका कुबड़ापन दूर करके उसको एक सुन्दर युवती बना दिया। इसे कुबड़ी भी कहा जाता है।

कुरखेत कुरछेत [कुरुक्षेत्र] ४६, ३४९

एक अति प्राचीन तीर्थ। कुरु ने इस स्थान को सबसे पहले आविष्कृत किया था और इसी स्थान पर यज्ञ करके इसकी उन्नति की थी। कुरुक्षेत्र की सीमा के विषय में महाभारत में लिखा है कि दृषद्वती नदी के उत्तर और सरस्वती के दक्षिण मे कुरुक्षेत्र है। इस तीर्थ का परिमाण बारह योजन है। इसमे ३६५ तीर्थ विद्यमान हैं। महाभारत का युद्ध यहीं हुआ था। यह अम्बाला और दिल्ली के बीच में स्थित है। महाभारत में तरंतुक से अरंतुक और रामह्रद से मचक्रुक इनके बीच में आये हुए प्रदेश को कुरुक्षेत्र कहा गया है।

केदार ३४९

हिमालय में स्थित हिन्दुओं का एक पवित्र और प्राचीन तीर्थ स्थान। यहां भगवान शंकर का लिंगस्वरूप स्थापित है, जो द्वादश ज्योर्तिलिंगों में से एक है। केदारनाथ तीर्थ सागर सतह से ११७७३ फीट ऊंची हिमालय की चोटी पर स्थित है। केदारनाथ पर्वत का सर्वोपरि दुर्गम भाग 'महापथ' तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है। यह सदा बर्फ से ढका रहता है। वैशाख से कार्तिक मास तक भारत के सभी भागों से अनेकों यात्री केदारनाथ के दर्शनों को आते हैं।

केसि [केसी] ७३

यह एक राक्षस था। कस की आज्ञा से यह एक घोडे का रूप धारण करके श्रीकृष्ण भगवान् का वध करने के लिए वृन्दावन गया परन्तु वहा वह भगवान् द्वारा मारा डाला गया।

कोयलाराणी [कोकिलारोहिणी] २

'कोयलाराणी' कोकिलारोहिणी का विकृत लोक-शब्द है। कोइलागणी और कोहलागणी पाठ भी कई प्रतियो में मिलता है। सौराष्ट्र मे राजकोट से द्वारका जाने वाली पश्चिम रेलवे लाइन पर भाटिया स्टेशन मे २१ मील पर 'श्री हर्षदमाता का एक प्राचीन मदिर कोयल नामक मनोहर पहाडी पर बना हुआ है। पहाडी के नीचे तक समुद्र की एक पतली शाखा आ जाने से इसकी रमणीयता और भी बट गई है। इस स्थान की एक बहुत प्रसिद्ध पौराणिक कथा है कि शखासुर नामक दैत्य के वध के निमित्त भगवान श्रीकृष्ण ने अपनी कुलदेवी महाशक्ति जगदम्बा से सहायता की प्रार्थना की। महाशक्ति ने कोयल के रूप में उनके शस्त्र पर बैठकर साथ मे चलने का वचन दिया। महामाया की कृपा से समस्त यादवी-सेना बिना किसी नौका इत्यादि की सहायता के समुद्र को पार करती हुई इस स्थान पर आ पहुची। स्थान की रमणीयता पर मुग्ध होकर भगवान् श्रीकृष्ण ने पर्वत शिखर पर महाशक्ति का एक सुदर मदिर निर्माण करवाया और अपनी आराधना के लिये महामाया की एक भव्य मूर्ति स्थापित की।

भगवती महामाया ने कोयल का रूप धारण किया था अतः पहाडी का नाम 'कोयल' और भगवान् के काम को सिद्ध कर देने के कारण देवी का नाम 'हरिसिद्धि' प्रसिद्ध हुआ। कालान्तर में हरिसिद्धि का 'हर्षद' और फिर कोयल पर्वत पर अवस्थित होने के कारण कोयलारानी (कोयलारांणी) के नाम से प्रसिद्ध हो गया। यह स्थान सिद्ध-पीठ माना जाता है। श्री मद्भागवत मे एक कथा है जिसमें लक्ष्मी का वाहन कोयल भी लिखा है।

महामाया आदिशक्ति के उपासक 'कोहल' नाम के एक प्रख्यात ऋषि भी हुए है, जिन्होंने सोमेश्वर से संगीत शास्त्र का अध्ययन किया था। कहा जाता है कि इन्होंने अपनी संगीत विद्या से भगवती को प्रसन्न करके वरदान प्राप्त किया था। ऋषि की अनन्य उपासना के कारण देवी का नाम कोहल रानी के नामसे प्रसिद्ध होगया।

एक दूसरा स्थान जिला इन्दौर के भानुपुरा परगने मे भानुपुरा से छः मील दूर 'कोहला' ग्राम प्राचीन अवशेषों के लिये प्रसिद्ध है। कोहला मे अनेक प्राचीन बड़े-बडे और सुन्दर मन्दिर बने हुए हैं, जिनमे कई देवी मन्दिर भी कहे जाते हैं। ऐसा सुना गया है कि कोहला-रानी नाम के प्रसिद्ध मन्दिर के कारण गांव का नाम भी 'कोहला' प्रसिद्ध हुआ। डा० ही. गो. ओझा के 'भारतीय अनुशीलन' नामक ग्रन्थ में और प्रोग्रेस रिपोर्ट ऑफ दी आ. स. मध्य भारत, १६२० में इस स्थान का उल्लेख हुआ है।

हरिरस की अनेक हस्तलिखित प्रतियों में 'कोहलारांणी' पाठ भी मिलता है। संभव है वह कोहल ऋषि अथवा कोहला ग्राम से

सबधित हो। पर हमारी अपनी मान्यता अनुसार शुद्ध पाठ 'कोयला-राणी' है और वह सोराष्ट्र के कोयल पवत से ही सबधित है। सोराष्ट्र, गुजरात, कच्छ और राजस्थान के पश्चिम और दक्षिणी प्रदेशों मे अब भी इस देवी की बहुत मान्यता है। भक्तवर ईशरदासजी की आयु का अधिक काल सोराष्ट्र मे ही बीता है और उन्होने इसी देवी की आराधना मे यह छद कहा है।

पीरदान लालस कृत 'हिंगळाज रासो' मे—

"कोयलागिर काया घघ घमाया, मघ कीटग तैं मारायां।"

इसी देवी की आराधना मे आयो है।

इसी देवी के महिमा-परक प्राचीन पदो मे 'माताजी री चरचा' नामक यह पद भी बहुत प्रसिद्ध है—

फोइलो परबत घू घळो रे लोय
जठै रमै,सुरा री राय रे, जाग्रोडा
ऊपर भव गाजियो रे लोय
बरसण थी म्हारी राय रे, जायोडा।

कोरम [कूर्म] ३११

दे० 'कच्छ'

कौरव ९६

चन्द्रवशी राजा कुरु के वशज घृतराष्ट्र के एक सौ पुत्र कौरव नाम से प्रसिद्ध हुए। पाडवो और कौरवो के महाभारत युद्ध में भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन के रथ के सारथी बने थे। भगवान् श्री कृष्ण के परामर्शानुसार युद्ध करके कौरवों के ऊपर पाडवों ने विजय प्राप्त की थी।

खर दूख [खर, दूषण] ३८

खर और दूषण दोनों भाई थे। रावण का राज्य गोदावरी तीरस्थ दण्डकारण्य तक विस्तृत था। राज्य के प्रान्त भाग की रक्षा करने के लिए खर और दूषण १४ हजार सेना लेकर दण्डकारण्य में रहा करते थे। शूर्पनखा की नाक लक्ष्मण द्वारा काट लिए जाने पर खर और दूषण ने राम पर आक्रमण किया। इस युद्ध में ये दोनों भाई श्रीराम द्वारा मारे गये।

गंगा १६०

भारत की एक अति पुण्यसलिला प्रसिद्ध नदी। प्राचीन काल से ही ऋषियों ने इस नदी की महिमा गायी है। ऋग्वेद मे भी इसका उल्लेख मिलता है। इसकी उत्पत्ति युगानुसार पुराणों में अनेक प्रकार से वर्णित है। भगीरथ द्वारा लाई जाने के कारण भागीरथी, राजर्षि जन्हु द्वारा पी जाने के कारण जाह्नवी और विष्णु के चरणों से निःसृत होने के कारण त्रिपथगा आदि गंगा के अनेक नाम है। हरिद्वार मे 'हरि की पैड़ी' पर गंगा में स्नान करने का महान् पुण्य शास्त्रों ने वर्णित है। दीर्घ काल तक संगृहीत गंगा-जल में जीवोत्पत्ति होकर कोई विकार उत्पन्न नहीं होता।

गंगेव [गांगेय] ४६

सोमवंशी पुरुकुलोत्पन्न महाराज शान्तनु के देवव्रत नामक पुत्र। गंगा से उत्पन्न होने के कारण इन्हें गांगेय भी कहा जाता है। इनके पिता ने सत्यवती नामक धीवर द्वारा पोषित कन्या से विवाह करने की इच्छा प्रगट की। धीवर ने इस शर्त पर विवाह करना

स्वीकार किया कि सत्यवती के गर्भ से उत्पन्न पुत्र ही राज्याधिकारी हो। पिता की इच्छापूर्ति के लिये आजन्म राज्य का त्याग और राज्य पर अधिकार करने वाली उनके कोई सन्तान नहीं हो अतः आजन्म ब्रह्मचारी रहने की भीषण प्रतिज्ञा की। इससे इनका नाम भीष्म बहु-प्रख्यात हुआ।

भीष्म महापराक्रमी, महारथी, महा विद्वान् और सत्यवक्ता थे।

भीष्म द्वारा भीषण शस्त्राग्नि वर्षा से पाण्डव-सेना का अपार संहार होगया। भीष्म के होते हुए विजय प्राप्त करना असम्भव जानकर रात को गुप्त रूप से श्री कृष्ण युधिष्ठिर को साथ लेकर भीष्म से यह पूछने गये कि उनकी मृत्यु रणक्षेत्र में किस प्रकार हो सकती है। शास्त्र और शस्त्र विद्या में, सत्यवक्ताओं में और आयु इत्यादि बातों में कौरव-पाण्डव दोनों पक्षों में वृद्ध और पितामह होने के कारण इन्होंने जाकर इनके चरणों में प्रणाम किया और अपनी दुःख-गाथा सुनाई। भीष्म-पितामह ने अपनी मृत्यु का जो कारण बतलाया, वह जगत् प्रसिद्ध है। दूसरे ही दिन अर्जुन ने शिखण्डी रूप स्त्री को महारथी बनाकर उसकी ओट में बाणों की वर्षा करके भीष्मपितामह को धराशायी कर दिया। भीष्म सत्य वक्ता, अखण्ड ब्रह्मचारी और परमात्मनिष्ठ थे अतः इन्हें इच्छा-मृत्यु का वरदान प्राप्त था। सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायन में आने तक अप्रतिम वीरोचित कर्तव्य का पालन करते हुए इन्होंने उर्ध्व बाणों की शय्या पर शयन किया और तब तक अपने प्राणों का विसर्जन नहीं होने दिया।

अर्जुन के बाणों से आहत शरशय्या पर सोते हुए भीष्म पितामह के पास उपदेश श्रवण करने के लिये अनेकों महर्षि, राजर्षि और ब्रह्मर्षियों का समाज इकट्ठा होगया था। कृष्ण के अनेक-विध समझाने पर भी युद्ध में कुल-हत्या के सम्बन्ध में युधिष्ठिर को शान्ति नहीं मिल सकी, तब श्रीकृष्ण उन्हे भीष्मपितामह के पास लेकर आये। भीष्मपितामह के जिस उपदेश द्वारा युधिष्ठिर को शान्ति प्राप्त हुई वह महाभारत में अनुशासन-पर्व और शान्ति-पर्व के नामों से प्रसिद्ध है।

भीष्म-वाणी

नास्ति सत्यात् परो धर्मो नानृतात् पातकं परम् ।
स्थितिर्हि सत्यं धर्मस्य तस्मात् सत्यं न लोपयेत् ॥

(शान्तिपर्व १६२ । २४)

सत्य से बढकर दूसरा कोई धर्म नही और असत्य से बढकर कोई पाप नहीं। सत्य ही धर्म का आधार है, अतः सत्य का लोप कभी नहीं होने दें।

गजराज २९

पाण्ड्य देश का अधिपति इन्द्रद्युम्न अगस्त्य ऋषि के शाप से गज-योनि को प्राप्त हो गया था। चौथे तामस मन्वन्तर में भगवान विष्णु ने हरि अवतार धारण करके गजेन्द्र और ग्राह दोनों का उद्धार किया था। गज पानी में क्रीड़ा कर रहा था। ग्राह ने उसका पांव पकड़ लिया और लगा पानी में खींचने। इसने भी बहुत बल

लगाया, किंतु अंत मे हार जाने पर श्री हरि का सुमिरण किया। हरि ने प्रगट होकर ग्राह से गज को छुड़ाकर पशुयोनि मे उसकी मुक्ति की।

तत्रापि जज्ञे भगवान् हरिण्यां हरिमेधस
हरिरित्याहृतो येन गजेन्द्रो मोचितो ग्रहात् ॥
(भागवत स्क० ८)

गणेस [गणेश] २३७

भगवान् शिव के गणो के अधिपति होने के कारण इन्हें गणेश कहा जाता है। इनके जन्म के समय अन्य देवताओ के साथ शनि भी देखने आये थे। शनि के देखते ही गणेश का सिर धड़ से अलग होगया। विष्णु के कहने से इन्द्र के एक हाथी का सिर काट कर गणेश को लगा दिया गया। तब से यह गजानन भी कहलाने लगे। हस्ति-मुख देख कर कोई इनका तिरस्कार न करे, सभी देवताओ ने उस समय यह प्रतिज्ञा की कि बिना गणेश की पूजा किये हम लोग किसी की पूजा ग्रहण नही करेंगे। तभी से गणेश की पूजा प्रथम की जाती है। यह भी एक कथा है कि एक बार देवताओ में सबसे प्रथम पूजनीय देवता कौन है का, विवाद उपस्थित हुआ, तब निर्णय हुआ कि जो पृथ्वी की परिक्रमा पहले कर आयेगा वही प्रथम पूजनीय समझा जायेगा। गणेश ने सर्वव्यापी 'राम' के नाम को लिख कर उसकी परिक्रमा कर डाली, जिससे देवताओ मे सर्व प्रथम इन्हीं की पूजा होती है।

गया ३४६

हिन्दुओ का एक पवित्र और प्राचीन तीर्थ-स्थान। चन्द्रवंशी अमूर्तरजस के पुत्र राजर्षि गय ने यहा के गय शिखर पर्वत पर ब्रह्मसर नाम का बडा तालाब बनवाकर एक बृहत् यज्ञ करके अपार अन्न और धन दक्षिणा मे दिया था; इसी कारण इस क्षेत्र का नाम गया पडा। गया फल्गु नदी के किनारे पर बसा हुआ है। फल्गु तीर्थ, नाग-कूट, गृध्र कूट, पाण्डु-शिला, धर्म-शिला स्वर्ग-द्वार आदि यहा अनेक तीर्थ विद्यमान है। यहां पर श्राद्ध और पिंडदान आदि करने का महात्म्य हैं। गया मे पिंडदान किये बिना पितरो की मुक्ति नहीं होती। इसे पितृ-गया भी कहते है।

वायु-पुराण मे लिखा है कि विष्णु का परम भक्त और धार्मिक गय नाम का एक विशालकाय असुर कोलाहल नामक पर्वत पर कठोर तपस्या करता था। विष्णु आदि सभी देवताओ से निरंतर उस पर्वत पर स्थिर रहने का वरदान प्राप्त कर गय वहां निश्चल हो गया। इसीसे इस क्षेत्र का नाम गया होगया। सभी देवताओ का निवास होने के कारण यह परम पावन तीर्थ-क्षेत्र बन गया।

गरुड़ २४५

गरुड पक्षियों के राजा और भगवान विष्णु के भक्त और वाहन माने जाते हैं। ये विनता के गर्भ से उत्पन्न कश्यप के पुत्र हैं।

कश्यपजी ने एक बार पुत्र-प्राप्ति के लिये यज्ञ का अनुष्ठान किया था। इंद्र, वालखिल्य आदि देवता और ऋषिगण समिधा

आदि यज्ञ सामग्री इकट्ठी करने लगे। अंगुष्ठ भर के वालखिल्य ऋषियों को पलाश की एक छोटी-सी टहनी घसीटते देख कर इन्द्र को हँसी आगई। वालखिल्यगण कुपित होगये और कश्यप का पुत्र दूसरा इन्द्र उत्पन्न करने लगे। पर कश्यप ने उन्हें समझा कर शान्त कर दिया और कहा कि तुम जिसे उत्पन्न करना चाहते हो, वह तो पक्षियो का इन्द्र होगा। अंत में विनता के गर्भ से कश्यप ने अग्नि और सूर्य के समान गरुड और अरुण दो पुत्र उत्पन्न किये। गरुड विष्णु के वाहन हुए और अरुण सूर्य के सारथी।

गर्ग २४३

इस नाम के कई ऋषि हुए हैं।

१- आंगिरस भारद्वाज के वंशज गर्ग ऋषि एक वैदिक ऋषि हैं। ऋग्वेद के छठे मंडल का सूक्त इनका रचा हुआ है।

२- अथर्व वेद के परिशिष्ट के अनुसार गर्ग नाम के एक बहुत बडे ज्योतिषी होगये हैं। गर्ग-संहिता नामक प्रसिद्ध ज्योतिष ग्रंथ इन्ही का निर्मित है। ज्योतिष के यह सबसे पुराने आचार्य कहे जाते हैं। भागवत में लिखा है कि बलराम और श्रीकृष्ण का नामकरण इन्ही ने किया था।

३- ब्रह्मा के एक मानस पुत्र जिनकी सृष्टि गया में यज्ञ करने के लिये की गई थी।

गळकासिला [गंडकीशिला] ११४

गडकी नदी मे प्राप्त होने वाले छोटे-छोटे श्याम वर्ण गोल शिलाखड जो सालिग्राम की मूर्ति रूप माने जाते हैं। गोमती नदी मे से प्राप्त शिलाखडो का भी ऐसा ही महत्व है।

गवरि [गौरी] १६१

भगवान् शंकर की अर्द्धांगिनी पार्वती पहले श्याम वर्ण थी। एक दिन भगवान् शंकर ने उन्हे हँसी में 'काली' कह दिया जिस पर पार्वती ने तप करके गौर वर्ण प्राप्त किया, तभी से पार्वती का गौरी नाम भी प्रसिद्ध होगया।

गायत्री १६१

१- त्रिकाल-संध्या-वन्दनादि ईश्वर-प्रार्थना का एक प्रसिद्ध त्रिपदात्मक वेद-मंत्र। गायत्री को वेदमाता भी कहा है। यह मंत्र सबसे अधिक पुनीत है। त्रिवर्ण के लिये इसका जप प्रतिदिन करना अनिवार्य माना गया है। यज्ञोपवीत धारण करते समय वेदारम्भ संस्कार करते हुए आचार्य सर्व प्रथम इस मंत्र का उपदेश ब्रह्मचारी को करते हैं। इस मंत्र के अकार, उकार और मकार (ॐ) -ये तीनों वर्ण, भूः, भुवः और स्वः- तीनों व्याहृतियां और सावित्री मंत्र के तीनों पद- ऋक्, यजु और साम-तीनों वेदों से यथाक्रम निःसृत है। ओमृकार और व्याहृतियों सहित गायत्री मंत्र इस प्रकार है-

ॐ भूः भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं।
भर्गो देवस्य धी महि।
धियो यो नः प्रचोदयात्।

२- गायत्री, सावित्री और सरस्वती- इन नामों से पहिचानी जानेवाली ब्रह्मा की ज्ञान-शक्ति।

गायत्री ब्रह्मा की स्त्री मानी जाती है। वषट्कार देवताओं की उत्पत्ति इसीसे हुई है।

ब्रह्मा की इन ज्ञान-शक्तियों की रूपक कथा बड़ी विचित्र और मनोरंजनपूर्ण होने के साथ वैज्ञानिक और ज्ञानपूर्ण है।

गुह ३८

शृंगवेरपुर के अधिपति निषादराज गुह महाराज दशरथ के परम मित्र और श्री राम के अनन्य भक्त थे।

भगवान् श्रीराम के वनवास के समय इन्होंने श्रीराम, सीता और लक्ष्मण को नाव में बिठाकर गंगा के पार उतारा था। गंगा के पार करने के पूर्व गुहराज ने भगवान् राम के चरणों को धोकर चरणोदक पान किया था। इस प्रेमानुरोध को स्वीकार कर लेने पर ही उन्हें अपनी नाव में बैठने दिया था।

श्रीराम के चित्रकूट में निवास के समय अयोध्या की प्रजा सहित भरत जब राम को वापिस अयोध्या लौटा लाने के लिये आ रहे थे, तब इनको यह भ्रम होगया कि राज्य-शक्ति के प्राप्त हो जाने के कारण भरत भगवान् राम पर अपार सेना के साथ चढ़कर आ रहे हैं। भरत को वहीं रोककर यह उनसे युद्ध करने को तैयार हो गये। पर जब इन्हें यह मालूम हो गया कि भरत इस आशय से नहीं आरहे हैं, तो उन्हें भी अयोध्या की प्रजा के साथ गंगा के पार उतार कर श्रीराम के पास पहुँचा आये।

अयोध्या को त्रसित करने वाले दुर्मिदा राक्षस का वध गुहराज ने ही किया था।

भक्त-वाणी

पद पखारि जलु पान करि, आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभु हि पुनि, मुदित गयउ लइ पार॥

कहेउ कृपालु लेहि उतराई, केवट चरन गहे अकुलाई।
नाथ आजु मैं काह न पावा, मिटे दोप दुख दारिद दावा।
बहुत काल मै कीन्हि मजूरी, आजु दीन्हि विधि वनि भलि भूरि॥

(मानस : अयोध्याकाण्ड)

गोरक्ख, गोरख ६१,३५३

प्रख्यात सिद्ध योगी मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गोरखनाथ भी नाथ सम्प्रदाय के संस्थापक और प्रवर्तक एक महान योगी और सिद्ध पुरुष थे। गोरखनाथ ज्ञानाश्रयी शाखा के जन्मदाता माने जाते हैं। इस सम्प्रदाय मे जाति-पाँति का कोई विचार नहीं होता, इसीलिये इस सम्प्रदाय को मानवधर्म सम्प्रदाय भी कहते हैं। विश्वविख्यात अद्वैतमत के प्रवर्तक अद्वितीय संन्यासी शंकराचार्य के बाद गोरखनाथ ही एक ऐसे महिमावान योगी पुरुष उत्पन्न हुए हैं, जिनका मत सारे भारतवर्ष में फैला हुआ है। गोरखपुर गोरक्षनाथ-महादेव का मन्दिर इस सम्प्रदाय का प्रधान मठ माना जाता है।

गौतम २४२

वर्तमान मन्वन्तर के सप्त-ऋषियो में से एक ऋषि। अहल्या इनकी पत्नी और शतानन्द ऋषि इनके पुत्र थे। देखो' अहल्या'

आप्त-वाणी

असंतोषः परं दुःखं सन्तोषः परमं सुखम् ।
सुखार्थी पुरुषस्तस्मात् संतुष्टः सततं भवेत् ॥
(पद्म सृष्टिखण्ड)

छ-शास्त्र, [षट्-शास्त्र] १५१ (खट-भाख = षट्-भाषा)
२४२

सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदान्त, इन्हें छ दर्शन या छः शास्त्र कहते हैं।

१- सांख्य दर्शन के आद्य-संस्थापक महर्षि भगवान् कपिलाचार्य हैं। शास्त्र में तत्त्वों की संख्या बताई गई है। इस दर्शन के अनुसार पुरुष और प्रकृति इन दो वर्गों में मूल तत्त्व विभाजित होते हैं। पुरुष चेतन पदार्थ और प्रकृति जड़ पदार्थ, किन्तु क्रियाशक्ति वाली और द्रव्य माना है।

२- योग दर्शन के आदि-प्रणेता पतंजलि हैं। सांख्य की विचार-धारा को चित्त के निरोध द्वारा अनुभव में लाने के लिये इस शास्त्र का निर्माण किया गया है। नित्य-सिद्ध और नित्य-मुक्त पुरुष (ईश्वर) के स्वरूप का ध्यान करके कैवल्य-मोक्ष प्राप्त करने की पद्धति इस शास्त्र में बताई गई है। दे पातंजल

३- न्याय-दर्शन के प्रणेता महर्षि गौतम हैं। इसमें जगत् के तत्त्वों का सोलह पदार्थों में समास किया गया है। और तर्क के द्वारा वस्तु निर्णय करने का प्रमाणशास्त्र इसके अन्तर्गत करने में आया है।

४- मीमांसा–दर्शन, जिसे पूर्व मीमांसा भी कहते हैं। इसके सूत्रकार महर्षि जैमिनि हैं। वेद के कर्मकाण्ड के मन्त्रों और ब्राह्मण ग्रन्थों के अर्थों का निर्णय न्यायानुसार किस रीति से किया जाय, वेद का प्रामाण्य किस प्रकार का है और तर्क का स्थान कितने अंगों में है इत्यादि यज्ञ और वैदिक कर्मों से सम्बन्धित विद्याओं का समावेश इस शास्त्र में किया गया हैं। दे. जमन्न

५- वेदान्त-दर्शन, जिसे उत्तर-मीमांसा भी कहते हैं। इस दर्शन के प्रवर्तक भगवान् बादरायण (वेद-व्यास) हैं। वेद के ज्ञान-काण्ड से सम्बंधित चिन्तन इस दर्शन शास्त्र मे वर्णित है। वेदान्त और उपनिषदों के वाक्यों के अर्थों का निर्णय न्याय की रीति से इसमें किया गया है इसलिये इसे वेदान्त शास्त्र का न्याय-प्रस्थान भी कहते हैं। तत्त्वज्ञान के इस गहन अद्वैत दर्शन शास्त्र पर कई मतो का आविष्कार हुआ है। द्वैत, द्वैताद्वैत, विशिष्टाद्वैत, अविभागाद्वैत, केवलाद्वैत, शुद्धाद्वैत आदि-आदि।

६- वैशेषिक–दर्शन के प्रणेता महर्षि कणाद हैं। इसमे विश्व का वर्गीकरण–द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय और अभाव– इन सात पदार्थों मे किया गया है। प्रमाण मे न्याय का अनुसरण करते हुए ज्ञेय जगत् का चिन्तन इस शास्त्र की विशेषता है।

जगदीस [जगदीश] ३४९, ३५०

हिन्दुओ के प्रमुख चार धामो में से जगदीशपुरी पूर्व दिशा का प्रसिद्ध धाम है। इसे पुरी अथवा जगन्नाथपुरी भी कहते हैं जो भारत

के पूर्वी समुद्र तट पर उडीसा प्रदेश मे स्थित है। यहा श्रीजगन्नाथजी श्री सुभद्राजी और श्रीबलभद्रजी की काष्ठ निर्मित असम्पूर्ण मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं।

एकबार द्वारिका मे माता रोहिणीजी श्री कृष्णचन्द्र की पटरानियो को गोपियो के प्रेम–प्रसग की कथा सुना रही थी। उस समय सुभद्राजी को किसी को भीतर नही आने देने के लिए द्वार पर खडे रहने का रोहिणीजी ने आदेश दिया। उसी समय श्रीकृष्ण और बलभद्रजी आगये और अन्दर जाने लगे। सुभद्राजी ने दोनो के बीच मे खडे होकर और अपने दोनो हाथ फैला कर उन्हे वही रोक दिया। रोहिणीजी द्वारा व्रज की गोपी-प्रेम कथा सुन कर तीनो वही खडे विह्वल हो गये। उसी समय देवर्षि नारदजी भी वहा आ गये। देवर्षि ने जब ये प्रेम-विह्वल रूप देखे तो वे भी द्रवित होगये और प्रार्थना की– 'आप तीनो इसी रूप मे विराजमान हो।' उन्होने नारदजी की प्रार्थना को स्वीकार किया और कहा कि– 'कलियुग मे दारु-विग्रह के इसी रूप में हम तीनो पुरी मे अवस्थित होगे।' दारु-विग्रह के रूप में प्राकट्य के और भी कारण कहे जाते हैं। श्री जगन्नाथ के रथोत्सव का मेला अद्वितीय होता है।

जगद्गुर श्री शकराचाय के चारो धामो मे स्थापित पीठो मे से यहा के पीठ का नाम गोवधन-पीठ है। चारो पीठाधीश्वर 'अनन्त श्री जगद्गुरु शकराचाय' की उपाधि से विभूषित होते हैं।

जच्छ [यक्ष], १५१

देवताओं की एक जाति। यक्ष जाति के देवता कुवेर के सेवक माने जाते है और वे उसकी निधियों की रक्षा करने वाले होते है।

जनक्क, जन्नक, [जनक] ३५, २४६

यह मिथिला के राजा थे। जगज्जननि भगवती सीता इन्ही की पुत्री थी। इनके समय मे मिथिला ब्रह्म-विद्या का क्रीडा-क्षेत्र वनी हुई थी। वडे-वडे ऋषि भी ब्रह्मज्ञान का उपदेश ग्रहण करने के लिए इनके पास आते थे। इन्ही राजर्षि की सहायता से याज्ञवल्क्य ऋषि ने यजुर्वेद का सकलन किया था। उस समय के ब्राह्मणो मे भी इनका सम्मान वहुत बढा-चढा था। शतपथ ब्राह्मण मे लिखा है कि अत्यन्त उच्चकोटि के ज्ञानी होने के कारण राजर्षि जनक ने ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया था। ये सदेह मुक्त थे और विदेह कहलाते थे।

जमन्न [जैमिनि] २४३

महान् तत्ववेत्ता और शास्त्रार्थकर्त्ता महर्षि जैमिनि पूर्व-मीमांसा दर्शन के प्रणेता है। 'अथातो धर्म जिज्ञासा' और 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा' इन दोनो सूत्रो के सूत्रकार जैमिनि ऋषि ही हैं। वेद-व्यास की आज्ञानुसार प्रथम सूत्र का पक्ष जैमिनि और दूसरे सूत्र के पक्ष का व्यास स्वयं समर्थन करे। इन्ही दो सूत्रो के पक्ष में पूर्व-मीमांसा और उत्तर-मीमांसा (वेदान्त दर्शन) नामक दो दर्शन-ग्रन्थों का निर्माण हुआ। व्यास ने जैमिनि के पक्ष का खंडन किया है।

जयदेव ५०, २४६

जयदेव संस्कृत के प्रसिद्ध भक्त-कवि और गीतगोविन्द के रचयिता थे। इनकी कविता मधुर और ललित है। गीतगोविन्द में इन्होंने अपनी माता का नाम वामदेवी और पिता का नाम भोजदेव लिखा है। बंगाल में अजय नदी के तट पर केंदुला ग्राम इनकी जन्मभूमि कहा जाता है।

जरा [जरायुज] २६६

चतुर्विध (अंडज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज) जीवों में जरायु (आवल) से लिपटे हुए उत्पन्न होने के कारण मनुष्य, पशु आदि प्राणी जरायुज कहलाते हैं। गर्भ वेष्टित चर्म को जरायु कहते हैं। पिण्डज (जरायुज) प्राणी चतुर्विध जीवों में श्रेष्ठ प्राणी हैं।

जरासंध ८५

यह मगध के राजा बृहद्रथ का पुत्र था। बृहद्रथ के जब कोई पुत्र नहीं था तो बृहद्रथ ने महर्षि चण्डकौशिक को प्रसन्न करके संतान प्राप्ति के लिये उनसे एक फल प्राप्त किया। बृहद्रथ ने उस फल के दो टुकड़े करके अपनी दोनो स्त्रियों को खिला दिया, जिससे दोनों स्त्रियों के गर्भ से एक शरीर के आधे आधे अंग के दो टुकड़ों के रूप में एक बालक उत्पन्न हुआ। बृहद्रथ इससे बहुत दुखी हुआ। उसने उन दोनों टुकड़ों को श्मशान में फिंकवा दिया। वहा जरा नाम की एक राक्षसी रहती थी, उसने उन दोनो टुकड़ों को जोड़कर और जीवित करके बृहद्रथ को सौंप दिया और कहा कि यह बड़ा

पराक्रमी होगा और इसकी यह संधि टूटे विना इसकी मृत्यु नहीं होगी। राजा वड़ा प्रसन्न हुआ और उसका नाम जरासंध रखा।

जरासंध ने सैंकड़ों राजाओं को युद्ध में जीत-जीतकर रुद्रयाग में वलि देने को पशुओं की भांति एक दूसरे से वांधकर कैद कर रखा था। इन सवने श्रीकृष्ण को गुप्त संदेश पहुँचाया कि हमारी मृत्यु निकट आगई है। आपके अतिरिक्त हमे कोई वचाने वाला नहीं है। हमें इस भयंकर कष्ट से शीघ्र छुड़ाने की कृपा करें, श्रीकृष्ण ने दूत के साथ उत्तर दिया कि तुम्हारा शीघ्र ही छुटकारा हो जायगा। श्रीकृष्ण के आदेशानुसार भीम ने जरासंध को चीर कर दाहिने अंग को वांयी ओर और वाँएँ अंग को दाहिनी ओर फेंक दिया।

ताड़ीका [ताड़का] ३५

यह सुकेतु यक्ष की कन्या तथा मारीच और सुवाहु की माता थी। यह अगस्त्य ऋषि के शाप से राक्षसी हो गई थी और सरयू के किनारे ताड़क नामक वन मे निवास करती थी। उस प्रदेश में इसके उत्पात से त्राहि-त्राहि मच गई थी। महर्षि विश्वामित्र के यज्ञ समारंभ में भी यह नित्य वाधा डालती रहती थी। अतः इसका वध करने के लिए वे महाराज दशरथ से राम और लक्ष्मण को ले गये। मार्ग में ही इसने इन पर आक्रमण कर दिया। भगवान राम को स्त्री का वध अनुचित प्रतीत हुआ, किन्तु माया के वल से जव यह वहुत जोर की उपल-वृष्टि करने लगी तव विश्वामित्र की आज्ञा से राम ने इसका वध कर डाला।

तुमर, तुम्मर [तुबुरु] १२३, १८६, १६०

प्राधाना नाम के गधर्व का तुंबुरु नामक पुत्र। यह गधर्वों मे बहुत प्रसिद्ध हुआ। राजस्थानी मे यह नाम गधर्व' अर्थ मे रूढ हो गया मालूम होता है।

त्रीकम [त्रिविक्रम] १०७, २१६

भगवान् विष्णु के त्रिलोक व्यापी रूप का नाम। विष्णु का यह नाम वामन अवतार के लिये लिया जाता है, जिसमे उन्होने तीन पैड से स्वर्ग, मर्त्य और पाताल लोक नाप लिये थे।

दत्तात्रय, दतदेव, गुरदत्त [दत्तात्रेय] १२, ८८, ६१

भगवान् विष्णु के चौवीस अवतारो मे से एक। महर्षि अत्रि की पत्नी अनसूया के पतिव्रत-धर्म के प्रभाव से जब देवगण प्रसन्न हुए तो उन्होने अनसूया को वर मागने को कहा। उन्होंने वर मागा कि ब्रह्मा विष्णु और महेश ये तीनो मेरे पुत्र हो। वर के प्रभाव से अनसूया के गर्भ से ब्रह्मा सोम रूप से, विष्णु दत्त रूप से और शकर दुर्वासा के रूप मे उत्पन्न हुए।

सौराष्ट्र मे जूनागढ के पास गिरनार पर्वत गुरु दत्तात्रेय का तप स्थान है, जो दत्त-शिखर के नाम से प्रसिद्ध है।

आबू पर्वत का सर्वोच्च शिखर 'गुरु शिखर' के नाम से प्रसिद्ध है, जहा गुरु दत्तात्रेय के चरण-चिह्नों के दर्शन है।

दसानन [दशानन] ४२

दशानन पुलस्त्य ऋषि का पौत्र और विश्रवा ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम पुष्पोत्कटा था। मयासुर की पुत्री मंदोदरी इसकी पत्नी थी। जन्म से ही दस सिर होने से इसका नाम दशानन अथवा दसकंधर हुआ। रावण नाम बाद में रखा गया। यह महान् पराक्रमी, प्रकाण्ड पण्डित, बुद्धिवादी और अनन्य शिव भक्त था। अपनी अद्‌भुत तपस्या द्वारा ब्रह्मा को भी इसने प्रसन्न करके मनुष्य के अतिरिक्त किसी से भी मारा नहीं जाने का वरदान प्राप्त किया था। शक्ति और तप के प्रभाव मे सभी देवता इसकी सेवामें प्रस्तुत रहते थे।

राम वनवास के समय इसने सीता का हरण कर लिया था, जिसके फलस्वरूप राम-रावण युद्ध हुआ और यह मारा गया। भगवान राम ने इसके भाई विभीषण को ही लंका का राज्य दे दिया था।

दिगपाळ [दिक्‌पाल] १३६, २५१

पुराणानुसार दसो दिशाओ का पालन करने वाले देवता। कहीं कहीं अष्ट दिग्पाल भी कहे जाते हैं। पूर्व दिशा से ईशान पर्यंत क्रम से इनके नाम ये है— इन्द्र, अग्नि, पितर, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर वा सोम (वैश्रवण) और ईशान। दिग्देवता, दिगेश दिग्पति और दिग्राज आदि इसके पर्याय है।

दीरघ-देह, [दीर्घ देह] १७०

दीर्घ-देह अर्थात् स्थूल-शरीर। जो पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश— इन पंच-महाभूतों (के एक साथ मिलने से) और कर्मों द्वारा उत्पन्न है। और जो सुख-दुखादि भोगों का स्थान है।

स्थूल-शरीर छ विकारों वाला होता है— १ गर्भ २ जन्म ३ वृद्धि ४ दृढत्व, ५ वृद्धत्व (बुढापा) और ६ नाश।

पंचीकृत पंच महाभूतं कृत सत् कर्मजन्य,
सुख दु:खादि भोगायतन शरीरम्।
अस्ति जायते वर्धते विपरिणमते अपक्षीयते विनश्यतीति,
षड विकार वदेतत्स्थूलशरीरम्।

तत्वबोध

दुज-पंख [द्विज-पक्ष] ७९

गरुड को द्विज भी कहते हैं। यह विनता के गर्भ से उत्पन्न महर्षि कश्यप के पुत्र हैं। सर्पों की माता कद्रू (जो विनता की बहिन और कश्यप की बड़ी पत्नी थी) से अपनी माता के दासत्व को छुड़ाने के लिये यह पाताल से अमृत लाने के लिये गये थे।

भगवान् के रथ की ध्वजा में यह सदा प्रतिष्ठित रहते हैं और विष्णु भगवान् के वाहन हैं। दे० गरुड

दुज्जराम [द्विज राम] १३

राम, बलराम और द्विजराम ये तीन 'राम' कहे जाते हैं। इनमें से यह ब्राह्मण 'राम' भगवान् विष्णु का अंशावतार कहा जाता है। यह महर्षि जमदग्नि के पाचवे पुत्र हैं। भगवान् शंकर से इन्होंने अमोघ-अस्त्र परशु प्राप्त किया था, इसीसे यह परशुराम कहलाये। कार्तवीर्य (सहस्रार्जुन) ने इनके पिता की कामधेनु चुरा ली, इस पर इन्होंने कार्तवीर्य को मार दिया। कार्तवीर्य के पुत्रों ने इनके पिता को मार डाला। परशुरामजी ने इस बात को लेकर समस्त क्षत्री जाति को नाश करने का संकल्प कर लिया और २१ बार पृथ्वी को क्षत्रिय-विहीन कर दिया। केवल कुछ विधवा क्षत्राणियां जो अपने बालकों को लेकर ऋषियों के आश्रमों में छिप गयी थी, उनके बालक बच गये। विदेह जनक ब्रह्मनिष्ठ होने के कारण मारे नही गये थे। सूर्यवंशी मूलक राजा स्त्री-वेष से स्त्रियों मे छिपा रहा, इसलिए वह भी बचा रह गया। इस प्रकार क्षत्रीवंश समूल नष्ट नही हो सका।

जानकीजी के स्वयंवर मे राजा जनक के यहां भगवान राम द्वारा धनुष-भंग होने पर यह वहां गये थे। इस धनुष के तोड़े जाने से यह बहुत क्रुद्ध हुए। परन्तु जब इन्हें यह पता पड़ गया कि शंकर के इस धनुष को तोड़ने वाले विष्णु के पूर्ण अवतार भगवान् राम हैं तो इन्होने इस संशय के निवारणार्थ अपना धनुष श्रीराम को दिया जो उन्होने तुरन्त चढा दिया। उसी समय उनका विष्णु तेज निकलकर भगवान् राम मे समा गया और यह वन में तपस्या करने को चले गये।

दुसासण, [दु:शासन] ४६

यह धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक था और दुर्योधन का छोटा भाई था। यह दुर्योधन जैसा ही पराक्रमी और महाग्यी था परन्तु था महादुष्ट। इसने दुर्योधन की आज्ञा से द्रौपदी को रजस्वला होते हुए भी, उसको वेणी पकडकर अन्त पुर से सभा में घसीट लाया था और निर्लज्जि बनकर उसे वहा नग्न करने का प्रयत्न किया था। परन्तु भगवान् श्रीकृष्ण ने द्रौपदी का चीर अनन्त बना दिया जिससे वह नग्न होने से बच गई। भीमसेन ने इसका वध किया था।

दूणागिर [द्रोणगिरि] २२१

राम-रावण युद्ध मे मेघनाद के द्वारा शक्ति-बाण के लगने से जब लक्ष्मण मूर्छित होगये तब द्रोणगिरि पर्वत पर सजीवनी लेने हनुमान भेजे गये। वहा बूटी को नही पहिचान सकने के कारण वे इस पर्वत शिखर को ही उठा ले आये थे।

द्रजीत [इन्द्रजीत] ४२

यह लकेश्वर रावण का पुत्र था। देवराज इन्द्र को युद्ध में परास्त करने के कारण मेघनाद का एक दूसरा नाम इन्द्रजीत पड़ा। इसने राम-रावण युद्ध में दो वार राम-लक्ष्ण को हराया था। अनन्तर भयकर युद्ध होने पर यह लक्ष्मण के हाथ से मारा गया। यह मेघ के समान भयकर गर्जन करने वाला और महा पराक्रमी था।

द्रजोग, [दुर्योधन] ४६

कुरुराज धृतराष्ट्र के गांधारी के गर्भ से उत्पन्न सौ पुत्रों में से दुर्योधन सबसे बड़ा था। यह बड़ा दुष्ट और पराक्रमी था। पांडवों से तो यह बचपन से ही द्वेष रखने लग गया था। भीम को भोजन में विष देकर नदी में डुबा दिया था। सबको एक ही साथ मार देने के लिये एक सुन्दर लाक्षागृह बनवाया और इसमे पांडवो को निवास देकर उसमे आग लगादी। अनेको बार कई प्रकार के छल-छिद्र कर इन्हे मार देने के षडयन्त्र-प्रयत्न किये, पर भगवान की कृपा से वे बचते रहे। अन्त मे महान् धूर्त शकुनि के साथ युधिष्ठिर को जूआ खेलने और उसमे राज्यादि समस्त सम्पत्ति और यहां तक कि द्रौपदी तक को दावं पर रखने को विवश किया। पांडवो का सर्वस्व हार जाना, द्रौपदी को दुःशासन द्वारा पकड कर सभा मे घसीट लाना और वहां उसे निर्लज्जता पूर्वक नगी करने का अमानवीय अत्याचार करने का जबरदस्त प्रयत्न करना। जूआ मे हार जाने की शर्त के अनुसार बारह वर्ष जगल मे रहना, तेरहवे वर्ष अज्ञात रहना। और उस बीच यदि पता लग जाय तो बारह वर्ष पुनः वनवास भुगतना। वनवास और अज्ञातवास से लौट आने पर पांडवों को रहने के लिये पांच गांव जितनी भूमि भी देना स्वीकार नही करना। दुर्योधन की ऐसी अनेक दुष्टताओ के परिणाम-स्वरूप महाभारत जैसा भयंकर युद्ध हुआ जिसमे अन्यायी कौरव मारे गये और पांडवों की विजय हुई।

द्रोण, ४६, ८१

ये भारद्वाज ऋषि के पुत्र हैं। इन्होने धनुर्विद्या तथा आग्नेयास्त्र की शिक्षा पहले अपने पिता से और फिर भारद्वाज के शिष्य अग्निवेश से पाई थी। अस्त्र-विद्या मे निपुण होने के लिए इन्होने श्री परशुरामजी से भी शिक्षा पायी। शरद्वान की पुत्री (कृपाचार्य की बहिन) कृपि से इनका ब्याह हुआ। महान् पराक्रमी महारथी अश्वत्थामा इन्ही का पुत्र था। भीष्मपितामह ने कौरवों तथा पाण्डवो को शस्त्र-विद्या की शिक्षा देने के लिए द्रोणाचार्य को नियुक्त किया था।

राजा द्रुपद इनके बाल-सखा थे। द्रुपद कहा करते थे कि राजा होने पर भी उन दोनो मे ऐसी ही मित्रता बनी रहेगी और उसे दृढ करने के लिए वे उन्हें आधा राज दे देंगे। परन्तु राजा होने के बाद इन्होने अपने सखा द्रोण को बिल्कुल ही भुला दिया। एक बार जब ये उनसे मिलने के लिए गये तो उन्होंने इन्हें उपेक्षा की दृष्टि से देखा। द्रोण को इससे विशेष क्षोभ हुआ। पाडवों के द्वारा उन्होंने द्रुपद को पराजित करवाकर अपने सम्मुख बन्दी रूप मे उपस्थित करवाया और उसका आधा राज छीन कर उसे मुक्त कर दिया। कौरव-पाण्डव युद्ध में द्रोण कौरवो की ओर से लडे थे। द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न द्वारा इनका वध हुआ।

धनतर [धन्वन्तरि] १२

आयुर्वेद के प्रवर्तक भगवान् विष्णु का अवतार जो समुद्र मथन के समय, हाथ में अमृत घट लिये हुए प्रगट हुए थे। यह आयुर्वेद के प्रथम और प्रधान आचार्य और देवताओ के वैद्य हैं।

घनेस [धनेश] १५१

येह महर्षि पुलस्त्य के पौत्र और विश्रवा के पुत्र सभी यक्षों के अधिपति है। इनकी नगरी का नाम अलकापुरी है। कुवेर देवताओं के धनाध्यक्ष है। इनके तीन पैर और आठ दांत कहे जाते हैं। कुवेर और रावण दोनों भाई हैं। कुवेर यक्षाधिपति है और रावण राक्षसाधिपति है। कुबेर उत्तर–दिग्पाल है।

धरणीधर, ६, ६२, १०१, ३४२

राजस्थान और गुजरात का प्राचीन काल का एक प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान। प्राचीन समय में इसे वाराहपुरी कहते थे। उत्तर गुजरात के वाव और थराद नगरों के पास ढेमा गाँव मे भगवान् श्री विष्णु की इस चतुर्भुज मनोहर मूर्त्ति का विशाल मंदिर बना हुआ है। मंदिर के पास मानसरोवर नाम का एक वडा तालाब है। यहां शिवजी, लक्ष्मीजी, गणेशजी और हनूमानजी आदि के मन्दिर भी हैं। प्राचीन काल में पंजाब, सिंध, व्रज, उत्तर-प्रदेश और राजस्थान आदि देशों की ओर से द्वारका की यात्रा करने वाले यात्रियों को प्रथम धरणीधर के दर्शन करना और वहां की तप्त मुद्राओं को अपनी भुजाओं पर लगवाना आवश्यक समझा जाता था। आजकल तप्त मुद्राओं के स्थान केशर-चन्दन की मुद्राएँ लगाई जाती हैं। महाभारत में इस तीर्थ का बडा महात्म्य लिखा है। पश्चिम रेलवे की पालनपुर-कुंडला-गांधीधाम शाखा पर भाभर स्टेशन से धरणीधर के लिये मोटर-बसें मिलती है।

ऐसा माना जाता है कि भगवान् श्रीकृष्ण द्वारका जाते हुए यहा ठहरे थे अतः इस तीर्थ का निर्माण हुआ।

धुरू, ध्रुव, [ध्रुव] ६१, १४६, २२१

ध्रुव स्वयभू मनु के पौत्र तथा महाराज उत्तानपाद के पुत्र हैं। उत्तानपाद के दो रानिया थी– सुरुचि तथा सुनीति। सुनीति के गर्भ से ध्रुव तथा सुरुचि के गर्भ मे उत्तम की उत्पत्ति हुई। एक बार जब उत्तम राजा की गोद मे बैठा था तो ध्रुव भी आकर उनकी गोद के एक भाग मे बैठ गया। सुरुचि ने ध्रुव को अवज्ञा के साथ हटा दिया। ध्रुव को यह अपमान असह्य होगया और वे उसी समय वन को चल दिये। वहा उन्होने घोर तप करके भगवान् को प्रसन्न किया और वर प्राप्त किया कि 'वह समस्त लोको, ग्रहो तथा नक्षत्रो के ऊपर उनके आधार-स्वरूप होकर स्थित रहेगा, और उसके रहने से वह स्थान ध्रुवलोक के नाम म विख्यात होगा।" पश्चात् इन्होंने घर आकर अपने पिता का राज्य प्राप्त किया और अनेको वर्ष धर्म और नीतिपूवक राज्य करके ध्रुवलोक मे चले गये।

नळकूवड़ [नलकूबर] २५४

कुबेर के पुत्र नल कूबर और इसका बड़ा भाई मणिग्रीव दोनो अपनी स्त्रियो के साथ गगा मे जल-क्रीडा कर रहे थे, इतने मे नारदजी उधर होकर निकले। मदोन्मत्त दोनो भाईयो ने नारदजी की हसी उड़ाई और नमस्कार नही किया। इस पर नारदजी ने इन्हे शाप दिया कि 'तुम लोग जड-बुद्धि हो अत वृक्ष हो जाओ।' भूल का भान हो जाने पर इन्होंने प्रार्थना की कि हमारे अविवेक को क्षमा करें। दयालु नारदजी ने क्षमा करते हुए कहा कि भगवान् श्री कृष्ण के चरण स्पर्श से तुम्हारा उद्धार होगा।

शाप के कारण दोनो भाई गोकुल मे जुड़वां अर्जुन वृक्ष उत्पन्न हुए; जिनका यमलार्जुन नाम पड़ा। एक दिन यशोदाजी ने बालक कृष्ण को ऊखल से बांध दिया। कृष्ण ऊखल को घसीटते हुए वृक्षों के पास पहुंच गये और ऊखल को दोनो वृक्षो के बीच में अड़ाकर जोर से झटका मारा जिससे दोनो वृक्ष गिर गये और उनमें से नलकूबर और मणिग्रीव अपनी दिव्य यक्ष देह से प्रगट हो गये। श्री कृष्ण की स्तुति और वंदन करके दोनो अपने स्थान को चले गये।

नवखंड, २०१

पौराणिक भूगोल के अनुसार समस्त पृथ्वी के नौ खंड माने गये हैं और वे इस प्रकार हैं— (१) इलावृत्त, (२) भद्राश्व, (३) हरिवर्ष, (४) किंपुरुष, (५) केतुमाल, (६) रम्यक, (७) भारत, (८) हिरण्यमय, और (९) उत्तर कुरु। दूसरे मतानुसार इन नौ खंडों के नाम इस प्रकार हैं— (१) भरत, (२) वर्त, (३) दाम, (४) द्रामाला, (५) केतुमाल, (६) हिरे, (७) विघिवस, (८) महि और (९) सुवर्ण।

नवग्रह, २५१, २५८

मंगल, बुध, चन्द्र, शनि, शुक्र, गुरु, राहु, केतु और सूर्य ये नौ ग्रह हैं।

नव निद्ध, नवो निध [नव-निधि] २०१, २३१

महा पद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुंद, नील और खर्व, ये कुवेर की नौ निधियां हैं।

नाग-नवै-कुळ [नव-कुल नाग] १६१

कश्यप तथा कद्रू के पुत्र नाग मेरु-कर्णिका में रहने वाले वरुण की सभा के सभापति थे। कश्यप के पुत्र नौ प्रमुख नाग नौकुली नाग कहलाते हैं [1]। त्रिलोकी भर मे इन्होंने बडा भारी

---

१ राजस्थानी साहित्य मे नागो के नौ कुल माने गये हैं, अत नव कुळी नाग' प्रसिद्धि मे आया हुआ है। पुराणों मे केवल आठ कुल मान कर अष्ट कुली' अथवा 'अष्ट नाग' कहा है। वे इस प्रकार हैं—

अनत, वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, शख, कुलिक, पद्म और महापद्म। यही नागों की आठ मुख्य जातिएँ हैं। इनके कई अवातर भेद और हैं जिन्हें भी नागवश या नाग कुल कहते हैं। वासुकि इन सब का अधिपति माना जाता है। इसकी स्त्री का नाम शतशीर्षा है। वासुकि ही सदैव भगवान् शकर के भूषण रूप मे उनका आश्रित रहता है। समुद्र-मथन के समय देव और दैत्यों ने इसी को मथन-रज्जु बनाया था। वासुकि के पन्द्रह नाग-कुल प्रसिद्ध हैं।

कहा जाता है कि शाप के प्रत्याहार से ये मारवाड देश में मडोर के पास सुरक्षित स्थान मे चले गये थे। वहां इनके नाम से नागादरी (नागद्रही वा नागह्रदिनी) नदी, नाग कुण्ड नागह्रद और भोगी-शैल (भोगवती) आदि अनेक तीर्थ-स्थान प्रसिद्ध हैं और वहां बडे मेले लगते हैं। मारवाड के पू गल प्रदेश के एक गाव मे इन नागों के भाट रहते हैं। जिनके पास इनकी बडी विस्तृत वशावलियां बताई जाती हैं। वर्ष मे एक बार निश्चित तिथि पर किसी विशेष स्थान पर जाकर ये वहा उनकी वशावलियां पढते हैं।

उपद्रव मचाया तब ब्रह्माजी ने इन्हें शाप दे दिया कि जन्मेजय के नाग-यज्ञ में तुम सभी नष्ट हो जाओगे। पर इनकी प्रार्थना से द्रवीभूत होकर ब्रह्माजी ने शाप का प्रत्याहार कर दिया। ये सभी एक दूसरे स्थान से चले गये और वहां पर एक नाग-तीर्थ की सृष्टि की। जिस दिन ब्रह्मा के पास ये प्रार्थना करने गये थे उस दिन श्रावण शु० पञ्चमी थी जो अब नाग-पचमी के नाम से प्रसिद्ध है।

नारसिघ [नृसिह] १३

आधी सिंह की और आधी मनुष्य की आकृति वाला भगवान् विष्णु का एक अवतार। हिरण्यकशिपु दैत्य को मारकर उसके पुत्र भक्त प्रह्लाद की रक्षा करने के निमित्त विष्णु भगवान् को ऐसा नृसिंह रूप धारण करना पड़ा था।

नरकासुर [नरकासुर] ५०

यह भूमि का पुत्र था, अतः इसे भौमासुर भी कहते है। भूदेवी ने भगवान विष्णु को प्रसन्न करके उनसे अपने पुत्र नरकासुर को वैष्णवास्त्र दिलवा दिया। इसको प्राप्त करके यह महा बलवान होगया।

इसने देवताओं को बहुत पीड़ित किया और उनकी तथा इन्द्र की संपत्ति छीन कर अपने नगर प्राग्ज्योतिषपुर ले आया। यह बात इन्द्र ने भगवान् कृष्ण से कही। इसको वरदान था कि बिना इसकी माता की आज्ञा के इसकी मृत्यु नहीं होगी। सत्यभामा, पृथ्वी का अवतार थी अतः भगवान् श्रीकृष्ण इन्हें साथ लेकर नरकासुर का वध करने गये।

नरकासुर युद्ध मे मारागया। इसके बन्दीखाने में सोलह हजार कन्याएं बन्द थी भगवान् ने उनको मुक्त किया और उनकी प्रार्थना पर उनसे विवाह किया।

पंचाळी [पाचाली] ५१

पाचालराज द्रुपद की यज्ञ वेदी से उत्पन्न कृष्णा नाम की कन्या, जो पाण्डवो को ब्याही थी। पाचाल देश की होने के कारण इसका नाम पाचाली पडा। द्रुपद की कन्या होने के कारण द्रौपदी नाम प्रसिद्ध हुआ। दुष्ट दुर्योधन की आज्ञा से द्यूत-सभा मे दु शासन ने पाचाली का चीर हरण करना शुरु किया। द्रौपदी ने अपने पति और वृद्धजनो से सहायतार्थ पुकार की पर किसीने उसकी सहायता नही की। तब उसने भगवान् श्री कृष्ण से आर्त पुकार की, जिससे उसका चीर अनन्त हो गया और उसकी लाज बच गई।

आर्त-वाणी

कृष्ण कृष्ण महायोगिन् विश्वात्मन् विश्वभावन
प्रपन्ना पाहि गोविन्द कुरु मध्येऽवसीदतीम्

हे श्री कृष्ण ! आप महायोगी और सच्चिदानद हैं। आप ही विश्वात्मा (सर्वस्वरूप) और आप ही विश्व के प्रिय हैं। हे गोविन्द ! मैं कौरवो से घिर कर बडे सकट मे पड गई हू। अब आपकी शरण मे हू। प्रभु ! आप मेरी रक्षा कीजिये।

पतंजळ [पतजलि] २४३

१ योग शास्त्र के प्रणेता महर्षि पतजलि। इनके इस दर्शन मे योग-साधन द्वारा चित्त की वृत्तियो को वश में करने के उपाय बताये गये हैं। इसे योग-सूत्र भ कहते हैं। दे० छ-सास्त्र सख्या २

आर्ष-वाणी

अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः

(योगसूत्र)

अहिंसा की संपूर्ण और दृढ़ स्थिति हो जाने पर (उस योगी के निकट सिंह, सर्प आदि हिंसक और विषैले) समस्त प्राणी वैर का त्याग कर देते है।

२. एक प्रसिद्ध महाभाष्यकार मुनि जिन्होंने पाणिनीय सूत्रों (अष्टाध्यायी व्याकरण)पर और कात्यायन कृत वार्तिक पर महाभाष्य लिखा है।

परासर [पराशर] २४५

महर्षि पराशर महर्षि वसिष्ठ के पौत्र और शक्ति ऋषि के पुत्र एक गोत्रकार ऋषि हैं। इनके पिता शक्ति ऋषि को राक्षसों ने मार दिया था। इन्होंने इसका बदला लेने के लिए राक्षस-सत्र करना प्रारम्भ किया था, परन्तु वशिष्ठ ऋषि के कहने से बन्द कर दिया। यह महान् तपस्वी थे। इनका 'पराशर-स्मृति' नामक धर्मशास्त्र प्रसिद्ध है। वेद-व्यास कृष्ण-द्वैपायन इन्ही के पुत्र थे।

स्मृति-वाणी

तस्माद्दुःखात्मकं नास्ति न च किंचित् सुखात्मकम्।
मनसः परिणामोऽयं सुखदुःखादि लक्षणः ॥

(महर्षि पराशर)

इसलिए कोई भी वस्तु न तो किंचित् दुखमय है और न किंचित् सुखमय ही है। यह तो केवल मन के परिणाम हैं। सुख-दुख के लक्षण यही हैं।

परीखत, [परीक्षित्] ४६

परीक्षित् महावीर अर्जुन के पौत्र और अभिमन्यु के पुत्र थे। अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से भगवान श्रीकृष्ण ने इनकी गर्भ में रक्षा की थी और उस समय इन्होंने गर्भ में भगवान् के दर्शन किये थे। जन्मते ही सर्वत्र भगवान् के होने की परीक्षा करने लग जाने के कारण इनका नाम परीक्षित् रखा गया। पाण्डवों के बाद इन्होंने बहुत ही उत्तम प्रकार से राज्य का सचालन किया।

कलियुग का आरम्भ इन्ही के समय में हुआ माना जाता है। एकबार जगल में इन्हे एक राज्य चिह्न धारण किया हुआ एक शूद्र मिला, जो एक गाय और बैल को निर्दयतापूर्वक मूसल से पीटता जा रहा था। परीक्षित क्रोधित होकर उसे दण्ड देने लगे। शूद्र ने अपना परिचय देते हुए कहा— "राजन्! मैं कलियुग हूँ, यह गाय पृथ्वी और बैल धर्म है। आज द्वापर की समाप्ति पर मेरा प्रवेश हो रहा है। मुझे शरण और अभय देने की कृपा कीजिए। आप जैसे धर्मात्माओं के राज्यशासन में मेरा युग प्रभु-प्राप्ति के लिए महादुष्टों को भी बडा सुलभ होगा। मेरा ऐसा रूप और कर्तव्य देख करके आप घबरायें नहीं। मुझे शरण दीजिए।" कहते हुए महाराज के चरणों में गिर पडा।

महाराज परीक्षित् ने शरणागत जानकर छोड दिया और चौदह स्थानों में रहने के लिए उसे अभय कर दिया। उन स्थानों में एक स्वर्ण भी था। परीक्षित् के सिर पर उस समय सोने का मुकुट धारण किया हुआ था, अत कलि ने उसी समय उस पर अपना

आसन जमा दिया। घर को लौटते हुए परीक्षित् शमीक ऋषि के आश्रम मे पहुँच जाते है, वहां कलि की बुद्धि से प्रेरित होकर ध्यानमग्न ऋषि के गले में मरा हुआ साप डाल देते है। शमीक ऋषि के पुत्र शृंगी ऋषि को जब यह बात मालूम होती है वह क्रोध में आकर राजा को यह शाप दे देते हैं कि सातवे दिन सर्प के काटने से उसकी मृत्यु हो जायगी।

परीक्षित् ने अपना मृत्युकाल निकट आया जान जन्मेजय को राज्य दे दिया और गंगा के तट पर आकर बैठ गया। वहां इन्होने अन्न-जल का त्याग कर दिया और शुकदेव मुनि से भागवत की कथा श्रवण की। आठवे दिन तक्षक के दंश से इनकी मृत्यु होगई।

परीक्षित-वाणी

निवृत्ततर्षैरुपगीयमानाद्भवौषधाच्छ्रोत्रमनोऽभिरामात् ।
क उत्तम श्लोक गुणानुवादात् पुमान् विरज्यते विना पशुघ्नात् ।।

(श्री मद्भागवत)

जिनकी तृष्णा सदा के लिए मिट गई है वे जीवन्मुक्त महापुरुष, जिसका कभी तृप्त नही होकर पूर्ण प्रेम से गान किया करते है, मुमुक्षुजनो के लिए जो भवरोग की औषधि है तथा विषयी लोगों के कान और मन को भी परम आह्लाद देनेवाला है। भगवान श्रीकृष्णचन्द्र के ऐसे उत्तम गुणानुवाद से पशुघाती अथवा आत्मघाती मनुष्य के अतिरिक्त और ऐसा कौन है जो उससे विमुख हो जाय ?

पांडव, ४५, ३३८

महाराज पाण्डु के पुत्र युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव- ये पाचों पाण्डव कहलाते हैं। युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन

ये तीनों कुन्ती के गर्भ से और नकुल और सहदेव माद्री के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। ये पाचों पाण्डु के क्षेत्रज पुत्र थे। युधिष्ठिर धर्म के, भीम वायु के, अर्जुन इन्द्र के और नकुल और सहदेव अश्विनीकुमार-द्वय के औरस से उत्पन्न हुए थे। ये धर्मात्मा, नीतिज्ञ, महापराक्रमी और भक्त थे। कौरव-पाडवों के महाभारत-युद्ध में श्रीकृष्ण ने पाडवों के पक्ष मे युद्ध का सचालन किया। गीता के ज्ञान का उपदेश देकर अर्जुन के मोह और सशय दूर किये और पाडवों को विजयी बनाया।

पीतांबर, ३

ईसरदासजी को भक्ति की ओर प्रवर्त करने वाले उनके गुरु प्रसिद्ध ब्रह्मनिष्ठ पीताम्बरदासजी भट्ट। यह रावल जाम की विद्वत्सभा के सर्वोपरि विद्वान, कवि, भक्त और पडित थे।

पुराण [पुराण] १३६

जिसमे कल्प का इतिहास लिखा हुआ हो अर्थात् जिसमें पुराने समय का राजनैतिक, सामाजिक और प्राकृतिक अवस्थाओं का वर्णन किया गया हो और जो मनुष्यों के चित्त को धर्म की ओर आकर्षित कर दे, उसे पुराण कहते हैं। पुराणों की सख्या १८ हैं और अठारह ही उप पुराण हैं। ये हिन्दुओं के विशिष्ट और प्राचीन धर्म-ग्रन्थ है। इनमे सृष्टि तत्व, अवतारों की कथाएं और दार्शनिक तत्वों का समावेश है। दैनिक धर्मानुष्ठान की रीतियां, आख्यान, इतिहास के साथ इनमें हिंदू जाति की प्रतिष्ठा, गौरव, महत्व, वीरत्व, साहस, न्यायनिष्ठा, दया धर्म और दाक्षिण्य आदि का अनुपम वर्णन मिलता है। धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य और कर्म-अकर्म

आदि का विवेचन, मनुष्य जीवन की गति निश्चित करने का मूल-मंत्र और माप-दण्ड एवं उसके संबंध के बहुत ही सुन्दर और कला-पूर्ण और ज्ञान-पूर्ण सहस्रों दृष्टान्तों से पुराण समलंकृत हैं। पुराणों की संख्या, आकार, विषय, परम्परा, धर्म तत्त्व, कवित्व और लेखन-शैली आदि पर विचार करने से चकित होना पड़ता है। ज्ञान के भण्डार पुराणों के समान उपयोगी और बृहद्कार्य ग्रंथ संसार के किसी देश की किसी भी भाषा में नहीं लिखे गये हैं।

अठारह पुराणों की नामावली देखिये 'अढारपुराण' शब्द में।

प्रदूमन [प्रद्युम्न] ८४

प्रद्युम्न रुक्मिणी के गर्भ से उत्पन्न श्रीकृष्ण के पुत्र और कामदेव के अवतार थे। इनके जन्म के सातवें दिन शम्बरासुर सौरी में से इन्हे चुरा कर ले गया। शम्बर के कोई पुत्र नहीं था। इसलिये प्रद्युम्न को उसकी स्त्री मायावती के हाथ सौंप दिया। प्रद्युम्न जब जवान होगये तब मायावती इनसे पत्नी के समान भाव प्रकट करने लगी। यह देख प्रद्युम्न ने मायावती से कहा तुम मेरे में पुत्र भावना का त्याग कर इस प्रकार विपरीत व्यवहार क्यों कर रही हो? प्रद्युम्न को एकान्त में ले जा कर मायावती कहने लगी– नाथ! आप मेरे पुत्र नहीं हो, शम्बर आपका पिता नहीं है। आपका जन्म वृष्णिवश में हुआ है। भगवान् श्री कृष्ण आपके पिता और भगवती रुक्मिणीजी आपकी माता हैं। आपके जन्म के सातवे दिन सौरी-घर से शम्बर आपको चुरा कर ले आया था। आप तो कामदेव है और मैं हूं मायावती के रूप में आपकी पत्नी रति। प्रद्युम्न को भी अपने पूर्व जन्म की स्मृति हो आई। उन्होंने वैष्णवास्त्र से शम्बर को मारडाला और मायावती को लेकर द्वारका चले गये।

प्रसनीग्रभ, प्रसग्निय-ग्रम्भ [पृश्निगभ] १२,८३

१- माता पृश्नि के गर्भ से उत्पन्न भगवान विष्णु का एक अवतार पृश्निगर्भ कहलाया।

२- सुतपा प्रजापति की पत्नी पृश्नि जिसने देवकी के रूप में जन्म लेकर भगवान कृष्ण को जन्म दिया।

प्रह्ळाद [प्रह्लाद] २८,५६,८८,९५,१४८

यह कयाधु के गर्भ मे उत्पन्न दैत्यराज हिरण्यकशिपु का सबसे बडा पुत्र है। प्रह्लाद जब गर्भस्थ था तब नारदजी ने उसकी माता कयाधु को ज्ञानोपदेश किया था जिसके कारण गभ मे ही प्रह्लाद को भगवद्भक्ति के सस्कार जम गये और जन्म लिया तब ही से व्यापक परमात्मा–विष्णु की उपासना मे अनुरक्त रहने लगा। ज्यो-ज्यो बडा होता गया परब्रह्म की उपासना मे अधिक तल्लीनता उत्पन्न होने लगी। इससे हिरण्यकशिपु बहुत रुष्ट होगया और इसे अनेक प्रकार के कष्ट दिये। कष्टो मे उसे भगवान् की महान् शक्ति और सर्व व्यापकता का विश्वास अधिक तीव्रतर होने लग गया। अनेक प्रकार से समझाने, भय दिखाने और मरवाने के प्रयत्नो मे जब हिरण्यकशिपु असफल होगया, तब वह स्वय ज्योही अपने हाथो से खड्ग उठाकर मारने के लिये तैयार हुआ त्योही भगवान् ने एक खभ से नृसिह रूप से प्रगट होकर हिरण्यकशिपु को अपने नखो से चीर दिया। बालक प्रहलाद भगवान के इस भयकर रूप को देखकर भयातुर होगया। तब भगवान ने उसे ढाढस देते हुए वरदान मांगने को कहा। प्रहलाद ने प्रार्थना की कि हे प्रभु! एक तो आपका भयकर स्वरूप और

कहीं-कहीं सुर और असुर अर्थों में भी प्रयुक्त हुआ देखा जाता है। अतः इस युग्म शब्द से जाति, धर्म, सम्प्रदाय अथवा गुण आदि से सम्बन्धित परस्पर विरोधी वा अनैक्य भावनाओं को साथ-साथ व्यक्त करने की समान रूप से आवश्यकता, प्रथा व परम्परा रही हो, ऐसी अर्थ-ध्वनि प्रगट होती है। हमने इसी आधार से इस युग्म-शब्द का योग-रूढ़ात्मक अर्थ 'निवृति और प्रवृति मार्ग' किया है, जो प्रसंग को देखते अधिक संगत प्रतीत होता है।

बुद्ध, बोध [बुद्ध] १३,६५

बौद्धधर्म के प्रवर्तक भगवान् विष्णु का एक अवतार। इनके पिता का नाम शुद्धोदन और माता का नाम महामाया था। नेपाल की तराई के लुम्बिनी नामक नगर में इनका जन्म हुआ था। वैदिक मंत्रों द्वारा यज्ञ करने वाले एक शूद्र राजा की बुद्धि में मोह उत्पन्न करने और पाखंड को प्रवर्त करने के लिए यह उत्पन्न हुए थे। बौद्धों में जब पाखंड अमर्यादित होगया तब भगवान् आद्य शंकराचार्य ने दिग्विजय कर इन्हें चीन जापान आदि पड़ोसी देशों में खदेड़ दिया। पाखंड धर्म पुनः भारतवर्ष मे प्रवेश न कर सके इसलिए चारों दिशाओ में चार बड़े-बड़े धर्म केन्द्र (वदरिकाश्रम, जगन्नाथ, रामेश्वर और द्वारिका में) स्थापित किये।

भगीरथ ३१

सूर्यवंशी राजा दिलीप के पुत्र। अपने साठ सहस्र पूर्वजो को तारने के विचार से अल्पायु में ही ये तपस्या करने को निकल गये।

अनेक वर्षों तक घोर तपस्या करने के बाद ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर वर मागने को कहा। इन्होंने दो वर मागे– "(१) कपिल मुनि के शाप से भस्म हुए मेरे पूर्वजो का गगा की पावन धारा से उद्धार हो जाय और (२) मेरा वंश चले।" ब्रह्मा ने कहा कि गंगा की तीव्र धारा को भगवान् शंकर के अतिरिक्त कोई धारण नहीं कर सकेगा। भगीरथ ने फिर अपनी तपस्या से शकर भगवान् को प्रसन्न किया। भगवान शकर ने गगा को अपनी जटा मे धारण कर लिया। भगीरथ की प्रार्थना पर उसे जटा से निकाला। भगीरथ दिव्य रथ मे सवार होकर पथ प्रदर्शन का काय कर रहे थे, गगा उनके पीछे बहती जा रही थी। इसीलिये गगा का नाम 'भागीरथी' भी प्रसिद्ध हुआ।

भरत, ७८

स्वार्थ-त्याग और स्नेह की प्रत्यक्ष मूर्ति भरत श्रीराम के छोटे भाई और रानी कैकेयी की कोख से उत्पन्न महाराज दशरथ के तीसरे पुत्र हैं।

कैकेयी ने इनको राज्य दिलाने के लोभ से राम को वनवास दिलवाया, जिसके कारण पिता दशरथ का मरण हुआ। भरत को इन अप्रिय घटनाओं से असह्य वेदना हुई। वे राम को लौटा लाने के लिये उनके पीछे वन मे गये। पर राम ने वनवास की अवधि के पूव लौटना स्वीकार नही किया। भरत के अति आग्रह और निवेदन पर श्रीराम ने अपनी चरण-पादुकाए इन्हें दे दी। भरत ने इन चरण-पादुकाओ को श्रीराम के रूप में राज्य-सिंहासन पर प्रतिष्ठित कर दिया और उनके प्रतिनिधि रूप मे शत्रुघ्न को राज्यव्यवस्था सौंप दी। स्वय वनवासी वेश मे नंदीग्राम में रहकर भगवान श्रीराम का भजन करने लगे।

कहा जाता है कि भरत के बड़े पुत्र तक्ष ने अपने नाम से गांधार प्रदेश मे तक्ष नगर बसाया था । विश्व का सर्व प्रथम विश्वविद्यालय 'तक्षशिला' इसी स्थान पर बना था।

श्रीराम-वाणी

नाथ सपथ पितु चरण दुहाई
भयउ न भुवन भरत सम भाई

(रामचरित मानस)

भारदुआज [भरद्वाज] २४४

महर्षि वाल्मीकि के परम शिष्य भरद्वाज ऋषि प्रयाग में निवास करते थे। भगवान राम वन को जाते समय इनके दर्शन करने को और वन मे रहने के लिये स्थान और मार्ग आदि की पूछताछ के लिये इनके आश्रम मे गये थे।

ऋषि-वाणी

आजु सुफल तपु तीरथ त्यागू, आजु सुफल जप जोग विरागू।
सफल सकल सुभ साधन साजू, राम तुम्हहि अवलोकत आजू ॥

(रामचरित मानस)

मंदराचळ [मन्दराचल] ५७

मेरु की पूर्व दिशा की ओर आधार-भूत एक पर्वत। इस पर कभी-कभी शंकर भगवान आकर विराजते हैं। यही पर्वत समुद्र मंथन के समय मथनी बनाया गया था।

मच्छ [मत्स्य] १३

भगवान् विष्णु का पहला अवतार जिसने प्रलय काल मे हयग्रीव दैत्य से वेदों की रक्षा की और अपने सींग से पृथ्वी को साधकर उसकी रक्षा की।

सृष्टि के आदि विकास को समझने के लिये मत्स्यावतार की कथा बहुत ही महत्वपूर्ण वैज्ञानिक तथ्यो पर प्रकाश डालने वाली है। आधुनिक जीव-विज्ञान के अनुसार भी सृष्टि का प्रथम जीव मत्स्य ही माना गया है।

मधु २०

मधु, कैटभ दैत्य का भाई है। यह भगवान श्री कृष्ण द्वारा मारा गया था। मधुपुरी इसीने बसाई थी जो अब मथुरा कहलाती है।

मरीच [मारीच] ३५

मायावी राक्षस मारीच ताडका राक्षसी का पुत्र और रावण का मामा था। ताडका और सुबाहु को मारने के समय भगवान् राम के बाण के पख के धक्के से उडकर यह समुद्र मे जा गिरा था और लका मे जाकर रह गया।

सीता का हरण करने के लिये रावण के अत्याग्रह से यह स्वर्णमृग बना था और भगवान् राम के हाथ से मारा गया था।

महर्राण-मथ्थी [महार्णव-मंथन] २५, २६

समुद्र-मथन की कथा के लिये— 'विमोहिय रूप अगाध वणाय (मोहनी अवतार)' और 'धनतर' कथाए देखिये।

मुगत, मुगत्त, मुगत्ति [मुक्ति] २१०, २६०, २६१, ३६१.

जिस प्रकार इस देह मे रहा हुआ चैतन्य (जीव)— "यह देह मैं हूं, पुरुष मैं हूं, ब्राह्मण मैं हूं, शूद्र मैं हूं," ऐसा दृढ निश्चय कर लेता है; उसी प्रकार यह दृढ निश्चय हो जाय कि "मैं (बोलने वाला) ब्राह्मण नही हूं, शूद्र नहीं हूं, पुरुष नहीं हूं; किन्तु संग-रहित, सच्चिदानंद-स्वरूप, प्रकाश-रूप, सर्वान्तर्यामी और चिदाकाश-रूप हूं। ऐसा अपरोक्ष ज्ञानी पुरुष जीवन-मुक्त कहलाता है।

ब्रह्मैवाहम् 'मैं ब्रह्म हूं' इस प्रकार के ज्ञान से ज्ञानी पुरुष सभी कर्मों के बंधन से मुक्त हो जाता है।

मुचकंद [मुचुकुन्द] ४७

मुचुकुंद, अपने पिता महाराज मान्धाता के समान ही पराक्रमी होने के कारण देव-दैत्यो के युद्ध के समय देवता लोग इसे अपनी सहायता के लिये ले गये थे। युद्ध में अद्भुत वीरता से लड़कर इसने अनेक दानवों का संहार किया। देवताओं की विजय होने पर इसे वर मांगने को कहा गया। इसने कहा कि पृथ्वी पर मेरा राज्य और परिवार नष्ट हो जाने के कारण चित्त मे बहुत खेद रहने से नींद नहीं आ रही है और इधर इस युद्ध से श्रमित हो जाने के कारण मुझे शान्त-निद्रा की आवश्यकता है और उसमें से जो कोई मुझे जगा दे वह मेरी दृष्टि पड़ते ही भस्म हो जाय और दूसरा यह कि जगने के बाद तत्काल मुझे भगवान् के दर्शन हो जाय। देवताओं ने तथास्तु कहा। यह जाकर एक पर्वत की कंदरा में सोगया।

मथुरा विजय करके जब कालयवन श्री कृष्ण का पीछा करता हुआ उस कंदरा में पहुंचा और ज्यों ही उसने सोते हुए मुचुकुन्द को श्रीकृष्ण समझकर एक लात प्रहार कर दी, त्यों ही मुचुकुन्द की आंख खुली और सामने खड़े कालयवन को देखा और वह भस्म हो गया। उसी समय मुचुकुन्द की खाट के नीचे से निकल कर श्रीकृष्ण ने उसे दर्शन भी दे दिये।

म्रगकासव [मृगकशिपु] ५६

हिरण्यकशिपु कश्यप ऋषि तथा अदिति का पुत्र एक दैत्यराज था। कठोर तपस्या द्वारा ब्रह्मा से अभय प्राप्त कर इसने देवताओं को कष्ट देना आरम्भ किया और स्वर्ग पर भी अपना अधिकार स्थापित कर लिया। भगवान् विष्णु के प्रति इसके हृदय में बड़ा द्वेष था। इसीकी प्रतिक्रिया स्वरूप इसके पुत्र प्रह्लाद में उनके प्रति भक्ति की भावना का उदय हुआ था। प्रह्लाद की इस प्रवृत्ति को देखकर इसने कितनी ही बार उसका वध करवाने के प्रयत्न किये। अन्त में भगवान् विष्णु ने नृसिंह रूप धारण करके हिरण्यकशिपु का वध किया और अपने भक्त प्रह्लाद की रक्षा की।

रघुरांम [रघु+राम] १३

अयोध्या के इक्ष्वाकुवंशी महाराज दशरथ के पुत्र भगवान् विष्णु के अवतार मर्यादा-पुरुषोत्तम श्रीराम। इक्ष्वाकुवंश में महाराजा रघु बहुत प्रसिद्ध हो गये हैं अत यह रघुवंश भी कहलाता है। रघुराम से तात्पर्य है रघुवंश में उत्पन्न भगवान् श्रीराम।

उद्धार की प्रार्थना की। ऋषि ने उसे सर्वव्यापी ब्रह्मरूप राम का नाम जपने का आदेश दिया। ऋषि के वचनों में अत्यन्त श्रद्धा और विश्वास करके एक ही स्थान पर बहुत समय तक अटल रूप से राम नाम का जप करते रहने से इनके ऊपर वल्मीक (दीमक और उसकी मिट्टी) का ढेर लग गया जिससे इनका नाम 'वाल्मीकि' पड़ गया। आगे जाकर यही वाल्मीकि बड़े तपस्वी और तत्ववेत्ता महर्षि सिद्ध हुए। एक शिकारी के द्वारा मिथुन-रत क्रौंच पक्षी का वध कर लेने पर नारी-क्रौंच के अतिशय दुख को देखकर इनके कोमल हृदय में उत्पन्न अपार दया ने इन्हें "आदि-महाकवि वाल्मीकि" बना दिया। जिस परब्रह्म राम के नाम से ये पावन बने उस राम के नाम पर संस्कृत में 'शतकोटि काव्य' की महर्षि वाल्मीकि ने रचना की। संसार का प्रथम महाकाव्य होने के कारण यह महाकाव्य 'आदि-महाकाव्य वाल्मीकि रामायण' और उसके रचयिता महर्षि वाल्मीकि 'आदि-महाकवि' कहलाये।

बांमन [वामन] १३

त्रेतायुग में, कश्यप ऋषि से अदिति के गर्भ से उत्पन्न हुआ भगवान् विष्णु का एक अवतार। विरोचन दैत्य का पुत्र बलि, इन्द्र पद प्राप्ति के लिए जब सौवां यज्ञ कर रहा था तब इन्द्र की रक्षा के लिए भगवान् ने वामन का रूप धारण करके उससे तीन पैंड पृथ्वी मांगी। जब राजा बलि ने पृथ्वी के दान का संकल्प लिया तब भगवान् वामन ने विराट रूप धारण करके एक पैंड से समस्त पृथ्वी, दूसरे से आकाश को नाप लिया और तीसरा पैंड बलि के शरीर पर रखकर उसको पाताल में दबा दिया।

वाराह १३, ८२

विष्णु के अवतारो मे से द्वितीय। हिरण्याक्ष दैत्य जब पृथ्वी को लेकर पाताल को भागा तभी पृथ्वी का उद्धार करने और इसका वध करने के लिए वाराह अवतार हुआ।

वालखिला [वालखिल्य] २४५

गो-क्षुर के खड्डे मे रहने वाला एक महान् सूक्ष्म आकृतिवाला ऋषियो का समूह।

वाळि [वालि] ४०

वालि किष्किन्ध देश की पपा नगरी का महा पराक्रमी वानर राजा था। यह अगद का पिता और सुग्रीव का बडा भाई था। इसको वरदान था कि इसके सम्मुख युद्ध करने वाले का आधा बल इसमे प्रवेश कर जाता था। इसलिये वालि सुग्रीव की शत्रुता मे भगवान राम ने ताल वृक्षों की ओट मे खडे रहकर बालि को मारा था। वालि ने रावण का काख मे दबा दिया था। इसने दुदुभि और मायावि जैसे बलशाली राक्षसों को मारा था।

विमोहिय रूप अगाध वणाय (मोहिनी अवतार) २४

१- शिवजी ने एक समय भस्म मे से एक असुर उत्पन्न किया और उसे वरदान दिया कि जिसके ऊपर वह हाथ फेरेगा, वह भस्म हो जायगा। एक दिन शिवजी को ही भस्म करके पार्वती को प्राप्त करने की दुर्बुद्धि से शिवजी के ऊपर इसने हाथ फेरने का विचार किया। शिवजी डर के मारे भागे। असुर ने इनका पीछा किया।

उस समय रास्ते मे भगवान् विष्णु मोहिनी के रूप से प्रगट हुए और असुर से कहा कि 'मैं तुमारे साथ चलने को तैयार हूँ। मुझे नृत्य का बहुत शौक है, तुम यहां नाचो, फिर मैं तुमारे साथ चल दूंगी।' असुर ने नाचते-नाचते अपने सिर पर हाथ फिराया और वही भस्म होगया। 'जटाधर काज दईत जळाय' (२४) इस प्रकार भगवान् विष्णु ने मोहिनी रूप धारण करके भूत-भावन भोले शंकर के कष्ट को दूर किया।

२. शुम्भ तथा निशुम्भ नामक दो राक्षसो के वध के लिये भगवान् विष्णु ने मोहिनी अवतार धारण किया। दोनों राक्षस स्त्री को देखकर मोहित हो गये और उसको प्राप्त करने के लिये आपस में लड़ मरे।

३- समुद्र मंथन से जो अमृत निकला, उसे प्राप्त करने के लिये सुरों और असुरों में भयंकर कलह उत्पन्न हुआ। दैत्यों ने अमृत जीत लिया। देवता भगवान् विष्णु की शरण में गये। भगवान् विष्णु ने मोहिनी का अनुपम स्त्री रूप धारण किया और दैत्यो को उसकी प्राप्ति के लिये परस्पर लडवा कर उनका नाश किया कौर अमृत घट देवताओं को दिलवाया।

विसामित, विस्वामित [विश्वामित्र] ३४, २४५

ये पुरुवंशी महाराज गाधि के पुत्र थे। इन्होंने वैदिक ऋचाओं का निर्माण किया था। इनकी ऋचाएं ऋग्वेद के तृतीय मंडल में मिलती हैं। अपने यज्ञ की रक्षार्थ महाराज दशरथ से राम और लक्ष्मण दोनो भाइयों को मांग लाये। यज्ञ विधान-सफलता से संपूर्ण

हो जाने के बाद महर्षि इन्हें महाराज जनक के यहां धनुष-स्वयंवर में ले गये थे। भगवान् शंकर के कठिन धनुष को उस स्वयंवर में कोई उठा भी नहीं सका था, तब विश्वामित्र की आज्ञा पाकर राम ने उसे सहज ही में तोड़ डाला था। इनकी घोर तपस्या से इन्द्र भी विचलित हो गये थे और इस भय से कि कहीं विशेष शक्ति का संग्रह कर यह मुझसे इन्द्रत्व न छीन लें, मेनका को इनकी तपस्या भंग करने के लिए भेजा। विश्वामित्र का ध्यान भंग हुआ और मेनका के प्रति वे आकर्षित हुए। उसी के फल-स्वरूप शकुन्तला का जन्म हुआ। इनको अपने इस कृत्य से इतनी ग्लानि हुई कि वे हिमालय में तपस्या करने को चले गये।

अन्त में अपनी घोर तपस्या के फल-स्वरूप ये 'राजर्षि' से 'ब्रह्म ऋषि' बन गये थे।

आर्ष-वाणी

सत्येनार्कः प्रतपति सत्ये तिष्ठति मेदिनी।
सत्यं चोक्तं परो धर्मः स्वर्गः सत्ये प्रतिष्ठितः॥
(महर्षि विश्वामित्र)

चोठळ [विठ्ठल] ८२

दक्षिण के एक प्रसिद्ध देवता जो विष्णु के अवतार माने जाते हैं। कहा जाता है कि पंढरपुर के पुण्डरीक नामक ब्राह्मण ने विष्णु का बहुत कुछ ध्यान भजन किया था, उनकी मूर्ति वहीं स्थापित है और विष्णु के प्रतीक के रूप में पूजी जाती है।

वैकुंठ १८६

रैवत मन्वन्तर में भगवान् विष्णु का एक अवतार वैकुंठ नाम का हुआ था। सत्य-लोक में जहां वैकुंठ भगवान् निवास करते हैं उसका नाम ही वैकुंठ या वैकुंठ लोक कहलाया।

व्यास १४

सत्यवती नामक धीवर की कन्या में पराशर ऋषि से उत्पन्न भगवान् श्री वेद व्यास। भागवत में ये विष्णु के अवतार माने गये है। द्वीप में जन्म होने के कारण इनका नाम कृष्ण-द्वैपायन भी है। ये महाभारत, पुराण और वेदान्त-दर्शन के रचयिता हैं।

ब्रखभ [वृषभ, ऋषभ] १२

योग और ज्ञान के प्रवर्तक नाभिराजा के पुत्र भगवान् श्री ऋषभदेव। ये विष्णु के अंश संभूत अवतार थे। इन्होंने भारत-वर्ष के पश्चिम भाग मे जैनधर्म का प्रचार किया। इसलिये जैनो के प्रथम तीर्थंकर और आदीश्वर कहे जाते है।

ब्रिंदावन [वृन्दावन] ७४, २२७

वृन्दावन मथुरा से ६ मील उत्तर मे है। यह भगवान् श्रीकृष्ण की निकुंज-लीलाओ की प्रधान रंग-स्थली है। महाराज केदार की पुत्री वृन्दा ने इसी स्थान पर श्रीकृष्ण को पति रूप मे पाने के लिये तपस्या की थी। वृन्दा की तपोभूमि होने के कारण ही इसे वृन्दावन कहा जाता है। श्रीकृष्ण ने यही यमुना-तट पर कालिय-ह्रद में

धान्तिय-नाग को नाथा था। यहा भगवान् श्रीकृष्ण की विविध लीलाओं के नामों पर अनेकों मन्दिर बने हुए हैं। श्री गोविन्ददेवजी और श्री गोकुलनाथजी के विग्रह औरंगजेब के समय में मन्दिरों पर यवनों का आक्रमण होने के कारण वृन्दावन से जयपुर लाये गये थे, जहा राजमहलों के सम्मुख इनके भव्य मन्दिर बने हुए हैं।

लखनऊ के नगर-सेठ लाला कुन्दनलालजी फुन्दनलालजी ने अपनी अपार सम्पत्ति को त्याग कर वृन्दावन में विरक्त की भांति रहकर शाह-बिहारीजी की भक्ति की थी। 'ललित किशोरी' एवं 'ललित माधुरी' के नाम से जिनके सुमधुर पद साहित्य-ससार और भक्तजनों में प्रसिद्ध हैं।

श्रीरंग, सिरिरंग [श्रीरंग] ११२,२२८

दक्षिण भारत का एक प्रसिद्ध तीर्थ जो कावेरी के मध्य एक द्वीप के रूप में स्थित है। कावेरी की दो धाराओं में यह द्वीप १७ मील लम्बा और तीन मील चौडा है। त्रिचिरापल्ली नगर रेलवे स्टेशन है जहा से श्री रंगम् को बसों से जाना होता है। तीर्थ के निकट भी श्रीरंगम् नाम का स्टेशन है। श्रीरंगजी के मन्दिर का विस्तार २९६ बीघे का कहा जाता है। मन्दिर के चारों ओर सात प्राकार बने हुए हैं। चौथे घेरे में एक मंडप एक सहस्र स्तम्भों का बना हुआ है। निज मंदिर में भगवान् विष्णु (श्रीरंग) की शेष शय्या पर शयन किये हुए श्याम वर्ण की विशाल चतुर्भुज-मूर्ति दक्षिणाभिमुख स्थित है। इस मन्दिर के विशाल प्रांगण में अनेकों बडे बडे मंदिर बने हुए हैं। इतना विस्तार वाला मन्दिर भारत में दूसरा नहीं है। श्री लक्ष्मीजी के मंदिर के

सामने तमिल के भक्त-महाकवि कम्ब के नाम से कम्ब-मण्डप बना हुआ है, जहां उन्होंने अपनी कम्ब-रामायण की रचना करके भक्तजनों को सुनाया था।

मथुरा, वृन्दावन, अयोध्या और पुष्कर आदि तीर्थों में भी श्रीरंगजी के बड़े-बड़े मन्दिर बने हुए हैं।

सतरूघरा [शत्रुघ्न] ७८

सुमित्रा रानी से उत्पन्न महाराज दशरथ का चौथा पुत्र। राम के वनगमन के अनन्तर भरत नन्दी ग्राम में रहने लगे। अत: श्रीराम के नाम पर इन्होंने ही चौदह वर्ष तक अयोध्या का राज्य किया। इनका विवाह कुशध्वज की पुत्री श्रुतकीर्ति से हुआ था। इनके सुबाहु और शत्रुघाती दो पुत्र थे।

रावण को मारकर भगवान् राम अयोध्या वापिस पधारे तब एक समय कई ऋषि राम के पास आये और उन्होंने लवणासुर दैत्य के अत्याचारों का वर्णन किया। भगवान् राम की आज्ञा लेकर इन्होंने लवणासुर का वध कर डाला और उस देश का नाम 'शूरसेन' रखा। मधुपुरी नाम की नगरी का नाम बदल कर 'मथुरा' कर दिया और उसे अपनी राजधानी बना ली।

पश्चात् जब इन्हें पता चला कि भगवान् राम स्वधाम पधारने वाले हैं तब यह भी अयोध्या चले आये और उन्हीं के साथ परमगति को प्राप्त हुए।

सत्रूपा [शतरूपा] १६२

स्वायभू मनु की स्त्री शतरूपा ब्रह्मा के बायें अग मे उत्पन्न हुई थी। इसी का दूसरा नाम सरस्वती कहा जाता है। इनकी पुत्री देवहूति ने इनको आत्मतत्त्वोपदेश किया था।

सनक्क [सनक] १७

ब्रह्मा के चार मानस पुत्रों में से एक सनक। ये परम ज्ञानी ब्रह्मनिष्ठ और भगवान् विष्णु के सभासद् हैं

सनातन १७

ब्रह्मा के एक मानस पुत्र। सनातन को सनत्सुजात भी कहते हैं। धृतराष्ट्र को इन्होंने ही धर्मोपदेश किया था। इनके तीन भाई सनक सनद और सनत्कुमार और हैं और ये चारों ही ब्रह्मा के मानस पुत्र हैं और ब्रह्मनिष्ठ हैं एव सर्वत्र बाल्यावस्था प्राप्त हैं।

सयभुव [स्वायंभुव] १६२

ब्रह्मा के दाहिने अग से उत्पन्न स्वायभू मनु चौदह मनुओ मे पहिले मनु हैं जो मानव जाति के पिता हैं। ब्रह्मा के बायें अग से उत्पन्न शतरूपा इनकी स्त्री है।

सह इन्द्री, [सकल इन्द्रिय] ११२

पाच ज्ञानेन्द्रिय और पांच कर्मेन्द्रिय।

श्रोत्र त्वक् चक्षु रसना घ्राणम् इति पचज्ञानेन्द्रियाणि।

कान, नाक, आख, जीभ और त्वचा—ये पाच ज्ञानेन्द्रिय हैं।

१. स्रवण (१०१, ३३२) श्रोतस्य विषयः शब्दग्रहणम् ।

कान का विषय सुनना ।

२. नासा-रंध (१०२) घ्राणस्य विषयो गन्धग्रहणम् ।

नाक का विषय सूंघना ।

३. नयन, लोचण (१०२, ३२८, ३३२) चक्षुषो विषयो रूपग्रहणम् ।

आंख का विषय देखना ।

४. जीभ, रसणा (१०४, ३२८, ३२६, ३३२)

रसनाया विषयो रसग्रहणम् ।

जीभ का विषय स्वाद ।

५. तुचा (११०) त्वचो विषयः स्पर्शग्रहणम् ।

चमड़ी का विषय स्पर्श ।

वाक् पाणि पादपायुपस्थानीति पंचकर्मेन्द्रियाणि ।

वाणी, हाथ, पांव, गुदा और उपस्थ —ये पाच कर्मेन्द्रिय हैं ।

१. वांणी, वयणां (१०३, २३२) वाचो विषयो भाषणम् ।

वाणी का विषय बोलना ।

२. कर (१०७) पाण्योर्विषयो वस्तुग्रहणम् ।

हाथ का विषय वस्तु को ग्रहण करना ।

३. चरण (१०६) पादयोर्विषयो गमनम् ।

पांव का विषय चलना ।

४. गुदा । पायोर्विषयो मलत्यागः ।

गुदा का विषय मलत्याग ।

५. उपस्थ । उपस्थस्य विषय आनन्द इति ।

उपस्थ का विषय आनन्द और मूत्रत्याग ।

(हरिरस मे गुदा और उपस्थ का उल्लेख नहीं किया गया है ।)

सातूं-रिख [सप्त ऋषि] २४१

गौतम, भारद्वाज विश्वामित्र, जमदग्नि, वसिष्ठ, कश्यप और अत्रि– इन ऋषियों का मण्डल या समूह सप्तर्षि कहलाता है।

सामीप (सामीप्य) २६०

मुक्ति के चार प्रकारों में से एक। सामीप्य-मुक्ति वह है जिसमें मुक्त जीव का भगवान् के समीप पहुँच जाना माना जाता है।

सायुज्य २६०

मुक्ति के चार प्रकारों में से एक। सायुज्य-मुक्ति वह है जिसमें जीवात्मा परमात्मा में लीन हो जाता है।

सालोक (सालोक्य) २६०

मुक्ति के चार प्रकारों में से एक। सालोक्य-मुक्ति वह है जिसमें मुक्त जीव भगवान् के साथ एक लोक में निवास करता है।

सावेव [सावयव] २६०

सावयव-मुक्ति का दूसरा नाम है सारूप्य-मुक्ति। मुक्ति के चार प्रकारों में से यह एक प्रकार है। सारूप्य-मुक्ति वह है जिसमें भक्त अपने भगवान् का रूप प्राप्त कर लेता है।

सिदज्ज [स्वेदज] २६९

जीवों की उत्पत्ति के (अण्डज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज) चार भेदों में से एक। पसीने से उत्पन्न होने वाले जू, खटमल आदि कीट स्वेदज कहलाते हैं। इन्हें ऊष्मज भी कहते हैं।

सिसपाळ [शिशुपाल] ८५

शिशुपाल, चेदिराज दमघोष के पुत्र और श्रीकृष्ण के मौसेरे भाई थे। जन्म के समय इसके तीन नेत्र और चार हाथ थे। शिशुपाल की माता श्रुतश्रवा को जब यह मालूम होगया कि उसके पुत्र की मृत्यु श्रीकृष्ण के हाथ से होगी तो उसने शिशुपाल के १०० अपराध क्षमा कर देने के लिए श्रीकृष्ण से प्रतिज्ञा करवा ली। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ मे जब शिशुपाल ने श्रीकृष्ण की सौ से अधिक बार निन्दा की और गालिया दी तब कृष्ण ने उसे मार दिया।

सुकदेव [शुकदेव] ५२

महर्षि शुकदेव कृष्ण-द्वैपायन भगवान् व्यास के पुत्र हैं। भगवान् शकर जब पार्वती को अमर होने के लिए विष्णु-सहस्र नाम का उपदेश दे रहे थे उस समय उस कथा को एक शुक भी सुन रहा था। शिव को जब पता चला तो उन्होने उसका पीछा किया। उसी समय व्यास पत्नी अपने आंगन मे खडी अंगडाई ले रही थी। उनको देख शुक शरीर छोड़ उनके पेट मे चले गये और १२ वर्ष तक वही रहे। भगवान् व्यास देव महाभारत तथा गीता आदि अपनी पत्नी को सुनाते थे। इस प्रकार गर्भ मे ही शुक तत्त्वज्ञानी हुए। भगवान् ने इन्हें गर्भ में ही वचन दिया कि ससार की माया तुम्हे नही व्यापेगी। अल्पावस्था में ही पूर्ण तत्वज्ञानी होने के कारण ऋषियो मे ये अग्रणी गिने जाते है।

इन्होने ही महाराज परीक्षित् को भागवत की कथा सुनाई थी।

सुग्रीव ४०

यह सूय के पुत्र, प्रसिद्ध वानर वीर बालि के अनुज, भगवान् राम के मित्र एव भक्त थे। सीताहरण के बाद श्रीराम ने सुग्रीव से मित्रता की। बालि का वध करके किष्किधा का राज इन्हे दिया। राम-रावण युद्ध मे इन्होने भगवान् राम की बडी सहायता की थी।

सुदामा ३३६

सुदामा भगवान् श्री कृष्ण और बलराम के सहपाठी थे। दीन होने के कारण यह मैले-फटे वस्त्रों मे रहा करते थे इसलिये गुरु सादीपनि के यहा इनके सहपाठी इन्हे कुचैल कहा करते थे। दरिद्रता से बहुत दुखी होने पर इनकी स्त्री ने इन्हें दरिद्रता निवारणार्थ श्री कृष्ण के पास द्वारका को भेजा था। वहा जाने पर भगवान् ने इनका अपूर्व सम्मान किया, पर सकोचवश इन्होने मागा कुछ नहीं। पर भगवान ने इनके अपने यहा आने के आशय को समझ कर इनको विदा करने के पूर्व ही अपार सम्पत्ति इनके यहा भेजकर अपने समान वैभवशाली बना दिया।

महात्मा गाधी की जन्मभूमि पोरबदर ही सुदामाजी का निवासस्थान था। इसे सुदामापुरी भी कहा जाता है।

सुपर्णखा [शूर्पणखा] ३८

यह रावण की बहिन थी। इसके नख सूप की भांति बड़े बड़े होने के कारण इसका नाम शूर्पणखा रखा गया था। जिस समय भगवान् राम, सीता तथा लक्ष्मण के साथ वनवास कर रहे थे, यह राम के प्रति आकर्षित हो गई थी और इसने उनके सम्मुख एक सुन्दरी के रूप में उपस्थित होकर विवाह का प्रस्ताव रखा। राम के अस्वीकार करने पर यह लक्ष्मण के पास गई, किन्तु उन्होने फिर इसे राम के पास ही भेज दिया। अंत में भगवान् राम ने लक्ष्मण से इसके नाक कान कटवा दिये। अपनी यह दुर्दशा करवाकर यह खर दूषण के पास गई। राम से जब ये दोनो राक्षस लडने के लिए आये तो उन्होंने इनका वध कर डाला। शूर्पणखा तब अपने भाई रावण के पास रोती हुई गई और अपनी दुर्दशा और सीता के सौन्दर्य का वर्णन उसके सम्मुख किया। इसीलिये रावण ने क्रोधित होकर सीता का हरण किया।

सुबाहु ३५

सीता हरण के समय स्वर्ण मृग का रूप धारण करने वाले मारीच का यह भाई और रावण का यह मामा था। महर्षि विश्वामित्र जब जब यज्ञ करने लगते तब यह अपने भाई मारीच और अपनी माता ताड़का के साथ आकर यज्ञ विध्वंस कर देते थे। विश्वामित्र ऋषि यज्ञ की रक्षार्थ महाराज दशरथ से राम और लक्ष्मण को मांग कर ला रहे थे तब मार्ग में ही ताड़का ने इन पर आक्रमण कर दिया। भगवान राम ने उसे वही मार दिया। बादमे यज्ञ मे विघ्न करते समय सुबाहु भी राम के हाथ से मारा गया।

सुरसत्ती, सरसति [सरस्वती] १, १६०

वेदो में सरस्वती का नदी और वाणी (ज्ञान-विज्ञान) की अधिष्ठात्री वाग्देवी दोनो रूपों मे उल्लेख है। ब्रह्मा की ज्ञानशक्ति होने के कारण ब्रह्मा की पुत्री और पत्नी, दोनो रूपों में ये मान्य हैं। अत बाला, बीज-मन्त्र और ब्रह्माणी भी कही जाती हैं। सस्कृत भाषा और देवनागरी अक्षरो का निर्माण इन्होने ही किया था। गायत्री और सावित्री इनके अन्य नाम हैं। नदी के रूप मे गगा की भाति ही सरस्वती की पूजा होती हैं। इसकी एक शाखा गुजरात में होकर कच्छ के रण मे मिलती है। गया में फल्गु के तट पर जिस प्रकार पितृश्राद्ध सम्पन्न किया जाता है उसी प्रकार सरस्वती के तट पर सिद्धपुर में मातृश्राद्ध का पिण्डदान किया जाता है, अत इस क्षेत्र को मातृगया तीर्थ-क्षेत्र और सरस्वती को मातृगगा भी कहते हैं।

सूक्षम-देह [सूक्ष्म-देह] १७०

जो इकट्ठे नहीं हुए हुए पच महाभूतो और कर्मों द्वारा उत्पन्न है, और जो सुख दुखादि भोग भोगने का साधन है।

पाच ज्ञानेन्द्रिय पांच कर्मेन्द्रिय, पाच प्राण एक मन और एक बुद्धि— इन सत्रह तत्वों वाला सूक्ष्म-शरीर है।

अपचीकृत पच महाभूतै कृत सत् कर्मजन्य,
सुख दुखादि भोग साधनम् ।
पचज्ञानेन्द्रियाणि पचकर्मेन्द्रियाणि पचप्राणादय,
मनश्चैक बुद्धिश्चैका एव सप्तदशकलाभिः
सह यत्तिष्ठति तत्सूक्ष्मशरीरम् ॥

(तत्व बोध)

सेतबंध-रांमेंस [सेतुबन्ध-रामेश] ३४६

चार दिशाओं के चार प्रमुख धामों में सेतुबंध-रामेश्वर दक्षिण-भारत का एक प्रसिद्ध धाम है। यह एक द्वीप में स्थित है, जो रामेश्वर-द्वीप कहलाता है। यह द्वीप लगभग ११ मील लंबा और ७ मील चौड़ा है। भगवान् श्री राम ने लंका पर चढाई करते समय इस शिव-लिंग की स्थापना की और भारत और लंका के बीच की समुद्र-खाड़ी पर विशाल सेतु का निर्माण किया था। श्री रामेश्वर महादेव की गणना द्वादश ज्योतिर्लिंगो में है। भगवान् रामेश्वर का मंदिर बहुत विशाल और वास्तु-कला का अनुपम आदर्श है। मंदिर के विशाल परकोटे और आंगन में अनेकों देवताओं के बड़े-बड़े मंदिर, २२ कुंएं और अनेकों कुंड बने हुए हैं। इन सभी कुंओं का पानी मीठा है, जबकि बाहर के कुओ का खारा है। रामेश्वर द्वीप मे भी अनेकों तीर्थ हैं।

इस धाम से संबंधित शंकराचार्य-पीठ का नाम शृंगेरी-पीठ है, जो तुंगा नदी के तटपर शृंगेरी स्थान में स्थित है।

हंस १२

एक बार सत्यलोक में सनकादिको ने ब्रह्मा से अध्यात्म संबंधी कुछ प्रश्न किये थे। उस समय ब्रह्मदेव किसी अन्य कार्य में व्यस्त थे, इसलिये यथा-संतोष उत्तर नही दे पाये। सनकादिको की तीव्र जिज्ञासा को देखकर भगवान् विष्णु और शंकर हंस का रूप धारण करके उनके पास पहुंचे और उनके संशय का निवारण किया। हंसावतार भगवान् विष्णु का चौदहवां अवतार माना जाता है।

हनूमान [हनुमान] ३६

अजना के गभ से उत्पन्न पवन के ये महावीर पुत्र थे। सीता था लका में रावण के यहा अशोक वाटिका में वदिनी होने का पता इन्होने ही लका मे पहुचकर लगाया था। लका में ये मेघनाद के द्वारा बदी हुए, तब रावण की आज्ञा से जब इनकी पूछ में रुई लपेट कर आग लगादी गई तो अपनी जलती हुई पूछ से इन्होने लका-दहन किया था। राम-रावण युद्ध मे मेघनाद के शक्ति प्रहार से जब लक्ष्मण मूर्छित हो गये थे तब ये ही एक रात में हिमालय के सजीवनी औषधि वाले द्रोणगिरि शिखर को उठा कर ले आये थे। ये भगवान् राम के अनन्य भक्त थे। रावण-वध तथा सीता की मुक्ति के बाद ये भी पुष्पक विमान मे बैठ कर अयोध्या आये थे। भगवान् राम ने जब अश्वमेघ यज्ञ किया था तब ये भी अश्व के साथ देश-विदेशों मे गये थे, वहा लव-कुश के सम्मुख लक्ष्मण के साथ इन्हे भी युद्ध में पराजित होना पडा था। अपनी अनन्य सेवा से इन्होने श्रीराम को अत्यन्त प्रसन्न किया। श्रीराम की भी इनके ऊपर इतनी अधिक ममता थी कि श्रीराम ने इनको ब्रह्म-विद्या की शिक्षा दी और इसमे इनको निपुण करके जिज्ञासुजनों को उपदेश करने का अधिकारी बनाया। हनुमानजी ने भगवान राम की प्रत्यक्ष लीलाओं को देख कर हनुमन्नाटक नामक रामचरित की रचना की है।

हयग्रीव, हयानन १२, ५५

(१) भगवान विष्णु के एक अवतार जो ब्रह्मा के यज्ञ में उत्पन्न हुए और जिन्होंने स्वास के द्वारा वेदों की वाणी उत्पन्न की।

(२) हयग्रीव नाम का एक दैत्य जिसने देवी को प्रसन्न करके वरदान प्राप्त किया था कि उसकी मृत्यु उसके जैसे और उसके नाम के मनुष्य के हाथ से ही हो। इसने जब बड़ा अनाचार करना शुरु किया, तब भगवान विष्णु ने इसी नाम से अवतार लेकर के इसको मारा था। इस अवतार के लेने का यह दूसरा कारण है।

हिरणाक्ख, हिरणाख [हिरण्याक्ष] २३, २७, ५४

हिरण्यकश्यपु का भाई। कश्यप की स्त्री दिति इसकी माता थी। पूर्व जन्म मे दोनों भाई भगवान् विष्णु के द्वारपाल जय और विजय थे। सनत्कुमारो के शाप से राक्षस हुए। हिरण्याक्ष पृथ्वी को लेकर पाताल की ओर भागा जा रहा था तब भगवान् विष्णु ने वाराह अवतार लेकर इसका वध किया और पृथ्वी का उद्धार किया।

॥ ॐ शिव

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	छंद	अशुद्ध	शुद्ध
६	२	६	धरणीश्वर	धरणीधर
६	३		विछडे	विछुडे
६	१४	११	कथित	कथिस
८	१०	१५	लाह	लहि
१०	१६	२१	देत	दैत
१३	४	२५	महाराण	
१६	५		होगये । मोर	होगये मोर
१६	अंतिम	३८	पबाल	पबाळ
१७	२	३८	तदो	तदौ
१७	१५	४०	प्रद	जद
१७	२०	४१	पडयो	पड्यो
१९	१६	४४	गानव	मानव
२०	१६		निमित्ति बनाया	निमित्त बनाया ।
३३	अंतिम	८०	विघूमण	विघूसण
३४	१३	८२	नार	नाह
३५	१२	८४	प्रद्युम्न	प्रद्युम्न
३६	३	८६	प्रतरव्य	प्रतवस्त

पृष्ठ	पंक्ति	छंद	अशुद्ध	शुद्ध
४२	२	१०१	सुण	सुणी
×	×	१०५	तुम्ह	तूम्ह
४४	५	१०७	तोरा	तोरो
५२	२२	१२४	थंमण	थंभण
५४	५	१२५	(अविद्यायें,	(अविद्याएं)
५५	६	१२८	कुल	कुळ
५५	१८	१३०	मांग	मांय
५५	१९	१३०	हे।	हैं।
५६	१७	१३४	वुज्भव्व	वुज्झव्व
६५	१२	१५८	ओर	और
७१	१३	१७६	जोवो को	जीवों की
७४	१९	×	सतों की	संतो को
७५	१	१८५	सपन्नो	सुपन्नो
७८	६	१८९	१७९	१८९
७९	६	१९०	वषां	वर्पा
८५	१८	२१३	धीरां	धीरां
९३	१०	२३३	साहव वलिभद्र	साहव-वळिभद्र
९३	अंतिम	२३३	हा जायेगा	हो जायगा
९८	१६	२४५	गरुड	गरुड़
१०२	३	२५४	नल और कूबर	नलकूवर
१०२	९	२५५	इके	इकै

पृष्ठ	पंक्ति	छंद	अशुद्ध	शुद्ध
१०२	१०	२५५	अर्धेखिण	अर्धं खिरण
१०२	१४		आकाश को	आकाश (स्वर्ग) को
१०२	१८	२५६	मूम्क	मूम्क
१०९	९-१०	२६२	आप कल्याण से रहित है	आप निश्कल (=अकलनीय -अगम्य) हैं,
१११	१६	२६८	ओत-प्रोत हुए हैं।	ओत-प्रोत हुए हुए हैं।
१२२	११	२९१	जडयो	जड्यो
१२४	१८	२९६	तेज प्रचण्ड	तेज-प्रपुंज
१२९	१८	३०९	सामुहो	सामुहा
१३५	१२	३२४	चोतार	चौतार
१३५	१६	३२५	अनरस	अन रस
१३६	८	३२७	घ`या	धरया
१३९	१	३३५	अपराघो	अपराधी
१४३	२	३४९	कहे	कहै
१४३	६	३५०	ऊ घे	ऊर्धं
१४४	५	३५१	रूपा	रूपी
१४६	८	३५७	पाप ह	पाप सह
१४६	१०	३५७	भा	भी
१४८	७	प्रशस्ति	स० १८०७	स० १७०७

परिशिष्ट १

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	८	अरवील	अखील
७	१०	अलंड	अखंड
९	१८	विसारिये	विसरिये
१०	१८	हो	हों
१२	१२	महा तम	महातम
१४	८	विरच	विरंच
१५	अंतिम	हां	हो

परिशिष्ट २

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१	४	३४७	३४८
१	२	८	१४	१४१
१	२	९	धाने वाला	धोनेवाला
२	१	१	२७५	२७४
२	१	४	२४१	३४१
२	१	१०	(अत)	अत ( )
२	२	२	धाये	माथे
२	२	९	अन्वोन्व	अन्योन्य
[illegible]	१	२१	[illegible]	
३	२	५	२१ की संख्या जोड़ दें ।	
३	२	अंतिम	ओर	और

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	१	११	मुक्को	मुझको
४	२	२७	छोटा	छोटा
५	१	२७	अपने आप	अपने से
५	२	६	अलम	आलम
६	१	अंतिम	उडुगण	उडुगण
६	२	२४	३०२	३०३
७	२	६	३१३	३१४
७	२	१६	करने से हो	करने से हो
८	१	४	२३०	२३१
८	१	१७	करण-सधार	करण-सधार
८	२	४	१०	१०२
८	२	१८	१८८	१८६
६	१	१२	२३७	२३८
६	२	२५	१८८	१८६
१०	१	१२	३२५	३२६
१०	२	६	३३८	३३६
११	१	६	२६०,३१५	२६१,३१६
११	२	१४	१४	१५
१५	१	६	२६४	२६५
१६	१	१६	३४२	३४३

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१८	१	१६	२०३	१२५, १६३ से १७२, २२९
१८	१	२५	१३२	१३२, १३६ से १४०
१९	२	२	३००	३०१
१९	२	३	२८२	२८३
१९	२	५	११३	१२६
१९	२	६	२७६	२७७
१९	२	८/९	१२२, १८७, १८९, ३०८, ३३४	१८८, १९०, ३०९, ३३५
१९	२	१३	३०८	३१०
१९	२	१४	२८९	२९०
१९	२	१६	२८७	२८८
२०	१	१८	त्रिपूटी	त्रिपुटी
२०	२	२	२९६	२९७
२१	२	२४	२८३	२९०
२२	१	२०	२८५	२८६
२३	१	८	९३	९२
२४	२	४	२०८	२०९
२५	१	१	निपुन	मदूल
२५	२	१५	३५०	३५१

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६	१	६	परवाळ	परवाळे
२६	२	२०	रचना का	रचना की
२६	२	२१	३०५	३०६
३०	१	११	२६०, १६२	१६२, २६१
३०	२	४	३५८	३५६
३१	१	१०	३२४	३२२
३१	१	२१	भणे भण	भणो भण
३१	१	३४	२५८	२५६
३१	२	५	३०५	३०६
३२	२	२४	२५५	२५६
३२	२	२५	२६८	२६६
३३	१	५	२६८	२६६
३३	१	२४	प्रयत्त	प्रवर्त्त
३३	२	१०	महम्माया	महम्माय
३४	१	८	मनुष्यों का	मनुष्यों को
३५	१	८	मा	मो
३५	२	१५	२५७	२५८
३६	२	१	३०३	३३०
४०	१	२५	१८७	१८८
४१	२	१३	१८७	१८८
४१	२	२५	पदापूरक	पादपूरक

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४२	१	१२	झुछ	कुछ
४३	१	८	२९१	२९२
४४	१	१०	२४७	२४८
४४	१	११	२५९	२६०
४६	१	३	२६८	२६९
४६	१	४	२६२	२६३
४६	१	५	२९७	२९८
४६	१	८	कानों में	कानों से
४६	१	९	१८९	१९०

परिशिष्ट ४

पृष्ठ	छंद	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	४	२	अंत रीख	अतरीख
६	६	११	अलवा	अलख

परिशिष्ट ५

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२१	१७	सुकृत्य और अद्‌भुत	सुकृत्य, अद्‌भुत
५६	२	येह	ये
५९	२	मेरु-कर्णि का	मेरुकर्णिका
६१	२३	भ	भी
६६	६	वृहद्कार्यं	वृहद्काय
९७	७	महारांण	महरांण
९८	१०	बुज्झव्व	बुझव्व